आचार्य सोमदेव सूरि द्वारा रचित नीतिवाक्यामृत पर वाचना

नीतिवाक्यामृत

(Part-1)

आदर्श जीवन की नीतियाँ

:: प्रवचनकर्ता ::

मुनि श्री 108 प्रणम्य सागर जी महाराज

आचार्य सोमदेव सूरि द्वारा रचित नीतिवाक्यामृत पर वाचना

नीतिवाक्यामृत
Part-1

आदर्श जीवन की नीतियाँ

प्रवचनकर्ता:
मुनि श्री 108 प्रणम्यसागर जी महाराज

प्रकाशक:
आर्हत विद्या समिति
गोटेगाँव, नरसिंहपुर (म.प्र.)

कृति : **नीतिवाक्यामृत Part-1: आदर्श जीवन की नीतियाँ**

आशीर्वाद : परम पूज्य सन्त शिरोमणि आचार्य श्री 108 विद्या सागर जी महाराज
परम पूज्य आचार्य श्री 108 समयसागर जी महाराज

मंगल देशना : अर्हं ध्यान योग प्रणेता मुनि श्री 108 प्रणम्य सागर जी महाराज

अधिकार : सर्वाधिकार सुरक्षित किसी को भी प्रकाशित करने का अधिकार है।
किताब का स्वरुप, ग्रन्थ नाम, लेखक संपादक एवं स्तर परिवर्तन न करें।
प्रकाशन से पहले लिखित अनुमति आवश्यक है।

पुण्यार्जक : प्रणम्यवाणी देवदूत

(CA Vijay Kumar Jain, Rekha Jain, Aarush Jain, Mumbai)

संस्करण : प्रथम, जुलई 2024

प्रतियाँ : 1000

आईएसबीएन : 978-81-976900-1-3

मूल्य : ₹ 200/-

प्रकाशक : आर्हत विद्या समिति , गोटेगाँव

मोबाइल: 9425837476

प्राप्ति स्थान : १. आर्हत विद्या समिति , गोटेगाँव,

मोबाइल : 9425837476 (नवीन जैन)

२. आचार्य अकलंक देव जैनविद्या शोधालय समिति 109,

शिवाजी पार्क, देवास रोड, उज्जैन (म. प्र.)

दूरभाष: 2519071

प्रस्तावना

जीवन का विकास करें, विनाश नहीं

प्रस्तुत कृति **'नीतिवाक्यामृत Part-1: आदर्श जीवन की नीतियाँ'** परम पूज्य मुनिश्री प्रणम्यसागर जी की प्रवचनात्मक प्रस्तुति है। मुनिवर प्राकृत, संस्कृत, अपभ्रंश, हिन्दी, अंग्रेजी आदि भाषाओं के प्रकाण्ड विद्वान् हैं। उनके द्वारा लिखित अनेक कृतियाँ आज प्रकाशित हैं, प्रचलित तथा लोकोपकारी हैं। इस कृति में उन्होंने आचार्य सोमदेवसूरी विरचित 'नीतिवाक्यामृत' के 32 समुद्देश में शरु के 3 समुद्देश की विशिष्ट व्याख्या की है।

नीतिवाक्यामृत ग्रंथ की रचना कुशल नीतिज्ञ **आचार्य श्री सोमदेव सूरि** ने 11 वीं शताब्दी में की थी। ग्रंथ का विस्तार **32 समुद्देश(अध्याय)** में है, जिनमें नियमावली से संबंधित वर्णन है। **नीति के अनेक अर्थ** प्रचलित हैं, **जैसे-**

- लोक व्यवहार के लिए नियत आचार,
- व्यवहार का ढंग या बर्ताव,
- सदाचार-व्यवहार के नियम,
- शासन की रक्षा एवं
- व्यवस्था के तत्व एवं सिद्धान्त आदि

अंग्रेजी में इसे **Policy**, **Morality** तथा **संस्कृत** में **'नीयते उन्नीयन्ते अर्थाअनया'** नीति कहा गया है।

इतिहास की दृष्टि से देखें तो **अनेक तरह की नीतियाँ हमें देखने को मिलती हैं।** जैसे- **कौटिल्यनीति, चाणक्यनीति, भतृहरि की नीति, नारद नीति, रामनीति, कृष्णनीति, जैन या अर्हत् नीति, शकुनी नीति, मंथरानीति, विदुरनीति आदि नीतियाँ प्रसिद्ध हैं।** इनमें से कुछ धर्म और दर्शन पर आधारित न होने के कारण दुर्नीति की कोटि की भी हैं, क्योंकि जब नीति में धर्म और दर्शन समाहित होगा तभी वह सबको सुख देने वाली, रक्षा करने वाली, कल्याणकारी तथा जीवन का विकास करने वाली साबित होती हैं, नहीं तो जीवन का विनाश संभाव्य है।

भारतीय दर्शन या भारतीय परम्परा में अनेक ऐसे मनीषी विद्वान हुए है जिन्होंने मात्र आत्मकल्याण के लिए ही नहीं, अपितु अच्छे समाज निर्माण, स्वस्थ कल्याणकारी राजनीति, धर्मनीति, अर्थनीति पर भी अपनी कलम चलायी है। जिनमें चाणक्य, कौटिल्य, विदुर, अर्हत् या जैन नीति, सोम नीति आदि का नाम प्रमुखता से लिया जाता है।

आचार्य सोमदेव की नीति 'नीतिवाक्यामृत' नाम से ही स्पष्ट है कि **इसमें वचनों रुपी**

नीतियों (नियमों) का अमृत है, जो सभी प्राणियों को सुख देने वाली, रक्षा करने वाली तथा चित्त को प्रसन्न करने वाली ऐसी प्रयोशाला है, जिसका प्रयोग कर मानव सत्य एवं समीचीन मार्ग पर चलकर समाज, राष्ट्र और स्वयं के जीवन का चरम विकास कर लेता है। संक्षेप में कहें तो **'जिन खोजा तिन पाइया, गहरे पानी पैठ'** की कहावत को चरितार्थ करते हुए आचार्यश्री सोमदेव सूरि ने ग्रंथ के गर्भ में वह सब कुछ भर दिया है जो एक श्रेष्ठ व्यक्तित्व, जीवन, राज्य, राजनीति, अर्थनीति, सामाजिक व्यवस्था, सामान्य मनुष्य के जीवन धर्म के अनिवार्य तत्त्व एवं सिद्धान्त हैं।

इस ग्रंथ की हिन्दी टीका आर्यिकाश्री 105 विजयामती माताजी द्वारा उपलब्ध है लेकिन **आचार्य श्री विद्यासागर जी** की वाटिका के महकते पुष्प **मुनि श्री 108 प्रणम्यसागर जी महाराज,** जिन्होंने मानसिक-शारीरिक रोगग्रस्त मानव समाज के लिए **अर्हं ध्यान योग के प्रणेता** बनकर अर्हं ध्यान योग के द्वारा एक नवजीवन ज्योति की अलख जगायी है तो दूसरी ओर अपनी पीयूष देशना से नैतिक पतन के तूफान में घिरी, तनाव, depression की शिकार वर्तमान पीढ़ी, राजनीति, राजनेताओं का गिरता स्तर, सामाजिक, धार्मिक, पारिवारिक विसंगतियों को **इस ग्रंथ के 32 समुद्देश में से शुरु के तीन समुद्देश (धर्म पुरुषार्थ, अर्थ पुरुषार्थ, काम पुरुषार्थ) पर मार्मिक व्याख्यान देकर जीवन को ऊर्जावान तथा सार्थक बनाने के उपाय बताये हैं।** इन तीनों पुरुषार्थों का यथावत् पालन करने से मनुष्य अभिनंदनीय, वंदनीय तथा समाज, राष्ट्र आदर्श बन सकता है।

धर्म पुरुषार्थ से **अभ्युदय** तथा **निःश्रेयस सुख** की सिद्धि होती है। अभ्युदय का अर्थ है- कर्त्तव्य, सदाचरण के पथ पर आगे बढ़कर सत्कार्यों में लगकर जीवन को उन्नतशील, सन्तुष्टिजनक बनाना। जिसके परिणाम स्वरूप जीवन मंगलमय, शान्तिपूर्ण, आपत्ति विहीन बन जाये, यह धर्म का निःश्रेयस फल है। धर्म को प्राप्त करने का उपाय है- **आत्मवत् परत्र कुषलवृति चिंतनं, शक्ति तस्त्यागतपसी च धर्माधिगमोपायाः** अर्थात् अपनी ही तरह दूसरों का कुशल, मंगल, शुभ हो। कभी किसी के जीवन में दुःख, पीड़ा, कष्ट न आये तथा अपनी शक्ति के अनुसार त्याग करना, जिससे दुस्थिति उत्पन्न न हो। इस कुशलवृति से विपरीत परिस्थितियों को भी कुशलतापूर्वक संभाला जा सकता है, शत्रु को अनुकूल बनाया जा सकता है। कुशल वृत्ति के अभाव में समाज, राष्ट्र, परिवार में वैमनस्यता, विघटन तथा आत्महत्याएँ की समस्याएँ बढ़ रही हैं, क्योंकि इसके विपरीत जो भी वृत्ति है वह सब अधर्म, अकुशल है। वर्तमान में देखा जा रहा है कि बड़े-बड़े दान देने वालो को श्रेष्ठ धर्मात्मा माना जा रहा है, जिसके कारण भी समाज में कुछ विद्रूपतायें देखने को मिल रही हैं, इसलिए शक्ति तस्त्यागतपसी की नीति को समझकर औचित्य गुण का पालन करते हुए उसे अपनाना अनिवार्य है। **न्याय नीति के साथ धन कमाना एवं काम पुरुषार्थ करना धर्मसम्मत है, पाप नहीं है।**

आवश्यकता है धर्म की इस धर्मनिरपेक्ष परिभाषा, सुविचार, नीति वाक्य जगह-जगह खासकर विद्यालयों में लिखकर अभ्यास कराने की। आज का युवा आधुनिकता के प्रभाव से इतना तर्कशील बन गया है कि उसे व्यसन, व्यसन नहीं लगते और पाप, पाप नहीं लगते अतः शिक्षा में, career शिक्षा के साथ नैतिक आचरण, धार्मिक, आध्यात्मिक, सामाजिक, राष्ट्रीय, राजनैतिक चेतना की भी उतनी ही आवश्यकता है, जितनी जीवन जीने के लिए oxygen की, क्योंकि इन सबके बिना जीवन का समग्र विकास, विकसित स्वस्थ राष्ट्र की कल्पना उस कागज के फूल की सुंदरता के समान व्यर्थ है, जो देखने में सुन्दर तो है लेकिन स्वयं महकने और दूसरों को महकाने में असमर्थ है।

मुनिश्री के समग्र चिन्तन से प्रस्फुटित इस ग्रंथ पर दी गई देशना पीयूष इसलिए है क्योंकि आज व्यक्ति जिन भोगों के अथाह सागर में मग्न होकर कर्त्तव्य-अकर्तव्य, धर्म-अधर्म, नीति-अनीति के अन्तर को भूलकर मृगमरीचिका के जिस भँवर में फँसकर प्रसन्नता, सुख, आनन्द की इच्छा कर रहा है वही उसके लिए घातक और जीवन विनाश की कगार पर ले जाकर खड़ी कर रही हैं।

प्राचीन भारतीय समाज एवं जीवन व्यवस्था **चार आश्रम (ब्रह्मचर्य, गृहस्थ, वानप्रस्थ, सन्यास)** एवं चार पुरुषार्थों पर ही अबलम्बित थी, जिनकी धज्जियाँ उड़ाकर वर्तमान पीढ़ी काम और धन पुरुषार्थ के पीछे विवेकहीन होकर नैतिक पतन के गर्त की ओर बढ़ रही है, जबकि इन दोनों पुरुषार्थों के पहले धर्म पुरुषार्थ है। जिसका मतलब यही है कि दोनों पुरुषार्थ नीति, न्याय, सदाचार, कर्तव्यशील और धर्म की सीमा में रहकर करें, तभी जीवन विकास के पायदान तय कर उन्नति के शिखर तक पहुँच सकता है।

भटकती, नैतिक पतन की कगार पर खड़ी युवा पीढ़ी, धन की होड़ में डूबी एवं काम ज्वर से पीड़ित मानसिकता यह भूल गई है कि जितने भी महापुरुष हुए हैं उन्होंने अर्थ और काम पुरुषार्थ के साथ धर्म पुरुषार्थ की साधना की है तभी वह वंदनीय, पूजनीय, आदर्शपुरुष बने हैं। इसलिए **मात्र धर्म पुरुषार्थ की उपासना ही नहीं करना है, अर्थ पुरुषार्थ, काम पुरुषार्थ भी करना है लेकिन धर्म पुरुषार्थ को छोड़कर या इसके बिना नहीं। यही जीवन का विकास है अन्यथा विनाश है।**

आचार्य श्री 108 विद्यासागर जी महाराज, **आचार्य श्री 108 समयसागर जी महाराज** एवं **मुनि श्री 108 प्रणम्यसागर जी महाराज** के चरणों में कृतज्ञता ज्ञापित करते हुए, उन्हें शत्-शत् नमन, कोटि-कोटि वन्दन निवेदित हैं।

अर्हं टीम

अनुक्रमणिका

अध्याय **पृष्ठ क्रमांक**

धर्म सम्मुदेश .... 1 से 81

अर्थ सम्मुदेश .... 82 से 98

काम सम्मुदेश .... 99 से 121

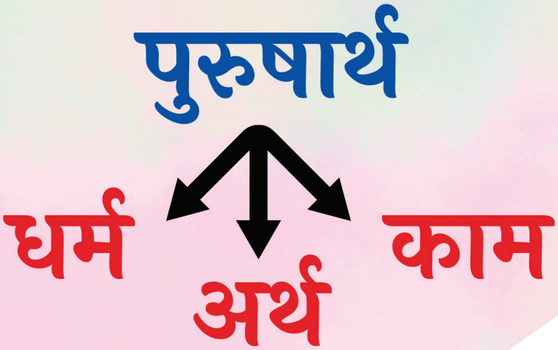

धर्म समुद्देश

आज यहाँ पर एक विशेष शिक्षा का कार्यक्रम, एक विशेष ग्रन्थ के माध्यम से आप लोगों के समक्ष प्रस्तुत किया जा रहा है। जबलपुर और आसपास के इलाकों से कुछ विशिष्ट लोग इस होली के पर्व में भी अपना समय निकालकर के परिवार सहित यहाँ पर उपस्थित हुए हैं। जो कुछ **धार्मिक और सामाजिक और राजनैतिक इन तीनों विषयों** की अगर हम किसी एक चर्चा को एक ही ग्रन्थ में समाहित हुआ देखते हैं तो ऐसे एक ग्रन्थ का नाम है- **'नीतिवाक्यामृत'।** लोग जैन आचार्यों के द्वारा बनाए हुए विशिष्ट शास्त्रों से भी कम परिचित रहते हैं। सिद्धान्त और अध्यात्म ग्रन्थों की चर्चा अधिकतर कुछ साधुओं के द्वारा भी और श्रावकों के द्वारा भी सुनी और पढ़ी जाती है। किन्तु कुछ ऐसे भी विषय होते हैं जिसके माध्यम से एक गृहस्थ का जीवन **एक सदाचार के साथ में, नीति के साथ में चला करता है, तो वह जीवन उन्नत बनता चला जाता है।** ऐसी ही कुछ परिचर्चा करने के लिए यह एक आयोजन आपके समक्ष आया है, जो विशेषकर शिक्षक लोगों की उपस्थिति के माध्यम से यहाँ पर सम्पन्न होने जा रहा है। जो आसपास के इलाकों के विशेष शिक्षक हैं, जैन धर्म को जानते भी हैं और आगे भी जिन्हें कुछ धर्म की शिक्षा देने के लिए, आगे आने वाली पीढ़ी के लिए, उन्हें कुछ और भी नया जानने की आवश्यकता होती है, इसी हेतु....

SCAN TO WATCH

यह **आचार्य सोमदेव सूरि** के द्वारा विरचित यह **नीतिवाक्यामृत** नाम का एक विशिष्ट ग्रन्थ है।

प्राचीन ग्रन्थों में राजनीति और सामाजिक शास्त्र का ज्ञान

आप लोगों को यह भी ज्ञात रहे कि भारतीय दर्शन में अनेक ऐसे मनीषी हुए हैं, जिन्होंने केवल मोक्ष के लिए ही नहीं, एक अच्छी समाज निर्माण के लिए, एक अच्छा राजनीतिक परिवेश पैदा करने के लिए भी उन्होंने कुछ लिखा है, हमें ज्ञान दिया है। ऐसे अनेक मनीषियों में जब हम **अर्थशास्त्र** की बात करते हैं तो **कौटिल्य** का नाम आता है। **कौटिल्य का अर्थशास्त्र सब लोग पढ़ा करते हैं।** इसी तरह से जब हम राजनैतिक शास्त्रों की बात करते हैं, सामाजिक शास्त्र की बात करते हैं तो उसमें अगर हम देखें तो **प्राचीन भारतीय मनीषियों के द्वारा लिखे हुए शास्त्रों में नीतिवाक्यामृत का नाम सर्वोपरि है।** यह ज्ञान हम समाज के लोगों को ही नहीं होता है, तो हम दूसरों को क्या देंगे? इसीलिए कुछ चर्चा ऐसे विषयों पर करनी है, जो विषय हमें नीति पूर्वक इस जीवन को जीने के लिए प्रेरित करें। इस ग्रन्थ का नाम है- **नीतिवाक्यामृत।**

नीति

नीति का मतलब होता है...ऐसे सत्कर्तव्य, ऐसे सदाचरण, ऐसे हमारे समीचीन अच्छे कार्य जो हमें न्याय पूर्वक जीवन को आगे बढ़ने में मदद करें, उसी को नीति कहा जाता है। नीति का मतलब? जो हमें ले चले। कहाँ पर? सत्पथ की ओर। उसी का नाम है- नीति। **'नयति' यानि** जो हमें ले जाए। इसी शब्द से यह नीति शब्द बनता है और यह जिनेन्द्र भगवान के द्वारा बताए हुए अनेक विचार और आचरण की जो पद्धति है, वह भी एक नीति बन जाती है, जिसको **जैनी नीति** कहा जाता है। **आचार्य अमृतचन्द्र जी महाराज ने इसको एक शब्द दिया...'जैनी नीति सदा जयतु'।** यह जिनेन्द्र भगवान के द्वारा बताई हुई जो विचारों की एक शैली है, इसका नाम भी जैनी नीति कहा जाता है। आज हम इसी प्रकार की कुछ नीतियों पर चर्चा करते हैं।

सोमदेव सूरि की सोम नीति

आपने चाणक्य नीति, नारद नीति, अनेक तरह की और भी भर्तृहरि की नीति ये सुनी होंगी लेकिन अब आपको सुनना है- **'सोमदेव सूरि की सोम नीति'।** यह नीतियाँ हमारे जीवन में एक अच्छे समाज के निर्माण में कितनी लाभदायक हो सकती हैं, इसका विचार शिक्षक वर्ग, प्रबुद्ध-जीवी वर्ग विशेष रूप से करते रहेंगे और यह जो गोष्ठी का एक शुभारम्भ हुआ है, आगे भी इसी तरह से और भी चिन्तन-मनन के माध्यम से जब वे अपनी प्रस्तुतियाँ करेंगे तो यह गोष्ठी का प्रवाह अपने आप और एक अच्छे रूप में बढ़ता चला जाएगा।

इस हेतु यहाँ यह **मंगलाचरण** पढ़ते हैं...

'सोमं सोमसमाकारं, सोमाभं सोमसंभवम्।
सोमदेवं मुनिं नत्वा, नीतिवाक्यामृतं ब्रुवे' ॥

इस नीतिवाक्यामृत का मंगलाचरण होने के उपरान्त सबसे पहले यहाँ पर एक सूत्र दिया जाता है और यह पूरा ग्रन्थ सूत्र वाक्यों में ही है। नीति सूत्र हैं! जो याद करने में, समझने में बड़े सरल होते हैं। ऐसे नीति सूत्रों को हम बहुत अच्छे ढंग से अपने स्मरण में रख सकते हैं।

भगवान को नमस्कार या राज्य को नमस्कार?

यहाँ इस ग्रन्थ का प्रारम्भ हो रहा है, पहला सूत्र यहाँ बनाया–

'अथ धर्मार्थकामफलाय राज्याय नमः'

यह पहला एक मंगलाचरण है। यहाँ पर नमस्कार किया गया। किसको नमस्कार करते हैं? एक राज्य के लिए नमस्कार करते हैं। सुन रहे हैं न आप लोग? किसके लिए नमस्कार कर रहे हैं? अब आप भूल जाएँ कि आप किसी भगवान के लिए नमस्कार कर रहे हैं। **जहाँ पर हमें अनेक तरह के नीति वाक्यों के माध्यम से एक अच्छे राज्य की कल्पना अगर हमें करनी है, तो उसके लिए हमें धर्म, अर्थ और काम इन तीन पुरुषार्थों के फल से ही एक अच्छा मनुष्य जीवन बन सकता है और जहाँ ऐसे मनुष्यों के द्वारा निर्मित समाज होगी, वहाँ एक अच्छी समाज बनेगी और समाज से ही एक अच्छा देश बनेगा।**

इसलिए धर्म, अर्थ और काम ये तीन पुरुषार्थ जो होते हैं, ये तीन पुरुषार्थ जब मनुष्य अच्छे ढंग से करता है, तो वह मनुष्य ही अपने आप में वन्दनीय हो जाता है। 'धर्म, अर्थ, काम फलाय राज्याय नमः' जिस राज्य में, जिस देश में, जिस धरा पर, जहाँ के मनुष्य धर्म, अर्थ और काम के फल को जानते हैं, उसके लिए मेरा नमस्कार हो। आप समझें! **नमस्कार हमेशा अच्छे आचरणों को किया जाता है, गुणों को किया जाता है।** आप सोचते हैं कि धर्म, अर्थ और काम का भी फल अगर अच्छा होगा तो वह भी हमारे लिए अपने आप में नमस्करणीय हो जाता है।

इसलिए यहाँ पर किसी भगवान को नमस्कार न करके प्रथम सूत्र में कहा...धर्म, अर्थ और काम इन तीनों को मैं आदर की दृष्टि से देखता हूँ और इन तीनों पुरुषार्थों को जो उत्पन्न करने में समर्थ है, ऐसे उस राज्य को मैं नमस्कार करता हूँ।

धर्म, अर्थ और काम - तीन समुद्देश

इसलिए यह एक राजनैतिक शास्त्र भी है और सामाजिक शास्त्र भी है, जिसे आज की भाषा में political science भी कह सकते हैं और social science या sociology भी कह सकते हैं। यहाँ पर हमें उन सब विषयों पर चर्चा करने को मिलेगा। इसमें **32 समुद्देश हैं** यानि chapters हैं लेकिन हम 32 में से दो-तीन सत्रों में तीन ही विषयों पर चर्चा मुख्य रूप से कर पाएँगे, ऐसा मुझे लगता है और उनमें सर्वप्रथम जो विषय आएँगे वे यही हैं- **धर्म, अर्थ और काम, यह तीन समुद्देश हैं।**

धर्म की व्यापक परिभाषा

धर्म की परिभाषा आगे सूत्र के माध्यम से बताई जाती है–

यतोऽभ्युदयनिःश्रेयससिद्धिः स धर्मः ॥1॥

लोग अक्सर पूछा करते हैं...धर्म किसे कहें? यहाँ किसी भी प्रकार के धर्म और सम्प्रदाय की बात नहीं है। यहाँ मानव मात्र की, प्राणी मात्र की बात है, जो यह चाहता है कि मैं धर्म सरल शब्दों में समझ सकूँ। उसके लिए यह short में छोटी सी परिभाषा है, जो हमेशा याद रखी जा सकती है। **'यतः' अर्थात् जिससे, जिन अनुष्ठानों से, जिन अच्छे कर्तव्यों से, जिन अच्छे सदाचरणों से, अभ्युदय और निःश्रेयस की सिद्धि हो जाए, उसी का नाम धर्म है।**

धर्म क्या है?

- जिन अनुष्ठानों से
- जिन अच्छे कर्तव्यों से
- जिन अच्छे सदाचरणों से

अभ्युदय और निःश्रेयस की सिद्धि हो जाए वह धर्म है

अभ्युदय क्या कहलाता है?

अभ्युदय क्या कहलाता है? अब हम इसको शास्त्रीय परिभाषाओं में न देखें। **'अभ्युदय' मतलब स्वर्ग** होता है, **'निःश्रेयस' मतलब मोक्ष** होता है। हमें ये परिभाषाएँ नहीं, हमें इसकी टीका में लिखनी है। हमें वही कहना है, जो यहाँ कहा जा रहा है। जिससे मनुष्य के लिए अभ्युदय

हो। अभ्युदय जानते हैं? एक कहना चाहिए, नया सवेरा जीवन में आया। **जैसे सूर्य का नया उदय होता है, नये प्रकाश, नई ऊर्जा के साथ में जैसे सूर्य का उदय होता है, उसे उदय कहा जाता है, अभ्युदय कहा जाता है। इसी तरह से जब मानव के जीवन में जिन कार्यों के माध्यम से उसके लिए अभ्युदय की प्राप्ति हो, उसके जीवन में एक नया सवेरा आए, वह नए-नए अच्छे कर्तव्य के पथ पर आगे बढ़े, वह नए-नए सत्कार्यों में लगने लग जाए, उसी का नाम धर्म कहा है।** जिससे आपके जीवन में अभ्युदय की प्राप्ति हो, जिससे आपका जीवन उठता हुआ चला जाए, बढ़ता हुआ चला जाए वह-वह कार्य, सभी अभ्युदय के लिए किए जाने वाले कार्य, सभी धर्म कार्य कहलाएँगे।

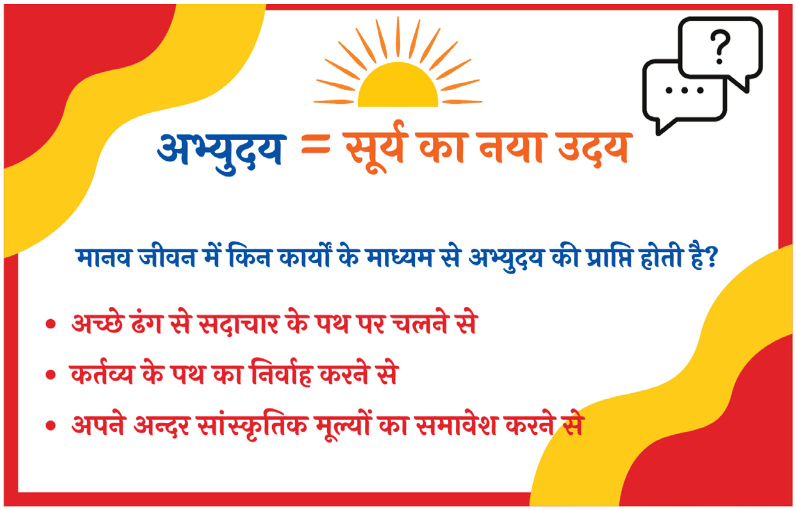

यह धर्म की व्यापक परिभाषा है:

- जिन कार्यों से आप अपने जीवन को अच्छे ढंग से सदाचार के पथ पर ले जाएँ,
- कर्तव्य के पथ का निर्वाह करते चले जाएँ,
- आपके अन्दर अपने सांस्कृतिक मूल्यों का समावेश होता चला जाए और
- आप हमेशा अपने जीवन में महसूस करें

मेरा जीवन अभ्युदय की ओर बढ़ रहा है

किसकी ओर? अभ्युदय। यह शब्द एक नया शब्द है...एक नए उजाले की ओर, एक नए प्रकाश की ओर। जैसे सूर्य का उदय प्रतिदिन होता है, उसी तरह से आपको प्रतिदिन एक नया उदय लगे। आज हमने अपने जीवन में कुछ नया पाया। नया ज्ञान, नया भाव यह हमारे जीवन का अभ्युदय कहलाता है। जैसे कहीं पर भी आप देखते हो, अगर आप कोई विशेष आयोजन करते हो तो आपके जीवन में नए भाव आते हैं।

नीति वाक्यों की परिचर्चा- एक अभ्युदय का कारण है

आज आप यहाँ होली के अवसर पर बैठे हो। आप यहाँ पर आकर के एक साथ इकट्ठे हुए हो और यहाँ पर यह नीति वाक्यों की परिचर्चा होने लग गई है, तो यह परिचर्चा भी आपके लिए

अपने आप में एक अभ्युदय का कारण है। यह आपका अपना धर्म बन गया है, यह अभ्युदय है! आपको लग रहा है हमारे जीवन में अब एक नया शुरूआत हो रही है, हम एक नया पाठ सीख रहे हैं, हम एक नई चीज सीख रहे हैं, उसी का नाम क्या है? **अभ्युदय। एक नया रंग, होली की अपेक्षा से एक नया रंग, दिवाली की अपेक्षा से एक नई रोशनी।** ये सब जीवन के अभ्युदय कहलाते हैं, इसलिए आचार्यों ने जो एक **सार्वभौमिक परिभाषा, सम्प्रदाय निरपेक्ष, धर्म निरपेक्ष,** जो परिभाषा **धर्म** की हो सकती है....**यह यही परिभाषा है।** जिससे आदमी के जीवन में अभ्युदय की प्राप्ति हो, उन्नति हो, उसकी progress उसके लिए बहुत ही सन्तुष्टिजनक हो और उसका जीवन, सब लोग कहें...भाई देखो! बहुत अच्छा आदमी बन गया। अपने नगर का था, अपने घर का था, अपने परिवार का था। इसका नाम है- अभ्युदय। लोग प्रशंसा करें तो एक तो धर्म की यह परिभाषा है, जिन कार्यों से हमारे जीवन में अभ्युदय आए।

निःश्रेयस क्या कहलाता है?

दूसरा- 'निःश्रेयस'। 'निःश्रेयस' बोलते हैं- **'श्रेयस'** अर्थात् कल्याण, मंगल, शुभ। जिन कार्यों से हमारे जीवन में ....

- मंगल होता जाए,
- कल्याण होता जाए,
- शुभ होता चला जाए,
- हमारे जीवन में कभी कोई आपत्तियाँ न आएँ और
- हमारा जीवन बहुत ही नीतिपरक, शान्तिपरक भावों से आगे बढ़ता चला जाए,

निःश्रेयस क्या कहलाता है?

जिन कार्यों से हमारे जीवन में........

- **मंगल होता जाए**
- **कल्याण होता जाए**
- **शुभ होता चला जाए**
- **कोई आपत्तियाँ न आएँ**
- **जीवन बहुत ही नीतिपरक, शान्तिपरक भावों से आगे चले**

वह निःश्रेयस के भाव ही आपके धर्म हैं। यह धर्म की व्यापकता है। ऐसे इस धर्म की परिभाषा को समझते हुए हम यहाँ आगे बढ़ रहे हैं। हमें इस सूत्र की व्याख्याओं में नहीं जाना है, हमें सूत्र के अनुसार जो अर्थ बताया गया है, हमें वही अर्थ पर चलना है।

मोक्ष पुरुषार्थ

अब जब धर्म की बात आती है, अभ्युदय होगा, निःश्रेयस होगा, उसकी प्राप्ति के भी कुछ उपाय होंगे। जैसे आप तत्त्वार्थ सूत्र पढ़ते हैं तो उसमें मोक्ष से शुरू करते हैं, मोक्ष का मार्ग शुरू करते हैं। आत्मा का हित किसमें है? तब वे सीधा मोक्ष बताते हैं। अब आज आदमी को मोक्ष जाने की जरूरत नहीं है। उसे कोई मोक्ष पर विश्वास नहीं है, तो वह पहले धर्म के मार्ग पर चलेगा। मोक्ष पुरुषार्थ चतुर्थ पुरुषार्थ है, उस चतुर्थ पुरुषार्थ की यहाँ चर्चा नहीं है।

धर्म की सिद्धि

यहाँ तीन पुरुषार्थ की चर्चा की गई...धर्म, अर्थ और काम। उन राज्यों के लिए नमस्कार हो तो सबसे पहले **धर्म की परिभाषा बताई- जिससे अभ्युदय और निःश्रेयस की सिद्धि हो।** अब वह सिद्धि अगर होती है, तो **सिद्धि बहुत कुछ अभ्यास से होती है, बहुत कुछ ज्ञान से होती है। किसी भी चीज की सिद्धियाँ अपने आप नहीं हो जाती।** धर्म की भी सिद्धि करना है, अर्थ की भी सिद्धि करना है और काम की भी सिद्धि करना है। यह सब अपने आप नहीं होता है, यह ज्ञान पूर्वक अच्छे आचरण करने से सिद्धियाँ होती हैं। धर्म की सिद्धि यानि धर्म की उपलब्धि, धर्म की प्राप्ति कैसे होगी? उसका कोई उपाय भी होगा, उसका कोई मार्ग भी होगा। जैसे तत्त्वार्थ सूत्र में **'सम्यग्दर्शनज्ञानचारित्राणि'** मोक्ष का मार्ग बताया है, ऐसे ही यहाँ पर धर्म को जानने का उपाय क्या है? **धर्म को प्राप्त करने का उपाय क्या है? वह उपाय अगले सूत्र में बताया जा रहा है।** ऐसे सूत्रों को आपको पढ़ना है।

अधर्म क्या है?

धर्म क्या है, तो उसके विपरीत ही अधर्म की भी एक परिभाषा बताई है...

अधर्मः पुनरेतद्विपरीतफल॥ 2॥

अधर्म क्या है? इसी के विपरीत फल जिससे मिले, उसका नाम अधर्म है। देखो! धर्म के फल से अभ्युदय होगा, कल्याण होगा और अधर्म के फल से अभ्युदय नहीं होगा, जीवन अस्त होता चला जाएगा। कब जीना शुरू किया और कब जीवन जो है क्लेशों में गुजर गया? कब जीवन रोगों में गुजर गया? कब जीवन मरण के पास पहुँच गया? आदमी को पता ही नहीं पड़ता। यह जीवन का अभ्युदय नहीं हुआ, यह विनाश हो गया। कल्याण नहीं हुआ...

धर्म vs अधर्म

धर्म के फल से	अधर्म के फल से
अभ्युदय होगा	अभ्युदय नहीं होगा
जीवन में कल्याण होता चला जाएगा	जीवन अस्त होता चला जाएगा।

क्या हो गया? अकल्याण। यही अधर्म का फल है।

दूसरों की कुशलता का चिन्तन करना

यह अधर्म के फल को जानते हुए, अब धर्म की प्राप्ति का उपाय आगे बताते हैं, तीसरे नम्बर के सूत्र में...

'आत्मवत् परत्र कुशलवृत्तिचिन्तनं शक्तितस्त्यागतपसी च धर्माधिगमोपायाः' ॥ 3 ॥

धर्म के अधिगम के ये उपाय बताए गए हैं...धर्म को जानने के उपाय। जिस धर्म की हमने चर्चा की है, उस धर्म को प्राप्त करने के उपाय क्या हैं? देखो! यहाँ कहते हैं...**'आत्मवत्' अर्थात् अपनी आत्मा की तरह, अपनी तरह। 'परत्र' अर्थात्** दूसरों के लिए भी। **'कुशल वृत्ति चिन्तनं'** दूसरों का भी कुशल हो। इस तरह की कुशल वृत्ति उनकी बने मतलब उनके लिए भी मंगल हो, शुभ हो, कल्याण हो, उनका भी अच्छा हो। उनके जीवन में कभी बुरा समय न आए, उनके जीवन में कभी कुछ भी दुःख न आए। इस तरह से कुशल वृत्ति का चिन्तन करना, यह धर्म की प्राप्ति का उपाय है। सबसे पहले आपको धर्म पुरुषार्थ करना है, तो धर्म पुरुषार्थ करने के लिए, धर्म की प्राप्ति करने के लिए दूसरों के लिए अच्छा चिन्तन करना, अच्छा सोचना। Good feelings, good thoughts for others. ये दूसरों के लिए जब आप अच्छा सोचेंगे, अच्छा आपके अन्दर भाव आएँगे और उसी के अनुसार आप अच्छी क्रियाएँ करेंगे, जो क्रियाएँ दूसरों के लिए हितकर हो, वे सभी क्रियाएँ धर्म कहलाएँगी। कुशल वृत्ति होना चाहिए।

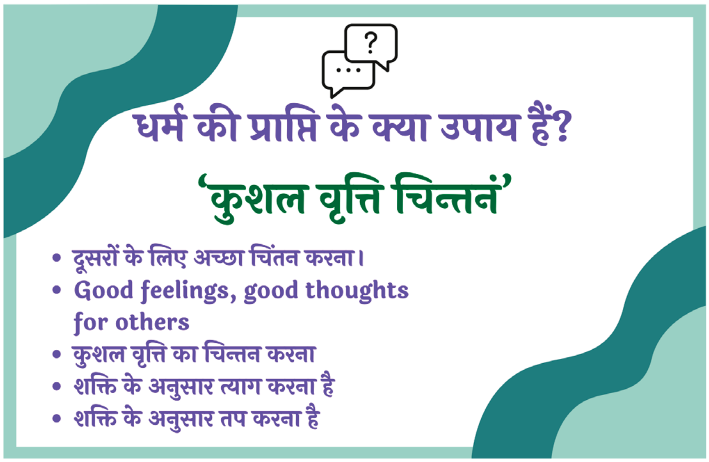

शक्ति अनुसार तप और त्याग

उस कुशल वृत्ति का चिन्तन करना, यह एक चीज बताई और दूसरी चीज...दो चीजों के समुदाय के साथ में यहाँ बताई जा रही है...**'शक्तितस्त्याग और तपसी'** यह तत्त्वार्थ सूत्र के अगर सूत्र को देखा जाए तो दर्शनविशुद्धि आदि षोडशकारण भावनाओं में यह चीज आती है, उसको

यहाँ सामान्य मनुष्यों के लिए बताया जा रहा है। **शक्ति के अनुसार त्याग करना है और शक्ति के अनुसार तप करना है, ये धर्म को प्राप्त करने के उपाय हैं।** अब आपने जैसे ही त्याग और तप का नाम सुना तो आप कहोगे, यह वही धर्म के लिए त्याग और धर्म के लिए तप आ गया। यह धर्म वाला त्याग-तप नहीं है, यह सामान्य त्याग-तप है।

बच्चों का तप-त्याग

बिना त्याग-तप के तो कोई भी व्यक्ति आगे बढ़ ही नहीं सकता। आप क्या समझते हो? हमने एक छोटा सा ग्रन्थ लिखा है...**श्रायसपथ** के नाम से, उसमें एक श्लोक दिया। **अगर बच्चा पढ़ रहा है, तो बच्चा तभी पढ़ पाएगा, जब वह त्याग और तप के साथ आगे बढ़ता है।** अब आप सोचोगे, त्याग और तप क्या है? जो हम कई चीजों से बचते हैं, बुराइयों से बचते हैं, वह हमारा त्याग हो जाता है और जो हम अपनी इच्छाओं को रोकते हैं, मन को नियमन करते हैं, वही हमारा तप हो जाता है। अगर बच्चा पढ़ रहा है, तो वह त्याग भी कर रहा है और तप भी कर रहा है, यह आपको जानना है। मम्मी का त्याग, पापा का त्याग अलग होगा। बच्चे का त्याग और तप अलग होता है। वह अगर दिन में चार घण्टे पढ़ रहा है, आठ घण्टे पढ़ रहा है, आप समझो वह तप कर रहा है, आठ घण्टे का तप है। अपनी सारी मन की इच्छाओं को केवल किताबों से जोड़ के रखा है। सारी मन की इच्छाओं को छोड़ कर के वह केवल अपने विषय से जुड़ा हुआ है। उसकी इन्द्रियाँ, उसका मन सब कुछ concentrate हो चुका है। इसी का नाम तप कहलाता है। उसने त्याग किया है...सुख का। सो नहीं रहा है, वह चाहता तो उन आठ घण्टों में TV देख सकता था। लेटा-लेटा coffee-चाय पी सकता था, सो सकता था, park में घूम सकता था। कुछ नहीं किया उसने, सब चीजों का त्याग किया है। सुन रहे हो? यह इसलिए बोल रहा हूँ ताकि आप घबराएँ नहीं।

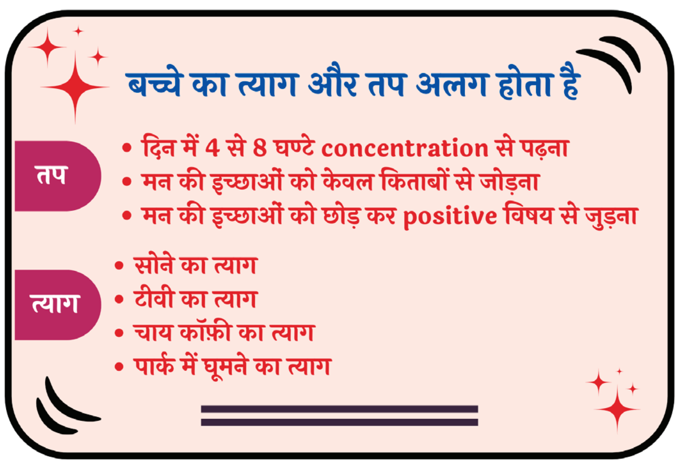

बच्चों का धर्म

त्याग और तप, शक्ति के अनुसार करने वाला जीव धर्म कर लेगा और उसके धर्म से उसके जीवन में अभ्युदय होगा, कल्याण होगा। **जब उसके अच्छे marks आते हैं, अच्छी division बनती है, तो उसके लिए जीवन में लगता है, हमारे जीवन का अभ्युदय हो गया। 100 में से 90% marks आए, 80% marks आए, ये जीवन के अभ्युदय के भाव बनते उसके चले जाते हैं।** धर्म को यहाँ पर इसी रूप में बताया जा रहा है। अपनी तरह दूसरों के लिए कुशल वृत्ति से चिन्तन करना**...पहली बात** और **दूसरा...**अपनी शक्ति के अनुसार तप और त्याग में लगना, यह धर्म को प्राप्त करने के उपाय हैं। समझ में आ रहा है न सभी को? ये धर्म को प्राप्त करने के उपाय हैं। अब इसी की detail आगे होगी।

सभी जीवों में समता भाव

आगे कहते हैं...हमारा सर्वोत्तम कर्तव्य क्या हो सकता है? वह सर्वोत्तम हमारा आचरण क्या हो सकता है? उसको बताने के लिए आगे बहुत अच्छा सूत्र आ रहा है...

'सर्वसत्वेषु हि समता सर्वाचरणानां परमं चरणम्' ॥ 4 ॥

देखो! सभी आचरणों में परम चरण, परम आचरण, जिसे बोलते हैं- **सबसे best आदमी का character. अगर best character को हमें बनाना है,** तो यह सूत्र ध्यान में रखना है। सभी चरित्रों में, सभी आचरणों में जो सबसे परम श्रेष्ठ, **supreme quality** का आचरण है, वह क्या है? **'सर्व सत्वेषु समता'** सभी सत्व मतलब जीवों में, सभी प्राणियों में, अब सभी में सभी प्राणी आ जाएँगे। जो कुछ भी आपको जीव-जन्तु छोटे-बड़े, उड़ने वाले कीड़े-मकोड़े, पशु-पक्षी जो कुछ भी हैं, सभी जीवों में समता का आचरण करना। समता यानि किन्हीं भी जीवों को, किसी भी प्रकार के द्वेष से, घृणा से मारना नहीं...समता का आचरण। किन्हीं भी जीवों में राग के कारण से वध आदि का परिणाम भी नहीं करना और द्वेष के कारण से भी वध आदि का परिणाम नहीं करना। यह **सभी जीवों में समत्व का भाव रखना, यह सबसे बड़ा धर्म है, सबसे बड़ा आचरण**

है। सबसे पहला आचरण, सबसे पहला कर्तव्य संसार के सभी जीवों के प्रति समता भाव रखना, संसार के सभी जीवों के प्रति। सुन रहे हो कि नहीं? हिन्दुस्तानी ही नहीं है संसार में, पाकिस्तान भी है। भारत ही नहीं है, चीन भी है। India ही नहीं है, Austrailia और Japan भी हैं। जहाँ कहीं पर भी जीव हैं, उन सब जीवों के प्रति अपने मन के अन्दर सबसे पहले क्या भाव आना चाहिए? सबको समभावों से देखो। जब हम समभावों से देखेंगे तो हमारा किसी भी राष्ट्र के जीवों के प्रति विरोध का भाव नहीं आएगा। **समता भाव! सबसे पहले समता भाव लाओ।** उसके बाद में दूसरे की बात बाद में करेंगे। **समता भाव आने से हम सब जीवों को जीव की तरह देखेंगे।**

उत्तम आचरण

जो हमारी धरती पर जीव-जन्तु हमें नजर आते हैं, हम उनको भी समभावों से, उनको हम देखेंगे-जानेंगे। तब यही हमारे भीतर का सबसे विशिष्ट, सबसे उत्तम आचरण कहलाएगा। सभी आचरणों में सबसे श्रेष्ठ आचरण क्या है? **सभी जीवों में समभाव रखना यानि किसी भी तरह से मन से, वचन से, काय से उन जीवों का घात नहीं करना।** सब जीवों की रक्षा करना ही यहाँ पर सब जीवों के प्रति समता भाव कहा गया है, एक तरह से यह है। सभी जीवों के प्रति समता भाव की बात जैसे जैन आचार्य करते हैं, अन्य लोगों ने भी एक नारद की नीतियाँ चलती हैं। कौन की नीतियाँ? नारद नीतियाँ। उनमें भी यह बात लिखी हुई है कि शिष्ट पुरुषों को जूँ, खटमल, डाँस, मच्छर आदि जीवों की भी अपने बच्चों की तरह रक्षा करनी चाहिए। सुन रहे हो? जिन जीवों को हम कोई तवज्जो नहीं देते हैं, मार देते हैं या यूँ ही छोड़ देते हैं, फेंक देते हैं, महिलाएँ अपने बाल बनाती हैं, बनाने का मतलब कंघी लगाती हैं और उसमें जब यह जूँ वगैरह निकल आते हैं तो उनको भी रक्षा करने के भाव से उनको अलग रखना। कैसी रक्षा करना? जैसे हम अपने बच्चे की रक्षा करते हैं, ऐसे रक्षा करने का भाव जीवों के प्रति आएगा तब यह समता का भाव सब जीवों के प्रति कहलाएगा। समझ आ रहा है? नारद नीति में यह लिखा हुआ है... **'यूकामत्कुणदंशान्यपि पाल्यानि पुत्रवत्'** यानि पुत्र की तरह इनका भी पालन करना चाहिए। यूक! यूक यानि वही जूँ। **'मत्कुण'** यानि ये **खटमल** होते हैं, **'दंश'** यानि ये **मच्छर**, 'डाँस' वगैरह होते हैं, इन सब का भी पुत्र की तरह पालन करें। अब समझो आप! किन्हीं भी जीवों को मारने का आपको कोई हक नहीं है। ये नीतियाँ अगर समाज में प्रचलित होंगी तो हमें क्यों कहना पड़ेगा भाई! अहिंसा ही परम धर्म है, दया ही परम धर्म है। ये नीतियाँ हैं, इसके बिना आपके जीवन में अभ्युदय नहीं हो सकता और जो लोग इस तरह से इन नीतियों को दुर्नीति में बदल कर के अनेक तरह के जीवों को मारने का उपाय करते हैं, वे लोग धर्म के विपरीत फल को प्राप्त करते हैं। उनके जीवन में कभी अभ्युदय नहीं होता। उनका कभी कल्याण नहीं हो सकता।

जीव रक्षा कैसे हो?

साफ-सफाई के निमित्त से जो भी चूहे हैं, मच्छर हैं, ये सब साफ-सफाई आप करेंगे, होगी लेकिन उनके निमित्त से उन जीवों को मारा नहीं जाता है। ऐसा नहीं है कि उसके बिना काम नहीं होता है। उन जीवों को अलग रख कर के जैसे आपने सर से जूँ निकाली तो आपने अपने सिर की सफाई तो कर ली। जूँ निकालना और उन जीवों को बचाना, ये दोनों अलग-अलग काम हैं। डालेंगे कहाँ? ऐसे स्थान की खोज करो, जहाँ पर वे अपना जीवन जीते रहें। बहुत से मिट्टी आदि स्थान होते हैं, कोई ऐसे सूखे स्थान होते हैं जहाँ पर वे अपनी जगह बना लेंगे, अपना जीवन जी लेंगे। यह आपको अपने लिए सुरक्षा का स्थान देखना है। **मारना नहीं है, उनको पालना है।** अब आपके लिए यह भाव नहीं आना चाहिए...अरे! कितने सारे जीव! अब इनको कहाँ बचाएँ? जो हमारे लिए नुकसान पहुँचाएँ या जो हमारे लिए ऐसा लगे कि हमको इनकी जरूरत नहीं है, तो वह सब हम उनके प्रति घृणा भाव रखने लग जाते हैं और घृणा से ही हमारे अन्दर द्वेष आता है। द्वेष से ही हम उनके मरने की चिन्ता नहीं करते हैं। अतः मरने की चिन्ता करो, यह मर नहीं पाएँ...इसका नाम है- सभी जीवों में समता।

संकल्पी हिंसा

चूहों के लिए दवाई रखना यह संकल्पी हिंसा में ही है क्योंकि आपको इस तरह से दवाई आदि रखकर के चूहे अगर मर जाते हैं तो वह दोष आपको लगता है, वह आपके लिए जीव रक्षा नहीं हुई। कहीं भी चूहे आदि ज्यादा होते हैं, आप यह देखें कि उन चूहों का हम कहीं भी इस तरह से निष्कासन कर दें कि वे सुरक्षित स्थान तक पहुँच जाएँ और जिन चीजों के कारण से वे चूहे आदि उत्पन्न होते हैं, आप उन चीजों की सुरक्षा की व्यवस्था बनाएँ। मान लो! चूहे घुसने के वे अपने स्थान वहाँ बने हुए हैं, उन बिलों को, उन स्थानों को बन्द करो न, जिन सन्धों से वे चूहे घुस जाते हैं। उन अनाजों को इस तरह से रखा जाए कि वहाँ पर चूहों का प्रवेश न किया जाए। उन वस्तुओं को इस तरह से रखा जाए कि वे चूहे उन जगहों में ज्यादा घुसते हैं, जहाँ बोरे रखे हैं और बोरों के बीच में जो जगह है, वे उसमें घुस जाते हैं। हम इस तरह के रक्षा के भावों से उन जीवों की रक्षा करेंगे, यही हमारे जीवन का धर्म होगा। कोई भी तरह की चीजें हैं, इन्हीं परिभाषाओं में सब आ जाता है। बस! जीव मरना नहीं...जीवों को मरने का भाव नहीं करना। हमें घर की भी सफाई करना, गलियों की भी साफ-सफाई रखना, सबकी साफ-सफाई रखना लेकिन पहले अपने मन में भाव आए कि हमें जीवों की रक्षा के साथ में इनको बचा करके सब कार्य करना। पहले यह भाव कर लोगे तो उस भाव से सब कुछ हो जाएगा, भाव पहले मुख्य है। आचरण हमारा भाव के माध्यम से बनेगा और वह आचरण आगे हमारे लिए काम में आएगा। अब आगे कहते हैं...

न खलु भूतद्रु हां कापि क्रिया प्रसूते श्रेयांसि॥ 5॥

देखो! यह नीतिपरक वाक्य है। **'भूतद्रु हां' भूत** अर्थात् होता है- सभी प्राणी, सभी सामान्य जीव। इनके प्रति जो द्रोह रखने वाले हैं, इनके लिए जो हिंसा करने वाले हैं, इनकी कोई भी क्रिया **'श्रेयांसि' अर्थात्** कल्याण के लिए नहीं है, इनकी कोई भी क्रिया आत्म-उत्थान के लिए नहीं है। इनकी कोई भी क्रिया से इनको कोई पुण्य का बन्ध होने वाला नहीं है, अगर धर्म की दृष्टि से देखा जाए। मतलब? धर्म की इन परिभाषाओं में आपका वह धर्म भी शामिल हो रहा है और कर्तव्य भी शामिल हो रहा है। जो लोग जीवों के प्रति द्रोह रखते हैं, घृणा रखते हैं, उनकी कोई भी पुण्य की क्रिया होगी, धर्म की क्रिया होगी, उससे उनका कोई फायदा मिलने वाला उन्हें नहीं है। उसके कल्याण के लिए वह क्रिया नहीं होगी। यह जीवों की रक्षा का एक बहुत बड़ा भाव पहले होना जरूरी है।

चित्त में पवित्रता कैसे?

फिर आगे कहते हैं...दयालु पुरुष कैसे प्रवृत्ति करते हैं? दयालु पुरुषों का क्या कर्तव्य होता है?

परत्राजिघांसुमनसां व्रतरिक्तमपि चित्तं स्वर्गाय जायते॥ 6॥

क्या कहते हैं? दूसरे प्राणियों में **'जिघांसु' अर्थात् मारने की इच्छा नहीं करने वाले,** मन वाले जो लोग हैं, वे अगर **व्रत से रहित भी** हैं, **'व्रत रिक्तमपि' हम दूसरे प्राणियों को मारते नहीं हैं, उन दूसरे प्राणियों की हिंसा का भाव नहीं रखते लेकिन हमारा कोई व्रत नहीं है तो भी** आचार्य कहते हैं...**व्रत रिक्तमपि** आपके चित्त में दूसरे प्राणियों को मारने का भाव नहीं है, उनके प्रति दया का भाव है, तो आपके चित्त में इतनी पवित्रता रहेगी कि आपके लिए वह चित्त हमेशा स्वर्ग के समान आनन्द देने वाला होगा। **'स्वर्गाय जायते'** मतलब यह नहीं कि स्वर्ग में उत्पत्ति होती है, आपके चित्त में स्वर्ग जैसा आनन्द रहेगा।

चित्त में प्रसन्नता का उपाय

आप देखना! कई लोग ऐसे मिलते हैं, जीवन में धर्म तो करते हैं, धर्म के नाम पर मतलब सब कुछ मन्दिर आदि के अनुष्ठान करना, सब कुछ करना लेकिन चित्त में प्रसन्नता नहीं रहती। क्यों नहीं रहती? क्योंकि जीवों के प्रति कभी उन्होंने दया का भाव सीखा ही नहीं। चिड़चिड़ापन रहना, मन में अप्रसन्नता बनी रहना और बुढ़ापे में ये चीजें और ज्यादा दिक्कत कर जाती हैं। जब शरीर

में अस्वस्थता बढ़ जाती है, घर परिवार के लोग साथ नहीं रहते हैं, शरीर असमर्थ हो जाता है, तब मन के अन्दर किया हुआ किसी भी प्रकार का धर्म आपको सुख-शान्ति नहीं देता। आपके चित्त में स्वर्ग जैसा आनन्द कब आएगा? आप जीवों की रक्षा करने के भाव में ज्यादा रहो। सुन रहे हो? **मन्दिर में पूजा एक बार हो या न हो लेकिन जीवों की रक्षा करने का भाव हर समय पर आपके लिए होना चाहिए। यह सबसे बड़ा धर्म है और लोग पूजा करने के बाद में भी धर्म के भाव में नहीं आते हैं।** जो सामने आता है, उसे कुचलते चले जाते हैं। जो जीव सामने दिखते हैं, उनकी कोई रक्षा का भाव नहीं करते हैं...मन्दिर में पूजा करके आए हैं। यहाँ तक भी देखने को मिलता है कि मन्दिर की पूजा की सामग्रियों में, चावल आदि में भी जो जीव रहते हैं, उनको भी अलग निकाल कर के उनकी रक्षा करने का भाव नहीं आता है। वे भी जो है, वहीं पड़े रहते हैं, वहीं गीले होते रहते हैं, उसी में पानी मिलता रहता है, उसी में जो है अपने हाथ डाल कर के, चला जाएगा कहीं न कहीं निकल जाएगा, कोई रक्षा का भाव नहीं आता है। आपकी उस मन्दिर की द्रव्य से जो आपने चढ़ाई, आपके अन्दर कौन सा धर्म का भाव आ गया? यह आप समझ सकते हो। सबसे बड़ा धर्म क्या है? जीव रक्षा सबसे बड़ा धर्म है। **जिसके हृदय में जीव रक्षा का भाव है, कोई व्रत नहीं है, कोई बात नहीं लेकिन आपके चित्त में कभी दुर्भाव नहीं आएगा। चित्त कभी निराश नहीं होगा। चित्त में किसी भी प्रकार की दरिद्रता के भाव नहीं आएँगे। आपका चित्त हमेशा उल्लसित, प्रसन्न रहेगा। स्वर्ग के समान आपके चित्त में आनन्द रहेगा।** यह समाज के अन्दर अगर हर व्यक्ति के अन्दर भाव आएँगे तो धर्म भीतर से जो धर्म कहा जाता है।

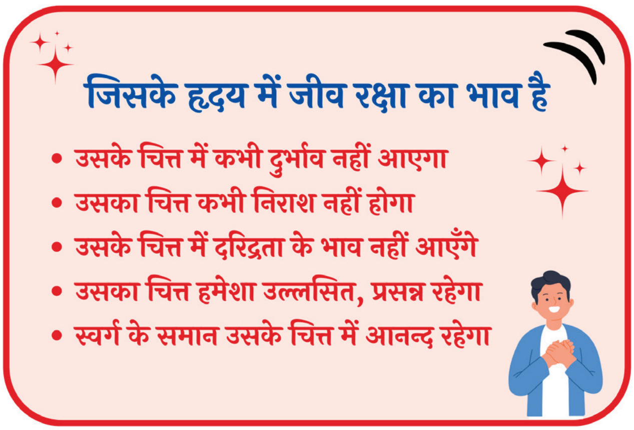

नई पीढ़ियों के लिए धर्म

आज के पढ़े-लिखे बच्चे भी क्या कहते हैं? अच्छे भाव करने का नाम धर्म है। अब उन्हें यह तो सिखाओ कि अच्छे भाव का मतलब क्या होता है? यह तो कहते हैं...अच्छे भाव करने का नाम धर्म है। **उन्हें जब यह धर्म की परिभाषा इस रुप में सुनने को मिलेगी तो उन्हें जो एक**

सम्प्रदाय का, धर्म का जो व्यामोह उनके अन्दर ऐसा लगता है कि मन्दिर जाना तो अपने-अपने धर्म के अनुसार होता है, इसमें कौन सा धर्म होता है? वे सही कहते हैं। उन्हें आगे बढ़ने के लिए एक थोड़ा सा ज्ञान इस तरह का और मिलना चाहिए, सब जीवों की रक्षा, सब जीवों के प्रति दया का भाव करना, यह सबसे बड़ा धर्म है और उस धर्म में भी वे पीछे रह जाते हैं। आप लोग चिल्लाते रहते हैं...बेटा! मन्दिर जा, मन्दिर जा, मन्दिर जा। वह न मन्दिर जाता है और न यह दया धर्म सीख पाता है क्योंकि मन्दिर के नाम पर उसे आपसे नफरत होने लग जाती है और वह दया धर्म सीख नहीं पाता है क्योंकि उसे इस तरह के कोई भी उपदेश आदि सुनने का कोई उसे अवसर मिल नहीं पाता है। तब वह दोनों तरह से चला जाता है। आज की नई पीढ़ियों को इस तरह का धर्म सिखाना चाहिए जो व्यापक हो। समझ आ रहा है?

धर्म की धर्मनिरपेक्ष परिभाषा

धर्मनिरपेक्ष राज्य में आज भारतीय संविधान के अनुसार भी आप इस शास्त्र को कहीं भी खोल करके बैठ जाओगे, किन्हीं भी सम्प्रदाय के लोगों के बीच में खोल करके बैठ जाओगे, कोई भी आपका विरोध नहीं करेगा, यह धर्म की वह धर्मनिरपेक्ष परिभाषा है। लोग कहते हैं न... धर्मनिरपेक्ष राज? धर्मनिरपेक्ष का मतलब यह नहीं कि आप कुछ भी कर रहे हो। आपके जो कर्तव्य होंगे, आपके मन, वचन, काय की जो क्रियाएँ होंगी, वे सब कुशल वृत्ति के साथ चलना चाहिए... **'कुशल वृत्ति चिंतनम्'** और इस तरह से कोई संकल्प नहीं भी हो, आपके मन में कोई व्रत अहिंसा आदि के अणुव्रत आदि का तो भी आचार्य कहते हैं- आपके अन्दर चित्त हमेशा स्वर्ग की जो भावना के अनुसार, स्वर्ग के लिए जिस पुण्य की आवश्यकता है, वह पुण्य आपको इस भाव से मिल जाएगा... **'स्वर्गाय जायते व्रतरिक्तमपि चित्तं'।** अब आगे बात बढ़ाते हैं। यह कुशल वृत्ति के चिन्तन की बात हुई। ये सारे सूत्र कितने हो गए? छह सूत्र तक यह कुशल वृत्ति का चिन्तन बताया गया। इसमें जहाँ से शुरू हुआ था तीसरे सूत्र में दो चीजें बताई थी...कुशल वृत्ति और शक्ति अनुसार त्याग-तप तो चौथे, पाँचवें और छठवें, इन तीन सूत्रों में कुशल वृत्ति बताई गई। इसका नाम है- कुशल वृत्ति।

शक्ति के अनुसार ही त्याग करना

अब आगे कहते हैं...शक्ति के अनुसार त्याग क्या कहलाता है?

स खलु त्यागो देशत्यागाय यस्मिन् कृते भवत्यात्मनो दौ:स्थित्यम्॥ 7॥

जो जैन स्कूल हैं, कम से कम उन स्कूलों की दीवारों पर तो ऐसे नीति वाक्य लिखे होने चाहिए। नहीं समझ में आया? हम वही दो-चार चीजें हमेशा लिखते रहते हैं, पढ़ते रहते हैं...

'आत्मवत् प्रतिकूलानि परेषां न समाचरेत्' बस! इन्हीं वाक्यों को पढ़ते रहते हैं और भी तो कुछ है। **'आत्मवत् परत्र कुशलवृत्तिचिन्तनं शक्तितस्त्यागतपसी च धर्माधिगमोपाया:'** कम से कम ये जैन स्कूलों में तो लिखे जाएँ और अगर आपकी अजैनों तक पहुँच है तो उन स्कूलों में भी लिखने में कोई आपत्तियाँ नहीं हैं क्योंकि इसमें कोई भी परिभाषा किसी भी धर्म विशेष के लिए नहीं है। सामान्य मनुष्य के लिए, मानव जाति के लिए है। देखो! त्याग करने को जब मन करे तो त्याग करने में सब लोग उत्साहित हो जाते हैं क्योंकि धर्म करना त्याग धर्म है, तो हम धर्म खूब करें। आचार्य कहते हैं- खूब कुछ मत करो, सब balance के साथ करो। **'अति सर्वत्र वर्जयेत्'** अति हर चीज की बुरी है। **धर्म की भी अति नहीं करना। सुन रहे हो? क्या बोल रहा हूँ मैं? धर्मात्मा होकर भी मैं क्या बोल रहा हूँ? अति धर्म की भी बुरी है। अति हर चीज की बुरी होती है।** आपको यह नीति वाक्य पढ़ कर के समझ में आएगा कि त्याग और तप भी अति के साथ नहीं होना चाहिए। यहाँ कह रहे हैं...ज्यादा त्याग कर दिया तो देश का ही त्याग करना पड़ जाएगा। **'स खलु त्यागो देशत्यागाय'** बहुत बड़े दाता बन गए, बहुत ज्यादा दान कर दिया और इतना दान कर दिया कि जो अपने कुटुम्बी-जन थे, परिवार के जन थे, उनके ही पालन-पोषण में लाले पड़ने लग गए। तब क्या करना पड़ेगा? घर छोड़ कर जाना पड़ेगा, शहर छोड़ कर जाना पड़ेगा, देश छोड़ कर जाना पड़ेगा। कहीं और जा कर के व्यापार करने के लिए लोग देश छोड़ के जाते थे। किस कारण से भैया? अब पैसा था, वह तो हमने सारा दान कर दिया। बचा तो कुछ है ही नहीं। अब क्या करें? दूसरे राज्य में जाकर के, दूसरे देश में जाकर के व्यापार करने जाते थे। इसलिए यहाँ पर लिखा है...वह त्याग देश के त्याग करने के लिए हो जाता है, जिसके करने पर **'यस्मिन् कृते भवत्यात्मनो दौ:स्थित्यम्'** जिससे आत्मा में दु:स्थिति बन जाए, बुरी स्थिति बन जाए, जिससे अपनी हालत ही बिगड़ जाए या यूँ कहें जिससे आत्मा को दरिद्रता की प्राप्ति हो जाए, वह त्याग देश त्याग के लिए कहा जाता है। क्या समझ में आया? इतना भी त्याग नहीं करना कि कुटुम्बी जनों के पालन भी आप न कर पाएँ।

बड़ी-बड़ी बोलियाँ लेने का नाम धर्म नहीं है

सुन रहे हो? दान देने वालों, बड़ी-बड़ी बोलियाँ बोलने वालों! समाज में आज एक होड़ लगी हुई है, trend निकल पड़ा है। समझ आ रहा है? मतलब आज समाज के अन्दर बड़ी-बड़ी बोलियाँ बोलने का नाम ही बस! एक धर्म रह गया है। ऐसी समाज की स्थितियाँ बिगड़ती जा रही हैं। अगर हम इनको सम्भालेंगे नहीं और इन पर अगर हम स्वस्थ चर्चा नहीं करेंगे तो लोगों की मानसिकताएँ इसी रूप में ढलती जाएँगी। आज बच्चे पढ़-लिख कर के इसीलिए उत्साहित हो रहे हैं कि हम भी ऐसे ही करोड़ों की बोलियाँ बोलेंगे। महाराज आशीर्वाद दे दो, हम इतना धन कमा लें। धन कमा लें! ऐसा आशीर्वाद दे दो। हमें भी करोड़ों की बोलियाँ बोलना है, हमें भी सौधर्म इन्द्र बनना है। बच्चे जैसा देखते हैं वैसा ही उनके मन पर प्रभाव पड़ता है। अब वह प्रभाव

सही है कि गलत है? अब अगर उन्हें करोड़ कमाने की आदत पड़ जाएगी और वही उनका उद्देश्य बन जाएगा तो आप सोचो कि वह करोड़ कमाने के लिए उन्हें किस तरह से सोचना पड़ेगा? **अच्छे कर्तव्यों के साथ में आगे बढ़ते हुए वे करोड़पति बन पाएँगे या वे यद्वा-तद्वा कुछ भी करेंगे तब करोड़पति बन पाएँगे?** बच्चों के लिए एक मार्ग से भ्रष्ट करने का यह भी एक बहुत बड़ा तरीका बन गया है। जो एक धर्म के अन्दर शालीनता होनी चाहिए, एक सदाचार और एक अच्छे प्रभाव होने चाहिए, वे प्रभाव भी थोड़े से इस तरह के कार्यों से विचलित होने लगे हैं। आप लोग सहमत हैं कि नहीं इस बात से? मतलब हमने ऐसे-ऐसे भी लोगों को देखा है जिन्होंने बड़ी-बड़ी बोलियाँ ले ली हैं और सट्टे का व्यापार करते थे। यहाँ की बात नहीं कर रहा हूँ मैं... दुनिया में घूमता हूँ, नाम किसी का नहीं ले रहा हूँ। सट्टे का व्यापार करते और सट्टे के व्यापार में उन्हें लगता था कि यह हमारा इस तरह का नम्बर लग जाएगा तो हमें इतने का मुनाफा हो जाएगा। हम यह दान में कर देंगे। उन्होंने बोलियाँ ले ली और वह सट्टा आज तक उनका सफल नहीं हो पाया। समझ आ रहा है? ऐसा हो जाता है। जिससे हमारी दु:स्थिति बन जाए, हम गरीब हो जाएँ, दरिद्री हो जाएँ, इस तरह का त्याग कभी नहीं करना चाहिए। इसलिए **'शक्ति तस्त्याग'** का मतलब यह समझना चाहिए जो हमें बड़े-बड़े धर्म ग्रन्थों में समझने को नहीं मिलता, वह हमें यहाँ नीतिवाक्यामृत में समझाया जा रहा है। यह हमें सबसे पहले पढ़ना चाहिए क्योंकि पहले धर्म पुरुषार्थ करना है, मोक्ष पुरुषार्थ बाद में होता है तो धर्म पुरुषार्थ करने के लिए हमें धर्म की नीति जानना है। इसलिए यहाँ कह रहे हैं कि वह इतने दु:खी न हो जाएँ कि उन्हें अपने उस त्याग से, दान से उन्हें देश का त्याग करना पड़ जाए।

उधार देने व माँगने की नीति

स खल्वर्थी परिपन्थी य: परस्य दौ:स्थित्यं जानन्नप्यभिलषत्यर्थम्॥ 8॥

देखो! अब आगे कहते हैं- वह अर्थी, अर्थी मतलब? जिसकी अर्थी निकल गई, उसको अर्थी नहीं कहते हैं। **अर्थ मतलब होता है- धन! धन को चाहने वाला अर्थी कहलाता है** और वह **परिपन्थी** मतलब शत्रु बन जाता है जो दूसरों के **'दौ:स्थित्यं'** को अर्थात् जिसके घर में गरीबी है, दरिद्रता है, यह जानता है फिर भी उससे वह धन प्राप्त करने की इच्छा करे। वह याचक, वह व्यक्ति, उस व्यक्ति के लिए शत्रु समझना चाहिए। क्या समझ में आया? यानि जिसके पास में धन नहीं है और उससे धन माँगा जाए तो माँगने वाला जो धन जिससे माँग रहा है, उसके लिए वह याचक शत्रु हो गया। इसका क्या मतलब हुआ? मतलब वह आपको शत्रुता की दृष्टि से देखेगा कि यह मुझसे धन माँगने आया है क्योंकि उसके पास में धन है नहीं। किसी को उधार दिया है, फिर तो वापस माँगना पड़ता है। उधार भी उतना ही दिया जाता है, **जिसकी उधारी**

चुकाने के लायक हो, वापस करने की सामर्थ्य हो। अगर मान लो आपको यह भी पता होना चाहिए कि आप जिसको उधार दे रहे हो, उसकी monthly income कितनी है? दस हजार रुपए की income है और वह अगर आपसे पचास हजार रुपए उधार माँगे तो आपको सोच करके देना है। दस हजार के अन्दर माँगे तो आपको दे देना है क्योंकि वह चुका पाएगा। अगर उसके लिए ज्यादा उसने उधार ले लिया है, तो फिर आप उससे माँगने जाओगे, वह आपको शत्रु की तरह देखेगा...यह नीति है। नियत खराब भी होगी और वह सोचेगा इससे पिण्ड कैसे छूटे? तब वह शत्रु की तरह कभी-कभी behave भी करने लग जाता है। आपको देखेगा नहीं, आपकी ringtone, ring पहुँचेगी उसके पास, mobile उठाएगा नहीं। समझ आ रहा है? जब आप उसके घर तक ही पहुँच जाओगे तो भी वह कहेगा कि बोल देना, घर पर है नहीं है, कहीं बाहर गया है। ज्यादा पीछे पड़ जाओगे तो लोग एक दूसरे का murder भी कर देते हैं। नहीं देखते हो? होता है न? यह जो होता है, यह इन्हीं नीतियों को नहीं जानने के कारण से होता है। देखो! हर चीज यहाँ बताई जा रही है। दूसरों की मदद भी करो, मदद करते हुए पहले अपनी स्थिति भी देखो। **'शक्ति तस्त्याग'** बता दिया न? मदद करने वाले की भी स्थिति देखो, **सब चीज विचार पूर्वक**...तब जो है नीतिपरक ढंग से आपका जीवन सही चलेगा।

कर्जदार के मन में आपके प्रति शत्रुता का भाव न हो

उधार दिया, सामने वाले की स्थिति खराब हो गई तो उसमें भी आपको यह देखना है कि सामने वाले का भाव हमारे प्रति शत्रुता का न बन जाए। हम उसके लिए थोड़ा सा सहयोग के भाव में बने रहें। अब नीति क्या कहती है उसमें? हम उसे शत्रु की तरह सामने न आएँ, हम उसे मित्र की तरह सामने आएँ। भैया! कोई बात नहीं, तुम्हारे दिन थोड़े से खराब हो गए हैं, तुम्हारी स्थितियाँ बिगड़ गई हैं, तुम अपना पैसा दे देना लेकिन मुझे शत्रु मत समझना। मैं तुम्हारे लिए अभी भी सहायक ही हूँ, ऐसा बोलना उससे। तब उसका विश्वास आप पर बना रहेगा तो वह कम से कम आपको देख कर के चकराएगा तो नहीं, आपसे मिलने-जुलने में विचलित तो नहीं होगा। वह आपसे मिलने की इच्छा करता रहेगा तो आप उससे धीरे-धीरे अपना पैसा निकलवा लोगे। समझ आ रहा है न? यह भी तो एक अच्छा तरीका है न कि इतना तो अपना सम्बन्ध उससे बना रहे कि हम call करें और वह उठा ले। हमारे सामने दिखे तो भाई कोई बात नहीं, चाय-पानी की पूछ ले, इतना तो बना रहे। वह हमें शत्रु की तरह न देखने लग जाए तो हम उसे अपने भावों से, अपने विचारों से, अपनी बातों से उसे इतना मित्रवत सहलाते रहें। भैया! जब तेरी स्थिति बन जाए, दे देना लेकिन दे देना। और भी बता देना तुझे कुछ जरूरत हो तो, हम तेरी और सहायता करने वाले हैं, हम और सहायता कर देंगे, इतना और बोल देना। फिर क्या होगा? उसके अन्दर शत्रुता का भाव नहीं आएगा। माँगने आए तो तुम्हारी कुशलता है कि हम अब इसे ज्यादा नहीं देंगे। देखो! यह! **आप यह मत सोचना, असत्य बोला जा रहा है, ये नीतियाँ हैं।**

आप उसे अपना बनाए रखेंगे तो आप पैसा निकाल पाएँगे, उधारी निकाल पाएँगे और अगर आप उससे, इस तरह से अपने आप से दूर कर देंगे तो वह आपकी शक्ल देखना पसन्द नहीं करेगा, पैसा देना तो दूर की बात है तो यह तरीका होता है। आप उसे अच्छे वाक्यों से उसको सहलाते रहें, उससे अपनी मित्रता बनाए रखें। फिर भी, वह माँगने की कोशिश करे तो आप उसे अपनी तरह से बहला दें, कुछ भी कर दें लेकिन उसे भी लगता रहे कि हाँ भाई! यह हमें कभी न कभी सहायता देगा। यह हमारे लिए अच्छा व्यक्ति है लेकिन फंसे नहीं ज्यादा। यह आपकी अपनी कुशलता होनी चाहिए।

मैं जैन हूँ, छना पानी पीता हूँ - किसी का खून नहीं पीता

कुशल वृत्ति का चिन्तन तो करना ही है हर चीज के साथ में, भैया! इसकी कुशलता बनी रहे। यह बहुत अच्छा सूत्र है...**'कुशल वृत्ति चिंतनम्'**। कुशलता इसकी बनी रहे, इसके लिए कुशल मंगल हो। देखो! **ऐसी एक घटना घटी थी। श्रीमद् रायचंद्र** का नाम सुना होगा आपने। समझ आ रहा है न? बड़े वह अच्छे व्यापारी थे। सोने-चाँदी की व्यापारी थे। हीरा के व्यापारी थे और उन्होंने भी एक बार ऐसे ही किन्हीं लोगों को, जैन लोगों को उन्होंने ऐसे ही उधारी दे दी। गिरवी वह रख लेते हैं। बाद में उसकी जो है market rate जो है, वह down हो गई। अब जो है वह, इतना पैसा उसके पास में जो है मतलब उधारी में आ गया कि वह, जिस व्यक्ति ने उनके लिए कुछ रखा था, वह सब तो उनके पास रह ही गया और वह व्यक्ति परेशानी में पड़ गया कि अब हम इनका पैसा चुकाएँगे कैसे? सुन रहे हो? श्रीमद् रायचन्द्र जी की बात बता रहा हूँ आपको। अच्छे व्यक्तियों के उदाहरण भी अपने को ध्यान में रखना है। अब वह व्यक्ति परेशान रहने लगा। उनके आने पर वह जब उससे पैसा माँगने के लिए गए, अपनी उधारी माँगने के लिए गए तो वह उनसे डरने लगा। तब उन रायचन्द्र जी ने कहा...भैया! जिस पर agreement हुआ था, वह कागज तो दिखाओ। **उन्होंने वह कागज लिया और लेकर के उसी के सामने वह कागज फाड़ दिया और एक बात बोली...मैं जैन हूँ, जैनी हूँ। मैं छना पानी पीता हूँ, किसी का खून नहीं पीता हूँ।** यह भी तो हम सामने वाले की स्थिति को देख कर के निर्णय ले सकते हैं न? अगर हम समर्थ हैं, लाखों का, करोड़ों का दान मन्दिरों के लिए करते हैं और किसी के पास दस, बीस, पचास हजार रुपए फँसे भी पड़े हैं तो भाई! उसके प्रति भी हम कुशलता के व्यवहार के साथ में, हम उसको आगे सांत्वना दे सकते हैं...भाई! जब समय आए दे देना। हमारे लिए ऐसी कोई आपत्ति नहीं पड़ी कि तेरे पचास हजार रुपए से ही मेरी जिन्दगी चल रही हो। सामने वाला जब निश्चिन्तता से आपके प्रति मित्रता का भाव रखेगा तो वह भी आपका पैसा लौटा देगा और शत्रुता का भाव आ गया तो वह आपका कुछ भी बुरा कर सकता है। पैसा तो डूबे ही, जिन्दगी डूब जाती है। लोग इसलिए भी एक दूसरे की property के लिए और इस तरह के कार्यों में एक-दूसरे के murder करते हैं, बड़े-बड़े case होते हैं। यह भी चीज ध्यान

में रखनी है। शक्ति के अनुसार ही हमें त्याग, इस तरह से करना है। यह त्याग की महिमा बताने के लिए, यह सूत्र आया है।

शक्ति के अनुसार तप करना

अब तप की बात की जा रही है। शक्ति के अनुसार ही तप करना।

तद्व्रतमाचरितव्यं यत्र न संशयतुलामारोहतः शरीरमनसी॥ 9॥

बहुत अच्छा सूत्र वाक्य है। सबके लिए ध्यान रखने योग्य। कौन सा तप करना चाहिए? **वही व्रतों का आचरण करें, वही नियमों का आचरण करें जिससे शरीर और मन संशय की तुला पर आरोहण न कर जाएँ।** क्या हुआ? शरीर और मन! शरीर से भी तप होता है और मन से भी तप होता है। **शरीर का तप!** मान लो आपके लिए वही तप चल रहा है, कोई विशेष उपवास है, कोई शरीर के लिए क्लेश देने वाले कोई विशेष तप हैं तो उतना करना, जिससे शरीर में सन्देह न आ जाए। कल तक जीऊँगा कि नहीं? प्राण न निकल जाएँ रात में ही? नहीं समझ में आया? इतना मन में घबराहट न हो जाए या शरीर की स्थिति इतना न बिगड़ जाए कि हमने तो भैया! नियम लिया था, बारह सौ चौंतीस करूँगा ही तो बारह ही हो पाए और मर गए। ऐसे नहीं करना बारह सौ चौंतीस। समझ आ रहा है? यह जो चीज है, यह चीज सीखनी चाहिए महिलाओं को भी, पुरुषों को भी। उसी व्रत का आचरण करें जिससे शरीर संशय की तुला पर....तुला मतलब तराजू पर न आ जाए। अब संशय हो गया, भैया! अब यह बचेगा कि नहीं बचेगा, ऐसा न हो हिलने लग जाए और वही व्रत का आचरण करें, जिससे **मन में भी सन्देह उत्पन्न न हो जाए।** यानि तप जो होना चाहिए, वह भी शक्ति के अनुसार हो और शक्ति अपने शरीर और मन की शक्ति को देख कर के नापी जाती है, स्थिति को देख कर के नापी जाती है। देखा-सेखी नहीं करना, ये सबसे बड़ी सीख यहाँ दी जाती है। समझ आ रहा है? कई लोग बहुत देखा-सेखी, सब कुछ करते हैं। **देख कर के सामने से प्रेरणा तो मिले लेकिन प्रेरणा लेते हुए भी हम अपने शरीर और अपने मन की स्थिति को देख कर के बुद्धि पूर्वक, विवेक पूर्वक, विचार पूर्वक हर कार्य करें।** यह शक्ति के अनुसार हमारा त्याग कहलाता है। अब देखो! यह तो हो गया अपने धर्म के तप के हिसाब से।

माता-पिता को अपनी सामर्थ्य अनुसार बच्चों का पालन करना चाहिए

अब मैं आजकल की परिस्थितियों के हिसाब से इस सूत्र पर चर्चा करूँ। आज ऐसे बहुत से मध्यम परिवार के लोग होते हैं, जो अपने बच्चों को अच्छी स्कूलों में पढ़ाने के लिए बड़ी-बड़ी fees के साथ में अपना मन बनाते हैं। बहुत बड़ी-बड़ी fees देकर के बड़े-बड़े स्कूलों में पढ़ाने

का मन बनाते हैं। उनकी स्थितियाँ भले ही इतनी मजबूत न हों लेकिन वह फिर भी अपनी स्थिति से बढ़-चढ़ के यह कार्य करते हैं। समझ आ रहा है? इसको इस तरह से इस सूत्र का आज के परिवेश में उपयोग करना चाहिए। शक्ति के अनुसार अगर आप त्याग कर रहे हैं तब तो ठीक है और आप शक्ति से बढ़ कर के कर रहे हैं, बेटे को पढ़ाने के लिए, बेटियों को पढ़ाने के लिए अगर आप कर्ज में पड़ रहे हैं तो यह आपके लिए निर्णय जो आपका है, उचित नहीं है। बेटा कह रहा है...मेरा दोस्त फलानी convent school में पढ़ता है, उस school में पढ़ता है। अब उसी school में, मैं पढ़ूँगा। यह बेटे की जिद हो सकती है लेकिन आपको बेटे को समझाना चाहिए और कभी भी माता-पिता को अपना standard बनाने के लिए इस तरह का प्रयास नहीं करना चाहिए कि हम भी इसी तरह की लाखों-लाखों की fees हमें देनी पड़े, ऐसी जगहों पर हम बच्चों को पढ़ाएँ जिससे कि हमारे मन में संशय पैदा हो जाए कि हम इस fees को पूरी दे भी पाएँगे कि नहीं दे पाएँगे। ये नीतियाँ अपने ध्यान में रखोगे तो जीवन सही चलेगा और ऐसा होता है बड़े-बड़े स्कूलों में बच्चों के admission हो जाते हैं, फिर उनकी fees के लाले पड़ते हैं। फिर उसके लिए बाद में फिर अलग-अलग तरह से चन्दा-चिट्ठा होता है। मैं कहता हूँ...भाई! ऐसी क्या जरूरत पड़ गई? क्या government स्कूलों से बच्चों की पढ़ाइयाँ, पढ़ाइयाँ नहीं होती हैं? सब होता है। **बच्चा अगर पढ़ने लायक हो तो government school में भी रहकर के अच्छे ढंग से पढ़ सकता है। बस उसको पढ़ने लायक होना चाहिए। Quality होना चाहिए उसके अन्दर, पढ़ने की जिज्ञासा होनी चाहिए।**

सरकारी स्कूलों से निकले महान व्यक्तित्व

आज भी government स्कूलों में सब पढ़ाई होती हैं। सब वही course की book मिलती हैं और कई governments के यहाँ पर तो जैसे मैं U.P. में सुनता था, आठवीं तक तो बिल्कुल free में ही पढ़ाई होती है, कोई भी पढ़े। M.P. में भी हो गया तो बस समझो आप। समझ आ रहा है न? सरकारी स्कूलों में 25 percent बच्चों को free पढ़ाया जाता है और आठवीं तक तो पूरा free है, 10वीं तक भी है। ये जो अपने नियम हैं, इन नियमों के तहत बच्चों को पढ़ाओ। मैं कह रहा हूँ अगर माता-पिता पढ़े-लिखे हो, बच्चों को बड़ी आसानी से बिना tuition, बिना coaching और बिना लम्बी fees के बहुत अच्छे ढंग से पढ़ा सकते हैं। आखिर आपको बच्चों को क्या पढ़ाना है? जो course की किताबें पढ़ाना हैं, वह आप घर पर भी पढ़ा सकते हो। school के teacher भी पढ़ा सकते हैं और वह **बच्चा मेहनत करने वाला हो तो वह कहीं पर भी रहकर के अच्छे ढंग से पढ़ सकता है।** अगर उसके लिए convent स्कूलों की पढ़ाई न मिले तो वह भी उसके लिए एक अच्छा chance समझना चाहिए। कम से कम convent स्कूलों का जो extra burden दुनिया के project work के माध्यम से घर के लोगों को मिलता है, वह तो नहीं मिलेगा और उसके एवज में जो वह समय मिलेगा, उसमें वह

कोई अच्छे-अच्छे काम करना सीखे और अपनी अच्छी कोई उसके अन्दर की skill हो, उसको develop करना सीखे। अच्छे-अच्छे अगर वह और दूसरे काम सीख पाएगा तो वह तभी सीख पाएगा, जब वह सामान्य शिक्षा के माध्यम से सरकारी स्कूलों में पढ़ कर के ही आगे बढ़ा हुआ हो। आप देख लेना, **जितने भी बड़े-बड़े लोग हुए हैं, हिंदी medium वाले सब सरकारी स्कूलों में पढ़ कर के आगे पहले पढ़े हैं, बड़े बने हैं।** ये शिक्षक बैठे हैं, सब हिन्दी का प्रचार करने के लिए बैठे हैं। एक विशेष कार्यक्रम इनके द्वारा और भी हो सकता है, अगर आप लोग आज रात में रहें तो। समझ आ रहा है? चाहे **APJ kalam** की बात सुन लेना, चाहे **Dr Rajendra Prasad** वगैरह जो प्रथम राष्ट्रपति रहे। बड़े-बड़े जो लोग रहे, सब ने सरकारी स्कूलों में पढ़कर के ही उच्च शिक्षा, नीति शिक्षा, संस्कारों के साथ प्राप्त की और बड़े-बड़े पदों पर उपस्थित हुए हैं। आज भी वर्तमान में जो आपके समक्ष PM हैं, जो सरकार चल रही है, कोई बड़ी-बड़ी स्कूलों में पढ़े हुए नहीं हैं। सामान्य स्कूलों में, गुरुकुलों में पढ़े हुए लोग हैं, जो आज दुनिया चला रहे हैं। चाहे वह मोदी हों, चाहे वह रामदेव हों। समझ आ रहा है? चाहे अटल बिहारी हो, कोई भी हो, आप देख लो।

चरित्र का विकास विपरीत परिस्थितियों में होता है

यह जो आप केवल एक fashion की तरह, trend की तरह अपनी कुव्वत से ज्यादा अपने बच्चों के लिए करने की सोचते हैं और सोचते हैं...यह हमारा बच्चों के प्रति प्रेम है या प्यार है, यह आपकी बड़ी अज्ञानता है। हमेशा त्याग और तप शक्ति अनुसार ही होना चाहिए और मैं कहता हूँ...जो बच्चा थोड़ी सी गरीबी में और थोड़ी सी विपरीत परिस्थितियों में पढ़ेगा, वह दुनिया में बहुत श्रेष्ठ बच्चा बनकर के, महान व्यक्ति बनकर के सामने आएगा। ज्यादा सुख-सुविधाओं में ढले हुए बच्चे कभी कोई काम के बहुत अच्छे बच्चे नहीं बन पाते हैं। वे बस IT companies में ही job करने लायक रहते हैं। कोई दुनिया के और देश के, धर्म के काम के नहीं होते। मेहनत करना, अच्छा आदमी बनना, दुनिया को देखना, समझना, यह उन्हीं में होगा जो थोड़ा सा विपरीतता के साथ चले होंगे। तभी उनके जीवन में हर चीज की कीमत आती है। यह बच्चों को निखारने के लिए आपको बहुत ज्यादा बच्चों से मोह न करके, उन्हें उतना ही देना, जितना उनके लिए अनुकूल है...यह आपका शक्ति अनुसार तप कहलाएगा और यह त्याग कहलाएगा। आगे कहते हैं...इसकी महिमा क्या है।

अर्थ का व्यय ही त्याग है

ऐहिकामुत्रिकफलार्थमर्थव्ययस्त्यागः ॥ 10 ॥

अर्थ का जो व्यय है, वह त्याग है। अब देखो! त्याग किसका करना? अर्थ। अर्थ मतलब धन।

धन का जब भी व्यय किया जाएगा, वह त्याग कहलाएगा लेकिन वह त्याग कब कहलाएगा? **'ऐहिक'** अर्थात् इस लोक सम्बन्धी और **'अमुत्रिक'** अर्थात् परलोक सम्बन्धी, फलों की प्राप्ति के लिए यानि **इस लोक में भी हमें सुख मिले और परलोक में भी हमें सुख मिले, इस निमित्त से जो आप धन का त्याग करेंगे, वह आपके लिए त्याग कहलाएगा, दान कहलाएगा और यही आपके लिए सबसे अच्छा धर्म कहलाएगा।**

अपात्रों में दान देना व्यर्थ है

अब यहाँ पर देखो! पात्र की बात आती है। त्याग के लिए, दान के लिए, धन देने के लिए पात्र कौन से होने चाहिए? इसकी भी चर्चा सुनी जाए।

भस्मनि हुतमिवापात्रेष्वर्थव्ययः ॥ 11 ॥

क्या कहते हैं? **'हुतमिवापात्रेष्वर्थव्ययः'** अपात्रों में अगर आपने अर्थ का व्यय किया तो ऐसे समझ लो जैसे भस्म में आपने **'हुतम्'** किया मतलब हवन किया। क्या समझ में आया? अपात्र में अर्थ का व्यय करना, **अपात्र का मतलब? जो धर्म के पात्र नहीं हैं।** वैसे यहाँ पात्र आगे तीन प्रकार के बताए जाने वाले हैं, अलग तरह के पात्र। समझ आ रहा है न? **पात्र में अगर आपने दान नहीं दिया, अपात्र में आपने दान दिया, अपात्र में आपने धन का व्यय किया जो पात्र नहीं हैं, तो आपका वह सारा का सारा धन वैसा ही समझना जैसे आप राख में हवन कर रहे हो।** हवन किस में होता है? अग्नि में होता है। तब वह हवन कुछ काम में आएगा? राख में हवन करोगे तो कुछ काम नहीं होगा। उसी तरह से अगर आपका पुत्र, भले ही आपका पुत्र है, देखो! अब नीति वाक्य बोल रहा हूँ मैं। **एक अच्छे व्यक्ति के लिए, एक अच्छे राजा के लिए, एक अच्छे धार्मिक गृहस्थ के लिए यह सोचना आवश्यक है, पात्र में धन का व्यय करना।** अगर हमारा पुत्र भी अपात्र है, तो उसमें धन का व्यय नहीं करना। पड़ोसी का पुत्र अगर पात्र है और वह अगर धन के कारण से वह अपनी पात्रता नहीं बना पा रहा है, तो उसमें धन का व्यय करना...यह नीति कहती है। **अपात्र आजकल पैसा खर्च करके degree प्राप्त कर रहे हैं।** यह अपात्रता जितनी बढ़ रही है, उतना ही ज्यादा समाज में अनीतियाँ, अन्याय बढ़ेंगे। ये

नीतियाँ कहती हैं, इसलिए पात्र कौन से हैं?...यह जानना भी जरूरी है।

दान देने के लिए 3 प्रकार के पात्र

पात्रं च त्रिविधं धर्मपात्रं कार्यपात्रं कामपात्रं चेति॥ 12॥

क्या कहा गया? तीन प्रकार के यहाँ पात्र बताए जा रहे हैं। वे नहीं जो आपने सुन रखे हैं- **उत्तम, मध्यम, जघन्य।** ये पात्र जो सामाजिक परिवेश में सबके साथ हिल-मिल कर के हमें अपना जीवन जीने में काम आते हैं, वे तीन प्रकार के पात्र आपको देखना है।

धर्म पात्र

एक तो धर्म पात्र हो गए। कौन से पात्र? धर्म के पात्र मतलब जो **धर्म को जानने वाले विशिष्ट विद्वान हैं, गुरु हैं, उनके लिए भी कुछ अर्थ का व्यय करना, यह धर्म पात्र में चला गया।** यह क्या हो गया? धर्म पात्र। धर्म के लिए जो कुछ भी किया जाए, धर्म की शिक्षा आगे बढ़ाने के लिए, धर्म की शिक्षा देने वाले अच्छे विद्वानों के लिए, यह जो आप धन का व्यय करेंगे, वह कहलाएगा धर्म पात्र में अर्थ का व्यय करना।

कार्य पात्र

दूसरा होता है- **कार्य पात्र।** कार्य पात्र का मतलब होता है...**जो आपके कार्य में सहयोगी बन रहे हैं।** आप कोई भी व्यापार कर रहे हैं, कोई भी तरह का आप अनुष्ठान कर रहे हैं या job कर रहे हैं, आपके साथ में रहने वाले लोग भी इतने प्रतिभाशाली, चतुर, अपनी-अपनी विषयों में निपुण होने चाहिए कि उन लोगों के लिए भी आप अपनी सहायता, अपना सहयोग देते रहें, यह आपके लिए कहलाएगा...कार्य पात्रों को अर्थ का व्यय, दान देना। जैसे आपकी बड़ी-बड़ी दुकानों पर नौकरों की संख्या होती है, सेवक होते हैं आपके। **बड़ी-बड़ी मिलें होती हैं, उनमें बहुत सारे लोग काम करते हैं तो उनके लिए भी अनुकूल बनाए रखने के लिए, उन्हें अपने अनुकूल बनाए रखने के लिए उन पर धन का व्यय करना, यह कार्य पात्रों में जाएगा।** क्योंकि वे आपके अनुकूल रहेंगे तो आपका काम बना कर के रखेंगे, नहीं तो वे आपका काम बिगाड़ देंगे। इसलिए, उनके लिए भी अच्छा देना पड़ता है। समय-समय पर उनके लिए अलग से भी अर्थ के व्यय की चिन्ता करना। कोई-कोई लोग ऐसे होते हैं कि मान लो, आप जो उन्हें अपनी fees दे रहे हैं महीने की fees, उतना वे ले तो रहे हैं लेकिन आपको यह भी पता हो कि उतने से उनका काम चल पा रहा है कि नहीं चल पा रहा है। अगर नहीं चल पा रहा है, तो अलग से भी उन्हें बुला कर के, अलग से भी उन्हें **किसी भी त्यौहार पर, होली आई है भैया! लो यह दस हजार रुपए और ज्यादा ले जाओ। अच्छे ढंग से अपने घर में होली का त्यौहार मनाना,**

दीपावली का त्यौहार मनाना। यह अर्थ का व्यय करना भी बहुत अच्छा होता है क्योंकि उससे वह आपका सेवक हमेशा आपके लिए अनुकूल रहेगा। अगर सेवक मालिक के लिए अच्छा सोचेगा तो मालिक के लिए बहुत काम करेगा। नहीं तो, आप उसके लिए दो हजार रुपए नहीं दोगे, पाँच हजार रुपए नहीं दोगे, वह आपके दस हजार-पचास हज़ार पर बट्टा लगा देगा। आपको पता ही नहीं पड़ेगा। यह भी तो बात होती है। इनको कार्य पात्र कहा गया...जो आपकी कार्य शैली से जुड़े हुए लोग हैं, उनको भी अर्थ देते रहना, यह कार्य पात्र है। कई बार ऐसा होता है कि अपने घर के कामों में तो आपके लिए जो सेवक होंगे, उनको तो आप दस हजार रुपए पर रखोगे, पन्द्रह हजार रुपए पर रखोगे और धर्म कार्य के लिए जो सेवक होते हैं बड़े-बड़े मन्दिरों पर या किन्हीं तीर्थों पर, उनके लिए आप दो-दो हजार, चार-चार हजार में भी परेशानी पैदा करोगे। यह भी एक दिक्कत वाला काम है। इसीलिए, बड़े-बड़े नुकसान भी होते हैं। तो यह भी सोचने योग्य विषय है, यह भी जानने योग्य बात है कि जो हमारी कार्यशैली में काम आने वाले लोग हैं, उन्हें धन देकर सन्तुष्ट करना। यह नीतिज्ञ लोगों का काम होता है। ये कार्य पात्र हैं और **तीसरे! काम पात्र हैं।**

काम पात्र

क्या नाम है? **काम पात्र। जिनसे हमारी इच्छाएँ पूर्ण होती हो। वे कोई भी हो सकते हैं। जिनसे हमारे सुख, हमें इन्द्रिय सुखों की प्राप्ति होती है, ऐसे काम पात्रों के लिए भी अर्थ का व्यय करना, यह भी एक अच्छा गृहस्थ जीवन जीने के लिए आवश्यक होता है।** नहीं समझ में आया? अभी नहीं आया? मतलब आपके जीवन में गृहस्थी का सुख भी मिलेगा। एक मनुष्य के सुखी जीवन के लिए जिन-जिन चीजों से या जिन व्यक्तियों से आपको गृहस्थी का सुख मिले, उसके लिए भी अर्थ का व्यय करना जरूरी होता है। **अब मान लो स्त्री है, पत्नी है, तो पत्नी के सुख के लिए भी कुछ पैसा व्यर्थ अर्थ करना पड़ता है।** नहीं समझ में आया? अगर पत्नी को धन नहीं दोगे, पत्नी के लिए अर्थ का व्यय नहीं करोगे, अब आजकल की पत्नियाँ तो अलग ही type की हो गईं, सब कमाने ही लग गई हैं। पहले की पत्नियाँ कमाती नहीं थी तो उन्हें अर्थ देना पड़ता था और देना चाहिए। उन्हें अर्थ देते रहोगे तो वह घर की सब सम्भाल करती रहेंगी। तुमको भी सुखी रखेंगी, निश्चिन्त रखेंगी, घर का काम सब बनता रहेगा। समझ आ रहा है? गृहमन्त्री इसीलिए उनको कहा गया था। गृहमन्त्री के लिए भी विशेष अर्थ की व्यवस्था बनाए रखना...यह भी सुखी जीवन के लिए जरूरी है।

इन्द्रिय सुख की प्राप्ति के लिए अर्थ का व्यय

वे चीजें जो आपके घर में सुख के लिए आवश्यक हैं, उन चीजों को घर में रखना। उसके लिए भी अर्थ का व्यय करना। घर में तरह-तरह की परेशानियाँ होती हैं। भाई! यह चीज आ जाए तो

परेशानी दूर हो जाए कि भाई! कोई बर्तनों की परेशानी है कि पानी भरने की परेशानी है, कि नल नहीं है, कि कोई अच्छी हवा के लिए cooler नहीं है, कि कोई साधन नहीं है, तो **जो रोज-रोज आपके लिए इन्द्रिय सुखों में बाधा पैदा करे, उसके लिए भी धन लगाने को मना नहीं किया गया है। आपके सभी सुखों की इच्छा करते हुए यहाँ पर नीति की बात कही जा रही है। तीन तरह के पात्र हो गए...धर्म पात्र, कार्य पात्र और काम पात्र।** इन तीनों में जो उचित रीति से, अपनी शक्ति के अनुसार धन का अनुपात बनाते हुए व्यय करता है, वह अपने आप जीवन का अभ्युदय प्राप्त करता चला जाता है क्योंकि जीवन का अभ्युदय मतलब balance तरीके से जीने से ही होगा।

कीर्ति पात्र

एवं कीर्तिपात्रमपीति केचित्॥13॥

यहाँ कहते हैं...कुछ लोग कीर्ति पात्रों को भी लेते हैं यानि कीर्ति पात्र भी होते हैं। चौथे नम्बर के पात्र कौन से? कीर्ति पात्र। **कीर्ति पात्र** का मतलब यह है...जिन लोगों की कीर्ति समाज में फैल रही हो, यश फैल रहा हो, उनके लिए भी कुछ अर्थ से सहयोग करना, वह भी आपके काम में आएगा क्योंकि जो यशः कीर्ति के साथ चल रहे हैं तो उनकी यश से आपके भी बहुत सारे काम बन जाएँगे। अगर कोई आपके लिए कुछ ऐसे लोग हैं जो कीर्ति को प्राप्त हैं, उनसे आपके निकट सम्बन्ध हैं और वे कभी आपसे कोई धन आदि की अपेक्षा रखते हैं तो उनका सहयोग

करने से भी आपके काम बनेंगे और कोई भी काम में अगर बिगाड़ होगा तो वह आपका भी सहयोग करेंगे। उसमें कोई बात नहीं है? यह करना पड़ता है। अब इसमें आप मिथ्यादर्शन, सम्यग्दर्शन को नहीं लाना। **ये सब नीतियाँ तभी चलेंगी, जब आप नीति-निपुण होकर चलोगे। नीतियों को ध्यान में रखते हुए, नीति के अनुसार ही भाई! अर्थ का व्यय इनके लिए इतना करना है, इनके लिए इतना करना है, यह अर्थ का व्यय का अनुपात बना कर के चलना भी एक कुशल वृत्ति के साथ चलना कहलाता है।** इस तरह से यह जिनकी कीर्ति अच्छी है, उनके लिए दान देना, अर्थ देना भी उचित कहा गया है। एक और सूत्र पढ़ते हैं...

अपने आश्रितों का नीतिपूर्वक पालन पोषण करना

किं तया कीर्त्या या आश्रितान्न विभर्ति प्रतिरुणद्धि वा धर्मं

भागीरथी-श्री-पर्वतवद्भावानामन्यदेव प्रसिद्धेः कारणं न पुनस्त्यागः यतो न खलु गृहीतारो व्यापिनः सनातनाश्च॥ 14॥

क्या कहते हैं? जिनके पास में कीर्ति है, कहते हैं... **'किं तया कीर्त्या'** उनकी कीर्ति से क्या लाभ है? जो अपने आश्रितों का **'विभर्ति'** अर्थात् भरण-पोषण, पालन-पोषण नहीं कर सकते। यानि जो कीर्ति पात्र हैं, उनका यह कार्य है कि वह अपने सेवकों का, अपने आश्रितों का, अपने अधीन रहने वालों का भी पालन-पोषण अच्छे ढंग से करें और उनके लिए भी किसी भी तरह से वह कीर्ति उनके धर्म को वह नष्ट नहीं करती है। मतलब अगर वे उनके लिए कोई धन आदि का त्याग करते हैं तो उससे उनका कोई धर्म नष्ट नहीं हो जाता है। जो अपने सेवक हैं, अपने आश्रित रहने वाले लोग हैं, उनके लिए भी धन का व्यय करने से अपना कोई धर्म नष्ट नहीं हो जाता है। यहाँ एक उदाहरण दे कर के बताते हैं...जैसे भागीरथी का अर्थ गंगा होता है, श्री का अर्थ लक्ष्मी होता है और पर्वत का अर्थ पर्वत होता ही है, जैसे हिमालय आदि पर्वत हैं। ये भी अगर प्रसिद्ध हुए हैं तो **इनकी प्रसिद्धि का कारण और कुछ नहीं है, त्याग ही है।** नहीं समझ में आया? यानि जैसे गंगा है, जल देती है, श्री लक्ष्मी धन देती है, पर्वत हैं, बड़ी-बड़ी चीजों को हमें देते हैं...वृक्ष आदि, जंगल आदि के माध्यम से बहुत सारी सम्पदा देते हैं तो इनको भी बड़ा तभी कहा जाता है, जब ये अपने आश्रितों की रक्षा करते हैं। लोग इन्हीं के आश्रित भी होकर के जीवन जीते हैं। पर्वतों के आश्रित रहने वाले लोग होते हैं, लक्ष्मी के आश्रित, गंगा के आश्रित तो उनको उनसे वे चीजें मिलती रहती हैं तो वह उससे बढ़ते रहते हैं और अपने आश्रित होने से अपने इस मालिक की रक्षा भी करते रहते हैं। **'यतो न खलु गृहीतारो व्यापिनः सनातनाश्च न पुनस्त्यागः'** मतलब उस त्याग से भी क्या मतलब है जिससे ग्रहण करने वाले लोग यानि वह जो है **'गृहीतारो व्यापीनः'** और **'सनातनाश्च'** ? क्या कहा गया? दान देने वाले जो पात्र लोग हैं, उन्हें यह सोचना चाहिए

कि वह हमेशा रहने वाले नहीं हैं या उनकी प्रसिद्धि भी हमेशा रहने वाली नहीं है। वह अगर दूसरों के लिए कुछ देते रहेंगे तो उनकी प्रसिद्धि उनके जाने के बाद भी बनी रहेगी और उनकी प्रसिद्धि, वह सनातन मतलब परम्परा उनकी निरन्तर चलती रहेगी। यह दान का बहुत बड़ा महत्व बताया गया है। **अर्थ का व्यय करना भी एक बहुत बड़ी नीति है।** यह अर्थ पुरुषार्थ में आ जाता है लेकिन अभी यह सब धर्म के समुद्देश में ही चल रहा है। समय अपनी गति से चल ही रहा है। अभी के लिए इतना ही पर्याप्त है।

धन का उपयोग कैसे करें?

सुबह इस नीतिवाक्यामृत ग्रन्थ के 14 सूत्रों का वाचन हुआ। धर्म समुद्देश नाम का यह जो अभी chapter चल रहा है, इसमें आगे 15वाँ सूत्र पढ़ते हैं।

स खलु कस्यापि माभूदर्थो यत्रासंविभागः शरणागतानाम्॥15॥

यहाँ कहते हैं कि ऐसा अर्थ किसी के लिए भी न होवे, इतना धन या ऐसा धन किसी के पास न होवे जिस धन के माध्यम से शरणागतों के लिए संविभाग न किया जाए। यानि **उस व्यक्ति का धन ग्रहण करना व्यर्थ है, उस व्यक्ति के पास धन होना भी व्यर्थ है जो अपने शरणागतों के लिए किसी भी तरह का भरण-पोषण नहीं कर सकता।** जो अपने आश्रितों का किसी भी तरह से भरण-पोषण नहीं कर सकता, उन्हें सम्भाल नहीं सकता, ऐसे उस कृपण का धन भी व्यर्थ होता है। यानि धन जो प्राप्त किया जाता है, वह धन भले ही मेहनत से प्राप्त हो, अपने पुण्य से प्राप्त हो लेकिन उस धन का उपयोग करना सबसे बड़ी महत्वपूर्ण चीज है। इसलिए, यहाँ पर कहा जा रहा है कि अगर आपके पास में धन है और अगर कोई आपसे शरण माँगने आया है, कोई शरणागत आपके समक्ष किसी भी तरह से अपनी विनती लेकर के आया है और आप अगर उसे देने में समर्थ हैं तो वह धन का सही उपयोग माना जाता है। यह विचार भी सभी व्यक्तियों के अन्दर होना ही चाहिए कि हम अपने धन के माध्यम से दूसरे जीवों के लिए हमेशा हितकारी कार्य करने में उस धन का सदुपयोग करते रहें।

SCAN TO WATCH

धन की तीसरी गति कौन सी है?

आगे कहते हैं...अगर यह धन का उपयोग हम नहीं करते हैं तो इस धन के माध्यम से हमें क्या फल मिल सकता है? या जो धन है, उसके क्या फल होने चाहिए? उस धन के दो ही फल होते हैं, जो यहाँ आगे बताए जा रहे हैं...

अर्थिषु संविभागः स्वयमुपभोगश्चार्थस्य हि द्वे फले, नास्त्यौचित्यमेकान्तलुब्धस्य॥16॥

कहा जा रहा है...**'अर्थिषु संविभागः'** धन के लिए जिसके लिए जरूरत है, उसके लिए कुछ संविभाग करना, उसके लिए कुछ धन प्रदान करना, यह उस धन का पहला उपयोग है, उसका यह पहला फल है और दूसरा फल...**'स्वयमुपभोगश्चार्थस्य हि द्वे फले'** धन के ये दो ही फल हैं...या तो उसके लिए जिसकी जरूरत है, उसके लिए संविभाग कर दिया जाए, दे दिया जाए या उसका स्वयं उपभोग किया जाए। अन्यथा आप देखते हैं धन की **तीसरी गति जो इसमें लिखी नहीं है, उसका नाम है- नाश हो जाना।** धन के तीन ही काम होते हैं या तो उसका **स्वयं उपभोग किया जाए** या उससे **दूसरों के लिए कुछ दिया जाए,** भलाई में काम लिया जाए अथवा अगर ये दोनों काम नहीं होते हैं तो तीसरा काम वह धन अपने आप **नष्ट हो जाता** है। इसलिए जो एकान्त रूप से धन में लुब्ध होते हैं... **'नास्त्यौचित्यम्'** उनके लिए कोई औचित्य नाम का गुण तो रह ही नहीं जाता है। आगे बताएँगे, औचित्य एक बहुत बड़ा गुण होता है। एकान्त रूप से लुब्ध रहने वाले अर्थात् निरन्तर जो लोभ से ही धन संग्रह करते हैं, उनके लिए किसी भी तरह का यह लोभ करना उचित नहीं है।

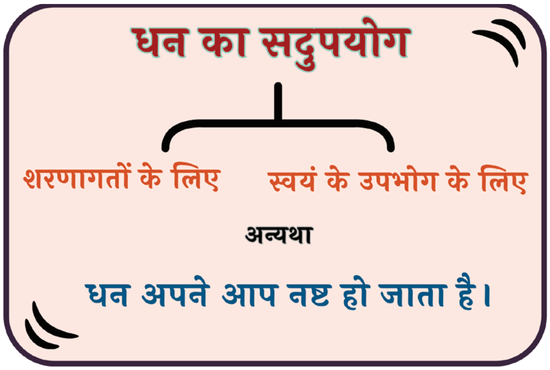

धन के नाश से अपना भी नाश

मन्दिर आदि के निर्माण में लगने वाला धन भी जो सुबह धर्म पात्र बताए थे, वे पात्र सभी होते हैं, धर्म पात्र में जाएगा। पात्र तो जिनबिम्ब भी हैं, जिनदेव भी हैं, जिनालय भी हैं, पात्र उसी में जाएगा लेकिन धन का उपयोग यही है...या तो दूसरों के काम में लगा दो, चाहे वह मन्दिर के काम में हो, चाहे दूसरों के हित के काम में हो या फिर उसके लिए स्वयं अपने काम में लगाओ। **अधिक धन के प्रति लोभी होने वाले व्यक्ति जो एकान्त रूप से लुब्ध हो जाते हैं, वे उस धन के नाश से, अपना भी नाश कर लेते हैं।** क्योंकि यदि आप देखते ही होंगे, कृपणों का जो धन होता है वह कब निकल जाता है? किसी को पता नहीं पड़ता है। चोर, लुटेरे, ये सब उनके धन को एक साथ इकट्ठा ले जाते हैं और कोई काम में नहीं आता या उनका धन जहाँ पड़ा रह जाता है, वहीं सड़ जाता है। वह किसी के उपयोग में नहीं आता।

सबसे बड़ा गुण - औचित्य गुण

अब यहाँ कहते हैं...

दानप्रियवचनाभ्यामन्यस्य हि सन्तोषोत्पादनमौचित्यम्॥ 17॥

एक नीति है...सभी गुण एक तरफ और औचित्य नाम का गुण एक तरफ। **यह औचित्य एक बहुत बड़ा गुण होता है।** कभी नाम सुना है? कौन सा गुण? बोलो तो! औचित्य गुण! औचित्य गुण क्या कहलाता है? वह यहाँ परिभाषा दी जा रही है, आपको यह ध्यान रखना है। **औचित्य गुण का मतलब होता है...दान और प्रिय वचनों के द्वारा अन्य के लिए सन्तोष उत्पन्न करना, यह औचित्य गुण कहा गया है।** दूसरों के लिए सन्तोष, उनको जिन चीजों की जरूरत है, वे चीजें उनके पास तक पहुँच जाएँ तो ये उनके लिए सन्तोष की चीजें होती हैं और अगर हम वह नहीं कर पाते हैं तो कम से कम प्रिय वचनों के माध्यम से हम उन्हें सन्तोष प्रदान करें, यह भी उनके लिए सन्तोष का कार्य होता है। **जो व्यक्ति इन दो बातों पर ध्यान रखता है, वह औचित्य गुण का पालन करके अपनी नैतिकता का सर्वोत्कृष्ट कर्तव्य कर लेता है।** यह नैतिकता है! दान और प्रिय वचनों के माध्यम से दूसरों को सन्तोष उत्पन्न करना, इसी का नाम औचित्य गुण है और यह औचित्य गुण समय-समय पर एक दूसरे के लिए जब दिया जाता है, तभी सब काम चलते हैं।

घर में मन-मुटाव दूर करने का उपाय

घर के सदस्य हैं, अगर घर के सदस्यों को आप ये दोनों चीजें देते रहें तो आपके घर के सदस्यों के माध्यम से आपके लिए कभी भी बुरा नहीं सोचा जाएगा। **उनको सन्तोष रहेगा तो वे आपके लिए भी अच्छा सोचेंगे।** कोई भी group होता है, उसमें भी यह औचित्य गुण का पालन करना बहुत जरूरी होता है। कई नीतिकारों ने लिखा है...**सारे गुण तराजू पर एक तरफ रख दो और एक औचित्य नाम का गुण एक तरफ रख दो, यह भारी पड़ेगा।** समय पर प्रिय वचन बोल कर के उसे आश्वासन देना, सन्तोष उत्पन्न कराना, ढाढस बंधाना, यह औचित्य कहलाता है और समय पर उसके लिए जिन चीजों की जरूरत है, उन पदार्थों को देकर या धन आदि को देकर के उसके लिए सन्तोष उत्पन्न कराना, यह भी औचित्य कहलाता है। ये दो ही प्रकार की चीजें

औचित्य गुण में आती हैं और इन दोनों चीजों की उपयोगिता को ध्यान में रखते हुए जो कर्तव्य किया जाता है, वही हमारा नैतिक कर्तव्य कहलाता है। इसलिए औचित्य गुण आज सभी के अन्दर अगर रहे तो बहुत कुछ लड़ाई-झगड़े, मन-मुटाव अपने आप दूर हो जाते हैं। समझ रहे हैं? औचित्य गुण। मन-मुटाव कब होता है? जब हम किसी से किसी भी प्रकार की कोई भी इच्छा तो करते हैं लेकिन हम किसी के लिए अच्छे शब्द नहीं बोल कर के उसको धन्यवाद नहीं दे पाते। तब क्या होता है? मन-मुटाव हो जाता है। **कोई भी कार्य किसी ने किए, आदमी और कुछ नहीं सुनना चाहता है, बस! यही सुनना चाहता है कि बस! यह धन्यवाद ज्ञापित कर दें, उसको सन्तोष हो जाता है।** किसी का नाम नहीं ले पाते हो, कभी किसी की बात कहते हुए भी उसकी बात नहीं सुनी जाती है, तो उसी में ही उसके लिए असन्तोष हो जाता है। दूसरों को सन्तोष उत्पन्न होता रहे।

औचित्य गुण यही कहता है कि कभी किसी के लिए अप्रिय वचन न बोला जाए

आचार्यों के लिए भी कहा गया है...गण को सन्तुष्ट करने वाले आचार्य होते हैं। **'गणस्य संतुष्टि करा'**, सन्तोष उत्पन्न करने के लिए उनकी बात सुननी पड़ेगी और उनको प्रिय वचन बोल कर के उन्हें सन्तोष किया जा सकता है। जब लोग किसी भी तरह से देव-शास्त्र-गुरु के प्रति अपनी भक्ति रखते हैं तो उन्हें **देव-शास्त्र-गुरु से कुछ चाहिए नहीं होता है, उन्हें केवल इतना ही चाहिए होता है बस! प्रिय वचन मिल जाएँ और अच्छा आशीर्वाद मिल जाए, इतने में सन्तोष हो जाता है।** बताओ और क्या चाहिए होता है? इसके लिए आदमी कितना समय निकालता है? कितना पैसा खर्च करता है? और यह अगर उसको मिल जाता है तो सन्तुष्ट हो जाता है। अगर कोई उसमें अप्रिय वचन बोल देता है, तो उसे असन्तोष हो जाता है। हम देखते रहते हैं...आहार होते हैं, भीड़ अधिक होती है और कई बार बाहर से आने वाले लोग होते हैं, उन्हें आहार देना होता है। उनके लिए भी त्यौहार है, सबके लिए त्यौहार है और अगर कोई उनको मना कर देता है या कोई अप्रिय बोल देता है, तो उन्हें बुरा लगता है, वे दुःखी हो जाते हैं, वह स्वाभाविक है। उस स्थिति में **औचित्य गुण यही कहता है...किसी के लिए भी बुरा न बोला जाए, प्रिय वचन से सब व्यवस्थाएँ बनाई जाएँ। कम से कम आदमी को देने को मिले या न मिले लेकिन उसके लिए कोई भी अप्रिय वचन न बोला जाए।** यह व्यवस्थापकों के लिए औचित्य गुणों का ध्यान रखने पर ही व्यवस्थाएँ अच्छी बनती हैं, सब जगह व्यवस्थाएँ। औचित्य गुण का आप जगह-जगह पर आप implement कर सकते हो...घर में करो, समाज में करो, समूह में करो।

प्रिय वचन और दान - दोनों हैं आवश्यक

किसी भी तरह से प्रिय वचन और दान। दान मतलब जिसको जिस चीज के लिए आवश्यकता

है, वह अगर प्रदान कर दोगे तो वह सन्तुष्ट हो जाएगा। आप उसके माध्यम से किसी को भी सन्तोष दे कर के उसे अपने प्रति अनुकूल बना सकते हो, यह औचित्य गुण है। **इसलिए नैतिक कर्तव्यों में यह औचित्य गुण का पालन करना अत्यधिक महत्वपूर्ण है और यह उन्हीं के द्वारा पालन होगा जो धन के लोभी नहीं होंगे।** कभी-कभी आप कहो कि हम प्रिय वचनों से ही काम चला लेंगे और कुछ भी जेब से निकालेंगे नहीं तो भी काम नहीं बनेगा। सामने वाला आपकी यह चालाकी समझ कर के और आपसे रूठ जाएगा। बच्चा भी समझता है, रोजाना पापा कह देते हैं...हाँ, हाँ, हाँ, हाँ, दिलाएँगे, दिलाएँगे, दिलाएँगे और रोजाना कह देते हैं और कुछ दिलाते हैं नहीं। तब वह रूठ जाएगा तो जो उसको चाहिए उसे देना पड़ेगा। वह दान के साथ में प्रिय वचन होंगे तो वह आपका औचित्य गुण, सबको सन्तोष करने से आपके लिए भी वह नैतिक कर्तव्यों की पूर्णता करने वाला कहा जाएगा।

औचित्य गुण - घर में

आपको यह बात अवश्य ध्यान रखना है कि आज अनेक तरह से जो घर में कलह आदि होते हैं, उनमें इन दोनों चीजों की कमी होती है। हम जिसके लिए जितना धन आदि देना चाहिए, वह नहीं देते और जिसके लिए जो हमें प्रिय वचन बोलना चाहिए, वह नहीं बोलते। इसी कारण से सास की, बहू की, देवरानी की, जेठानी की अनबन होने की ये एक बहुत बड़े कारण होते हैं और जो घर-घर में चलते रहते हैं। होते हैं कि नहीं होते हैं? वह मुझसे बोलती नहीं। सास है तो बड़ी बहू से बोलती है, छोटी बहू से बोलती नहीं। अब सास का क्या बिगड़ जा रहा है? अगर बड़ी बहू से चार बातें करती तो दो बातें छोटी बहू से भी कर ले। नहीं समझ में आ रहा है? लेकिन जब ऐसा हो जाता है कि नहीं, वह बड़ी से तो बात करती है, छोटी से नहीं करती और छोटी को जब यह लग जाता है, तो बस वहीं से बातें बिगड़ते-बिगड़ते बंटवारे की नौबत पर आ जाती हैं। हमें अलग रहना है, चलो जी यहाँ से चलो। मतलब ही क्या ऐसे घर में रहने का? क्या कमी हो गई? औचित्य गुण की कमी हो गई। सास के लिए दो बहू हो, चाहे चार बहू हो, सब बराबर हैं। **यह औचित्य गुण बड़ों के लिए ज्यादा महत्वपूर्ण है क्योंकि बड़ों के द्वारा ही यह कर्तव्य अगर पूर्ण हो जाएगा तो छोटे सन्तुष्ट रहेंगे और इस गुण के माध्यम से ही घर, कोई भी तरह का समूह अच्छे ढंग से चल पाता है।**

औचित्य गुण- school में

यह औचित्य गुण आप लोग अपने-अपने तरीके से इसकी व्याख्या कर सकते हैं। School में भी एक batch होता है या एक classroom होता है और उसमें भी एक teacher होता है और अगर मान लो उसमें 20 या 30 बच्चे हैं और उन बच्चों में भी किसी से teacher बात करते हैं और किसी से नहीं करते हैं तो भी बच्चे बुरा मान लेते हैं। बच्चों के अन्दर एक

Inferiority आने लग जाती है। **यह प्रिय वचन बोलना, यह सबके लिए हर group में बहुत ही बड़ा उन्हें सन्तोष करने का भाव उत्पन्न करना है और यही औचित्य गुण है और इसी के नहीं होने पर कई बार बहुत बड़ी-बड़ी लड़ाइयाँ हो जाती हैं।** उन लड़ाइयों का कारण यही...भाई! तुमने हमें तो कुछ बताया ही नहीं, तुमने हमको कुछ बोला ही नहीं। यह औचित्य गुण के अभाव में बड़ी-बड़ी बातें हो जाती हैं तो यह औचित्य गुण, दान और प्रिय वचन इन दो के माध्यम से ही दूसरों को सन्तोष उत्पन्न कराता है। इसकी व्याख्या अलग-अलग सन्दर्भ में अलग-अलग तरह से की जा सकती है।

सच्चा लोभी

अब सच्चा लोभी कौन है? लोभी तो सभी होते हैं लेकिन वास्तव में सच्चा लोभी कौन है?

स खलु लुब्धो यः सत्सु विनियोगादात्मना सह जन्मान्तरेषु नयत्यर्थम्॥ 18॥

सच्चा लोभी तो वह है, जो धन आदि के होने पर सज्जनों को दान आदि देकर के भी जन्मान्तर में अपने साथ में वह पुण्य ले जाता है, वह धन ले जाता है, सच्चा लोभी तो उसी को जानना चाहिए। इस जन्म में नहीं, अगले जन्म में भी अपना धन साथ लेकर के जाए। ऐसा कैसे हो सकता है? **जो धन का लोभी होगा, वह लोभी अगले जन्म में अपने साथ कुछ भी लेकर के नहीं जा पाएगा लेकिन जो धन का सदुपयोग करने वाला, कर्तव्यों की पूर्ति करने वाला व्यक्ति होगा, वह अपने धन के संविभाग के माध्यम से जो पुण्य अर्जित होगा, उसको वह पर जन्म में लेकर के जाएगा और वहाँ पर भी उसे कभी भी धन-सम्पदा की कोई कमी नहीं पड़ेगी। यह उसके लिए परलोक में धन का ले जाना कहलाता है।** यह सबसे बड़ा लोभी है।

धर्म के लोभ

जैसे आप लोग कहते हो कि महाराज! लोभ करना अच्छी बात नहीं है, फिर भी हम धर्म का लोभ तो कर ही सकते हैं। बार-बार हमें महाराज का आहार कराने का सौभाग्य मिले, ऐसा भी

लोभ तो कर ही सकते हैं। यह **धर्म के लोभ, यह जो हमारे साथ में परलोक में जाने वाले हैं, ऐसे धर्म के लोभ के माध्यम से जीव को हमेशा परलोक में भी धन-धान्य सम्पदा की हमेशा उपलब्धियाँ रहती हैं।** इसलिए ऐसे सच्चे लोभी की प्रशंसा करना और जो अपने लिए दूसरों को कोई भी सन्तोष न दे पाए, वह लोभी अच्छा नहीं। उसके लिए कोई भी प्रशंसा करने की बात यहाँ नहीं कही गई है।

दूसरों के लाभ में अन्तराय न डालें

आगे कहते हैं...

अदातुः प्रियालापोऽन्यस्य लाभस्यान्तरायः ॥ 19 ॥

अब देखो! एक बात यह है, दो चीजें कहीं थी...**दान और प्रियवचन।** अब कोई-कोई ऐसे लोग होते हैं, वचन तो प्रिय बोलते हैं और देते कुछ नहीं हैं। कभी-कभी ऐसा भी हो जाता है कि कोई जरूरतमन्द व्यक्ति हो और किसी के पास गया और खूब अच्छी उसने अच्छे मीठी-मीठी बातें कर ली और उसका सारा time भी ले लिया, उसको आश्वासन भी दे दिया और दिया कुछ नहीं। नहीं समझ में आ रहा है? क्या होगा? यह उसने अपने लिए भी लाभान्तराय कर्म का बन्ध कर लिया जो दूसरों के लाभ में उसने बाधा डाल दी। दूसरे को लाभ मिलता अगर वह उससे स्पष्ट बोल देता कि मैं तुम्हें दे नहीं पाऊँगा। **जो देता तो है नहीं, केवल प्रिय वचनों से ही काम चलाना चाहता है, ऐसा व्यक्ति उस याचक के लिए धोखा देने वाला होता है और उस याचक का लाभ कहीं दूसरे व्यक्ति से मिलना चाहिए था, वह उसको नहीं मिल पाता तो उसके लिए भी वह अन्तराय डाल देता है।** ऐसे लोग होते हैं, बहुत मीठा बोलने वाले होते हैं और उनके आश्वासन में कई लोग महीनों-सालों उलझे रहते हैं, घुमाते रहते हैं और वे घूमते रहते हैं...बस! आज-कल, आज-कल, परसों, अगले हफ्ता, अगले महीने और इस तरह के प्रलोभनों में वह उलझाए रखते हैं और उसके लिए कोई help नहीं करते हैं तो यह भी जानना कि यह उसके लाभ में अन्तराय कर रहे हैं, यह उनके लिए अच्छा नहीं। भविष्य में उन्हें भी अगर किसी से लाभ लेने की जरूरत पड़ेगी तो उनका यह अन्तराय कर्म उनके आड़े आएगा तो उन्हें भी वह लाभान्तराय कर्म के माध्यम से लाभ की प्राप्ति नहीं होगी। **यह लाभान्तराय कर्म का बन्ध ऐसे हो जाता है...दूसरे के लाभ में बाधा नहीं बनना।** अधिकतर जो government officer होते हैं, जो ये जमीनों के काम आदि देखने वाले पटवारी लोग होते हैं या इस तरह के जो ये, जिनकी फाइलें राजस्व विभाग के माध्यम से चलती रहती हैं, उनमें ये उलझनें बनी रहती हैं और ये लम्बे-लम्बे समय इनमें निकलते जाते हैं, ये लाभान्तराय कर्म के बन्ध के कारण होते हैं। यह उन लोगों को अगर पता रहे तो फाइलें जल्दी-जल्दी निपटने लगे और आदमी के काम भी जल्दी-जल्दी बनने

लग जाएँ।

धन का अर्जन भी जरुरी है

सदैव दुःस्थितानां को नाम बन्धुः ॥ 20 ॥

अब यहाँ कहते हैं...देखो! अगर कोई हमेशा ही गरीब ही बना रहता है, दरिद्र ही बना रहता है तो धन की इतनी बड़ी उपयोगिता है कि गरीबों का कोई बन्धु भी नहीं होता है। क्या समझ में आ रहा है? **'सर्वे गुणाः काञ्चनमाश्रयन्ति'** एक उक्ति है। **काञ्चन** अर्थात्? धन, वैभव, स्वर्ण आदि। **जिसके पास में धन हो, वह चाहे अन्धा हो, चाहे काना हो, चाहे लंगड़ा हो, सब उसका सम्मान करेंगे और आदमी कितना ही गुणवान बना रहे लेकिन अगर उसके पास में धन नहीं है, कोई उसके सामने उसकी सहायता करने नहीं आता, कोई उसका बन्धु नहीं बनता, यह भी एक नीति है। व्यवहारिकता में यह सब देखने को मिलता है।** यहाँ वही सब बातें बताई जा रही हैं जो व्यवहारिकता में देखने को मिलती हैं। कौन बन्धु होगा जो हमेशा दरिद्रता की स्थिति में पड़ा रहे? जो उसके अपने बन्धु होंगे, वह भी छोड़-छोड़ कर के धीरे-धीरे खिसक लेते हैं और वह बेचारा अकेला रह जाता है, जिसे अपने कर्मों के फलों से कुछ दुर्दिन देखने पड़ते हैं। हमेशा दरिद्र रहने वाले व्यक्तियों का भी कोई बन्धु नहीं होता है, इसलिए धन का अर्जन भी जरूरी है। **दरिद्रता अच्छी नहीं है, सन्तोष करना दरिद्रता में अच्छी बात नहीं है। धन का भी अर्जन करना है और अर्जन करके उसका संविभाग भी करना है।** यह बड़े पुरुषार्थ की बात है, इसी का नाम तो पुरुषार्थ हुआ। धर्म का पुरुषार्थ यही कहलाएगा कि हम नैतिक कर्तव्यों का पूरा का पूरा पालन करें, इसी का नाम है **धर्म पुरुषार्थ।** आज तक आप सुनते रहते होंगे... धर्म-अर्थ-काम, ये पुरुषार्थ हैं। ये पुरुषार्थ, कब कहलाएँगे पुरुषार्थ? धर्म पुरुषार्थ की बात कही जा रही है। अर्थ पुरुषार्थ की बात अभी आगे आएगी।

धन का अर्जन जरूरी क्यों?

- गरीबों का कोई बन्धु नहीं होता
- दरिद्रता अच्छी नहीं होती
- दरिद्रता में सन्तोष करना अच्छी बात नहीं होती

धन का अर्जन एवं संविभाग करना ही धर्म पुरुषार्थ है

धर्म पुरुषार्थ तभी पुरुषार्थ बनता है, जब हमने कमाया तो अपनी मेहनत से, अपनी लगन से, अपने परिश्रम से और दिया हमने उसके लिए बिना किसी शर्त के, जो उसकी जरूरतमन्द लोग हैं उनको दे दिया, इसी का नाम धर्म पुरुषार्थ है। आप कहोगे...कमाएँ हम और दे तुम्हें! यह कौन

सा न्याय है? यह न्याय ही सबसे बड़ी नीति है जो धर्मात्माओं के अन्दर तब आएगी, जब वह धर्म पुरुषार्थ को समझेंगे, धर्म इसी का नाम है। **जो लोग कहते हैं कि क्या मन्दिर में ही जाने का नाम धर्म है, तो हम उनके लिए कह सकते हैं- हाँ! नहीं है। मन्दिर में जाने का नाम धर्म नहीं है। आप अच्छा कमाइए और उसका संविभाग जरूरतमंद लोगों के साथ कीजिए, यह**

भी धर्म है। इसलिए धन होना भी जरूरी है लेकिन धन का लोभी होना जरूरी नहीं है, यह धर्म पुरुषार्थ हमें सिखाता है।

Demand पर command रखो

नित्यमर्थयमानात् का नाम नोद्विजते॥ 21॥

कहते हैं...देखो! जहाँ दाता की बात की जाती है, वहाँ याचक की भी बात कुछ बता ही देते हैं। याचक भी ऐसा न हो कि हमेशा याचना ही करता रहे। नित्य ही अर्थ को चाहने वाला या नित्य ही माँगने वाला, ऐसे याचक से भला कौन उद्वेग को प्राप्त नहीं हो जाएगा मतलब कौन ऊब नहीं जाएगा? **इसलिए याचना भी हमेशा नहीं करनी चाहिए।** जिन व्यक्तियों को धन आदि की जरूरत पड़ती है, वह बार-बार अगर धन को माँगते हैं और वह धन आदि को उन्हीं-उन्हीं व्यक्तियों से वह बार-बार माँग कर के अपना काम चलाते हैं तो उस ऐसी स्थिति में वे धनिक भी ऊब जाते हैं, देते नहीं हैं। यह तो आपके अनुभव की बातें हैं न? अतः **धन माँगने का भी प्रयोजन**

कभी-कभार ही अगर हो तो ही याचना करनी चाहिए अन्यथा याचना करना ही अपने आप में बहुत बड़ा **अभिशाप है, दुर्गुण है।** ऐसे धन की याचना से जब लोग ऊब जाते हैं तो हमें यह ध्यान रखना है कि कोई भी मनुष्य, चाहे वह किसी भी तरह का क्यों न हो, सदा माँगने वाले से हर लोग दुःखी रहते हैं। इसलिए, हमेशा घर में भी यह बात अगर लागू की जाए कि देखो भाई! हर समय demand अच्छी नहीं होती है। बेटा हर समय पापा से demand न रखे, पत्नी हर समय पति से कोई demand न रखे या पति भी पत्नी से ज्यादा demand न रखे तो क्या होगा? उसका mind सही रहेगा। नहीं समझ आया? Demand से command नहीं रह जाती है। Demand ज्यादा होती है, तो फिर उस व्यक्ति के ऊपर फिर आपकी command नहीं रह जाती है। इसलिए घर को सही ढंग से चलाने के लिए, गृहस्थी को सही ढंग से चलाने के लिए demand कम होनी चाहिए।

बार-बार माँगने से किसी भी व्यक्ति की प्रियता समाप्त हो जाती है

वे घर बड़े स्वर्ग कहलाते हैं, सुखी कहलाते हैं जहाँ कभी किसी को कुछ माँगना ही नहीं पड़ता और सब काम होता रहता है। ऐसा भी हो सकता है क्या? होता है। आप सोचो! अगर ऐसा हो तो कितना अच्छा हो कि किसी को कुछ demand करना ही नहीं पड़े और सब काम हो जाएँ, घर में सब चीजें आ जाएँ, सबसे सब काम मिल जाए, समय पर सब कुछ हो जाए। इस तरह की मांग भी कई बार घर के ही लोगों को घर के सदस्यों के प्रति ऊब उत्पन्न करा देती है। चाहे वे कितने ही अपने घनिष्ठ सम्बन्धी क्यों न हों। **अत्यधिक मांग, बार-बार मांग अच्छी नहीं होती है, यह हमेशा ध्यान में रखना है। केकई ने भी एक ही बार मांगा था और रामायण लिख गई।** एक बार माँगने में जब इतनी बड़ी रामायण लिखी जा सकती है, तो बार-बार माँगने में महाभारत हो जाए तो कोई बहुत बड़ी बात नहीं है। इसलिए जितनी जब बहुत ज्यादा आवश्यकता पड़ जाए, उसके बिना काम ही न बने तब कुछ कहना चाहिए। ऐसे घर में अगर सदस्य हो तो बड़े अच्छे माने जाते हैं। कई बेटे-बेटियाँ ऐसे होते हैं जो घर में कुछ बोलते ही नहीं, कुछ कहते ही नहीं हैं। मम्मी-पापा से कुछ demand ही नहीं करते तो मम्मी पापा चिन्ता करते हैं...कितना सुन्दर बेटा है, कितना भोला है, कभी कुछ कहता ही नहीं, महाराज! कभी कुछ मांगता ही नहीं और इसका जो दूसरा भैया या दूसरी बहन जब देखो तब...यह mobile खराब हो गया, यह नई company का चाहिए, यह scooty चाहिए, यह चाहिए, यह shirt, यह skirt. यह

demand भी उस बच्चे की जो एक प्रियता है, घर में एक बच्चों की प्रियपना रहता है न? जो सबके लिए प्रिय होते हैं, demand वह **प्रियता में कमी लाती है। अगर यह बात बच्चों को समझाई जाए तो बच्चे भी सीख सकते हैं। इन नीतियों के आधार पर चलकर के बच्चे भी घर में सबके प्रिय बनकर रह सकते हैं।** कई बार होता है, दो बच्चे होते हैं, चार बच्चे होते हैं, एक बच्चा कहता है- हमारे लिए तो कहते हैं तब भी नहीं सुनते और इनके लिए कुछ कहते नहीं हैं तब भी इनके पीछे पड़े रहते हैं...बताओ क्या चाहिए? क्या चाहिए? क्या चाहिए? उसका मूल कारण क्या होता है? यही होता है। जो बच्चे माँगते नहीं हैं, उनके लिए माता-पिता बार-बार देने की कोशिश करते हैं और जो बार-बार माँगते रहते हैं, उनकी अनदेखी करते हैं, अनसुनी करते हैं। समझ आ रहा है? इसलिए हमेशा माँगने वालों से व्यक्ति ऊब जाते हैं। इस सूत्र का भी implement सबके लिए होना चाहिए।

इन्द्रियों और मन को नियमित करना ही तप है

अब आगे कहते हैं, दान और त्याग के बारे में बहुत कह दिया, थोड़ा सा तप के बारे में बताते हैं-

इन्द्रियमनसोर्नियमानुष्ठानं तपः ॥ 22 ॥

कहते हैं- **तप क्या वस्तु है? इन्द्रिय और मन के लिए जो हम नियम पूर्वक अनुष्ठान करते हैं, उसी का नाम तप है।** क्या कहा? इन्द्रियाँ पाँच होती हैं और मन होता है। इनके लिए इसको नियमित करने के लिए जो अनुष्ठान करते हैं, नियम का मतलब होता है...**इसको बांधने के लिए जो हम अनुष्ठान करते हैं या इसको हम किसी एक काम में लगाने के लिए जो अनुष्ठान करते हैं, उसका नाम ही तप हो जाता है।** इसलिए पहले कहा था जब बच्चे पढ़ते हैं तो विद्यार्थियों के लिए अध्ययन करना ही तप है। विद्यार्थियों का सबसे बड़ा तप क्या? उनका अध्ययन करना। वे अगर study कर रहे हैं तो यही उनकी सबसे बड़ी तपस्या है क्योंकि इसमें वे अपनी इन्द्रियों को भी नियंत्रित कर रहे हैं और अपने मन को भी नियंत्रित कर रहे हैं। **जिन कार्यों से अपना इन्द्रिय और अपने मन दोनों नियंत्रित रहे, नियम से बंधे रहे, उसी का नाम तप है।** जब आप संकल्प लेते हैं तो क्या करते हैं? इसी तरह से

कोई नियम लेकर के ही उस संकल्प से बंधे रहने का प्रयास करते हैं और उस तप के माध्यम से आपके मन की इच्छाएँ control हो जाती हैं। जब आप किसी एक अनुष्ठान में, एक काम में अपना ज्यादा time लगाते हैं तो उसके माध्यम से आपके अन्दर जो तप होता है, वही तप आपकी किसी न किसी progress में काम आता है। इसलिए नियम के अनुष्ठान में मन और इन्द्रियों को लगाए रखने का नाम क्या हो गया? तप।

नियम किसे कहते हैं?

अब नियम क्या वस्तु है?

विहिताचरणं निषिद्धपरिवर्जनं च नियमः ॥ 23 ॥

देखो! कितनी अच्छी परिभाषायें हैं, ये सबके लिए बहुत general सूत्र हैं। वे नियम नहीं कि भाई! तुम रात्रि-भोजन का त्याग कर दो कि तुम जो है, यह कर दो, वह कर दो। यह सब चीजें तो इसी सार्वभौमिक परिभाषा में गर्भित हो जाएँगी लेकिन इस परिभाषा को कहीं पर भी लगाया जा सकता है। **'विहिताचरणं निषिद्धपरिवर्जनं च नियमः'** **नियम किसे कहते हैं? जो आचरण जिस समय पर करना हो उसको करें, जो आचरण कहा गया है करने के लिए, उसको करें और जो निषिद्ध है उसको छोड़े, इसका नाम ही क्या है? नियम है।** मान लो कोई बच्चे का exam का time आ गया, अब exam के time पर बच्चे से कहा जाता है...खेलो नहीं, time waste नहीं करो, पढ़ो, पढ़ो, पढ़ो, exam आ गये, exam आ गए। **उस बच्चे के लिए यही बार-बार कहना, उसके लिए एक बहुत बड़ा tension का काम बन जाता है।** अगर बच्चा नियम की परिभाषा यह जाने तो वह अपने आप समझ लेगा कि यह हमारे लिए निषिद्ध का छोड़ना, **निषिद्ध जो चीजें हैं, उनसे हमें बचना है और क्या करना है? जो कहा गया है, वह आचरण हमें करना है।** वह अगर अपनी स्वेच्छा से करने लग जाए तो यह उसकी तपस्या बन जाती है। अगर उससे बार-बार कहा जाता है और फिर भी वह नहीं करता है तो इसका मतलब है कि वह तप नहीं कर रहा है। **तपस्या करने वाला जो विद्यार्थी** होगा, वह हमेशा वह आचरण अपने आप करता चला जायेगा जो उसे करना चाहिए। इसलिए जो अच्छा विद्यार्थी होता है वह समय पर हमेशा पढ़ता चला जाता है और exam के time पर भी बिल्कुल relax रहता है। Exam के time पर भी वह सिर्फ subject को याद नहीं करता है, दोहराता है। याद तो उसने पहले कर लिया होता है। अच्छे विद्यार्थी के लक्षण होते हैं...exam के time पर सिर्फ revise किया जाए। लेकिन जो विद्यार्थी पूरी वर्ष भर नहीं पढ़ते हैं, वह exam के time पर याद करने की कोशिश करते हैं तो exam के time पर ज्यादा याद नहीं होता। वह आपके लिए निषिद्ध कार्य है और वह आपने इसलिए किया क्योंकि आपने समय पर जो तप करना चाहिए था, वह

नहीं किया।

बच्चों के लिए नियम क्या?

इसलिए, बच्चे अगर समय पर जो कहा जा रहा है, वह करते रहें और जो उनके लिए निषिद्ध चीजें हैं, उससे बचते रहें तो उनके लिए इस नियम के अनुष्ठान में लगे रहना ही उनका तप हो जाता है। जब बच्चे से कहा जाता है...बेटा! ज्यादा mobile पर अपनी आँखें मत लगाओ, ज्यादा mobile game के चक्कर में मत पड़ो। यह क्या है? ये निषिद्ध जो चीजें हैं, उनको रोका जा रहा है, इसी का नाम नियम है। **आचरण क्या करना?** इससे दूर हटो, इससे तुम्हारा दिमाग भी खराब होगा, आँखें भी खराब होंगी। यही नियम अगर उसे बचपन से बता दिया जाए कि जो चीजें निषिद्ध हैं, उन पर अपने को focus नहीं करना। जो चीजें करने योग्य हैं, वही करना तो बच्चे को बड़े होने के बाद कहने की नौबत ही न आए कि बेटा! mobile को दस-दस घण्टे, आठ-आठ घण्टे नहीं देखा जाता है, यह नुकसान देह है। हम बच्चों को कभी यह नियम नहीं सिखाते। **नियम का मतलब?** महाराज के पास ले जाएँगे...महाराज! इसको कोई नियम दे दो। क्या नियम दे दो? मन्दिर जाया करे, नियम दे दो, रात में न खाया करे, नियम दे दो। नियम उसका क्या होना चाहिए? **उसको यह बताना कि क्या चीजें निषिद्ध हैं और क्या चीजें विधेय हैं।** यह बात बचपन से अगर बच्चों को बताई जाए, यह करने योग्य है और यह करने योग्य नहीं है, तो वह अपने आप महाराज के पास आकर के नियम ले लेगा। जैसे-जैसे उसकी उम्र होगी... अब हमें यह नियम, अब हमें यह नियम, अब हमें यह नियम। यह समझदारी इस नियम की परिभाषा से बच्चों में आ सकती है।

शास्त्र पढ़ना क्यों जरूरी है?

विधिनिषेधावैतिह्यायत्तौ ॥ 24 ॥

कहते हैं... **'एक विधि रूप कर्तव्य होता है और एक निषेध रूप अकर्तव्य होता है'** और इन दोनों से ही आगम का निर्णय होता है। मतलब यह सब निर्णय जो हैं, आगम के अधीन होते हैं, हमें क्या करना चाहिए और क्या नहीं करना चाहिए। **आगम का मतलब होता है...इसी तरह के ऋषियों-मुनियों के बनाए हुए शास्त्र, जिनसे हमें हेय और उपादेय का ज्ञान होता है।** क्या हमें करने योग्य है और क्या करने योग्य नहीं है? यह do's-don'ts का जो हमें knowledge हर जगह दिया जाता है, यह knowledge हमें इसी आगम के माध्यम से मिलता है। इसलिए आगम भी पढ़ना चाहिए, शास्त्र भी पढ़ना चाहिए। बच्चों के लिए, बड़ों के लिए, आज समाज के लोगों के लिए शास्त्र पढ़ना क्यों जरूरी है? हम कह देते हैं- जिनवाणी पढ़ो बेटा! क्यों पढ़ो? भगवान की वाणी है, उसके बिना तुम्हारे ज्ञान नहीं आएगा। लेकिन हम उनको यह समझाएँ...

शास्त्र पढ़ने से हमें यह पता पड़ता है, क्या करने योग्य है और क्या करने योग्य नहीं है? हो सके तो अपने बच्चों के लिए कभी यही कहना कि कोई धर्मशास्त्र पढ़ो या न पढ़ो लेकिन बेटा एक बार नीतिवाक्यामृत जरूर पढ़ना। क्या सुना? क्या दिक्कत है? इतना कठिन तो नहीं है कि वह अपने मन से ही पढ़े तो समझ में न आए और अब तो इतने शिक्षक तैयार हो जाएँगे कि बच्चों को, group बना कर के भी जो है, बच्चों को यह शास्त्र पढ़ाया जा सकता है। सबके लिए यह एक बार जरूर पढ़ना चाहिए। विधि और निषेध का ज्ञान हमें कहाँ से होगा? शास्त्रों से ही होगा। इसलिए शास्त्र पढ़ना जरूरी होता है।

कौन से ग्रन्थ पढ़ने योग्य हैं?

तत्खलु सद्भिः श्रद्धेयमैतिह्यं यत्र न प्रमाणवाधा पूर्वापरविरोधो वा॥ 25॥

कहते हैं...आगम कौन सा आगम होता है? शास्त्र कौन सा आगम होता है? **सज्जनों के द्वारा वही आगम श्रद्धेय है, जिसमें प्रमाणों से कोई बाधा उत्पन्न न हो और जिसमें कोई पूर्वापर विरोध की बातें न हो** यानि जिस ग्रन्थ में पूर्व और बाद में कही हुई बातों के बीच में कोई विरोध उत्पन्न न हो और जिस ग्रन्थ के अन्दर किसी भी तरह से प्रत्यक्ष और परोक्ष प्रमाण से कोई बाधा उत्पन्न न हो, वही ग्रन्थ हमारे लिए अवश्य पढ़ने योग्य होते हैं।

मन और इन्द्रियों के नियंत्रण से ही किसी भी फल की प्राप्ति होती है

हस्तिस्नानमिव सर्वमनुष्ठानमनियमितेन्द्रियमनोवृत्तीनाम्॥ 26॥

देखो! जिसकी इन्द्रिय और मनोवृत्तियाँ नियमित नहीं हैं...**नियमित का मतलब है कहीं पर आपका मन focus नहीं होता है, कोई भी काम आप नियमितता के साथ में नहीं करते हैं, आपकी इन्द्रिय और मनोवृत्तियाँ चंचल हैं तो उनके सभी अनुष्ठान कैसे होंगे? हस्ति स्नान की तरह हैं,** मतलब? हाथी तालाब में गया, नहा करके आया और फिर बाहर निकलते ही उसने

फिर से अपने शरीर पर धूल डाल ली। जितना साफ सुथरा हुआ था, वह फिर से मैला हो गया। **कोई भी तरह का धर्म अनुष्ठान या किसी भी तरह का आपका लौकिक कार्य तब आपको फल देगा जब आपकी इन्द्रिय और मन concentration के साथ में उस पर focus करते हुए उस कार्य को करें।** इसलिए मन का नियमित होना भी बहुत जरूरी है। **जिनका मन चंचल होगा, वे किसी भी कार्य में अपने मन को नहीं लगा पाते हैं तो उनके सामने की परेशानियाँ बढ़ती चली जाती हैं।** शरीर में रोग भी बढ़ते चले जाते हैं। शरीर में अनेक तरह के रोगों का कार्य कब उत्पन्न होता है? जब मन अपने control में नहीं रहता। मन अगर control में नहीं होगा तो अपने विचार, अपनी भावनाएँ control में नहीं रहेंगी। तब हम किसी भी विचार से परेशान हो जाएँगे। हम किसी भी तरह की भावनाओं से अपने मन को परेशानी में डाल देंगे।

मन के control से शरीर का control स्वतः हो जाता है

यह मन की controlling करना हर किसी के लिए अनिवार्य है अन्यथा वह व्यक्ति के लिए कोई भी कार्य में सफलता नहीं मिलती। वह जितनी मेहनत करता है, वह सारी मेहनत मन की चंचलता के कारण से बेकार हो जाती है। **यह चंचल चित्त वालों का यहाँ पर काम बताया जा रहा है। चंचल चित्त वालों के लिए क्या हानियाँ होती हैं, बताई जा रही हैं।** इसलिए आगम में लगने से भी मतलब इस तरह के **शास्त्र पढ़ने से भी हमारे चित्त की चंचलताएँ दूर होती हैं।** मन लग रहा है अर्थात् आप तप कर रहे हैं, आप अपने मन को नियमित कर रहे हैं। यह आप अपने ही मन को सुखी बनाने का कार्य कर रहे हैं। **जब आपका मन आपके under में होता है तो शरीर भी अपने आप सुखी होने लग जाता है, शरीर भी तप करने लग जाता है।** बताओ! आप यहाँ बैठे होगे तो मन से बैठोगे तब बैठ पाओगे कि शरीर जब आपका साथ देगा, तब बैठ पाओगे? अगर मन है तो शरीर को बैठना ही पड़ेगा। कितना भी कहीं गर्मी हो रही है, कष्ट हो रहा है, धूप आ रही है, हवा आ रही है लेकिन क्या है? नहीं! अभी बैठना है, अभी सुनना है, अभी मन को लगाना है, अभी बहुत अच्छी परिचर्चा चल रही है, अभी उठना नहीं है। सब कुछ कष्ट होते हुए भी वह मन को वहाँ शरीर बैठाए रखेगा। समझ आ रहा है? मन के लिए अगर नियंत्रण हो जाता है, तो **शरीर का नियंत्रण मतलब इन्द्रियों का नियंत्रण स्वतः हो जाता है।**

मन को नियंत्रित करने का उपाय

मन को नियंत्रण करना इसलिए जरूरी होता है और अगर कभी-कभी देखा जाता है कि अगर आपने **शरीर को भी नियंत्रित कर लिया तो भी मन को नियंत्रण किया जा सकता है।** नहीं समझ आया? मान लो आप मन बना कर बैठ गए, संकल्प लेकर बैठ गए कि नहीं! इस शरीर को मैं यहाँ से एक घण्टे से पहले हिलाऊँगा नहीं, उठाऊँगा नहीं। अब मन को घूमने दो...क्या करेगा मन? **धीरे-धीरे मन अपने आप नियंत्रित हो जाएगा। शरीर के नियंत्रण से भी मन में**

नियंत्रण आता है और मन के नियंत्रण से भी शरीर में नियंत्रण आता है। समझ आ रहा है? आता है कि नहीं आता है? आता है। जिसका मन नियंत्रित नहीं है, तो वह केवल शरीर को बिठाने का अभ्यास करने लगे। मैं आधा घण्टा, 20 minute इस शरीर को एक स्थिति में बिठा कर के बस! अपने वचनों को किसी भी एक चीज में लगाऊँगा या किसी भी एक पुस्तक में लगाऊँगा, किसी भी एक जगह वह लगाने का मन बना ले बस! **जिसको मन को नियंत्रित करने का उपाय सीखना है,**

तो यह बताया जा रहा है। mobile में नहीं लगाना, ऐसे शास्त्र में लगाना। कोई भी ऐसा ग्रन्थ ले लेना जो हमें थोड़ा भी अच्छा लगता हो, उस किताब को लेकर के, उस ग्रन्थ को लेकर के बस! हमें पढ़ना है...20 minute तक हमें पढ़ना है। 20 minute तक हमें केवल **ओं अर्हं नमः, ओं अर्हं नमः, ओं अर्हं नमः** करना है। हमें नहीं मालूम इससे क्या होना है? हमें क्या करना है? हमें मन को नियमित करने के लिए शरीर को नियमित करना है।

मन को अच्छे motivational object देने चाहिए

हर चीज का गुणा भाग लगाने की जरूरत नही है। क्या करना है? तप करना है, इच्छा को रोकना है। मन की चंचलता को रोकना है, तो शरीर को स्थिर रखने के लिए आप संकल्प ले लो, 20 minute हम कुछ भी और कोई भी काम में नहीं लगेंगे, एक काम में लगे रहेंगे बस! यह शास्त्र पढ़ रहे हैं, यह वाला प्रवचन सुन रहे हैं या हम यह वाला मंत्र पढ़ रहे हैं या हम णमोकार मंत्र पढ़ रहे हैं। हमें कुछ नहीं करना! बस! हम णमो अरिहंताणं, णमों सिद्धाणं पढ़ते रहें- 20 minute तक। अपने आप आपके मन के अन्दर स्वस्थता आने लगेगी और मन नियंत्रित हो जाएगा। **यह मन को नियंत्रित करने का वह उनके लिए तरीका है, जो मन को किसी भी तरह से रोक नहीं पाते हैं।**

मन जाए तो जान दे, तू मत जाय शरीर। क्या सुना? एक दोहा बता रहा हूँ-

मन जाए तो जान दे, तू मत जाय शरीर।
उतरी धरी कमान तो, कहा करेगा तीर।

क्या सुना? कमान जानते हो? कभी धनुर्धारी तो बने ही नहीं, तीरंदाजी तो कोई करते ही नहीं हो। धनुष की कमान होती है, अगर वह कमान उतरी रखी है और एकदम से तीर चढ़ा भी दोगे उसके ऊपर तो वह कहीं नहीं चलने का, वह कहीं नहीं जाने का। मतलब कि तीर उतनी दूर जाएगा, जितनी दूर उसके लिए कमान खींचेगी। **'उतरी धरी कमान तो कहा करेगा तीर'** कमान को उतार कर रख दिया हमने। तीर कौन है? मन तीर की तरह तीक्ष्ण है, कहीं भी चला जाता है। लेकिन अगर हमने उसको एक जगह बिठा दिया तो मानो हमने उसकी कमान उतार दी और कमान उतर गई तो वह धीरे-धीरे नियंत्रित हो जाएगा। उसकी गति ज्यादा नहीं जाएगी। बस! उसके सामने विषय अच्छे, object अच्छा होना चाहिए। **जो आपके लिए motivation दे, जो आपके परिणामों में विशुद्धि लाए...ऐसी किताबें, ऐसी चीजें अपने सामने रखो, ऐसी ही बातें सुनो और उसके माध्यम से 20 minute बैठ कर के बस!** आप **केवल ज्ञान और ध्यान का एक कार्य करो।** यह मन को नियंत्रित करने का तरीका बताया जा रहा है। नियम हमें चंचलता से बचाने के लिए होते हैं। इसलिए, नियम लेने वाले व्यक्तियों के लिए यदि आपने देखा होगा, उन्हें नियम को पूरा करना है तो वे करते ही हैं किसी न किसी तरीके से। पाँच माला का नियम ले लिया, चार माला का नियम ले लिया तो अब वे नियम करेंगे ही। भले ही मन लग रहा हो, नहीं लग रहा हो। नहीं लग रहा है तो भी उसे आप गलत मत समझो। आप मजाक बना सकते हो, व्यंग कर सकते हो कि भाई! देखो! माला फिर रही है हाथ में और दिमाग कहीं और चल रहा है। भैया! कुछ भी चल रहा हो, **उतनी देर तक के लिए अगर वह बैठा है, तो कहीं न कहीं वह अपने मन को नियंत्रित कर रहा है। आप उसको एकान्त रूप से गलत मत समझो।** यह नियम का मतलब होता है। इसलिए नियम लिए जाते हैं ताकि हम उतने समय को नियम से उस कार्य में लगा पाएँ। **ये नियम हमें चंचलता को बचाने के लिए होते हैं।** इसलिए यहाँ कहा जा रहा है कि चंचल चित्त वालों के लिए कोई भी काम अच्छा नहीं बनता। इसलिए हर काम को एकाग्रता से करने पर ही उस काम में अच्छा result आता है।

ज्ञान के साथ आचरण भी जरूरी हैं

दुर्भगाभरणमिव देहखेदावहमेव ज्ञानं स्वयमनाचरतः ॥ 27 ॥

कहते हैं...ऐसा ज्ञान जिसका आचरण खुद तो नहीं करता, क्या सुना? **ऐसा ज्ञान जो किसी विद्वान के पास में है और वह उस आचरण को खुद तो नहीं करता तो उसके लिए भी वह ज्ञान जो उसे सही कार्य में नहीं लगाता, वह कैसा हो जाता है? दुर्भग के आभरण की तरह हो जाता। दुर्भग का मतलब होता है...कोई दुर्भाग्यशाली व्यक्ति हो, कोई कुरूप हो या दुर्भाग्यशाली हो,** बिल्कुल ही कहना चाहिए दरिद्री हो और उसके लिए आभरण पहना दिए जाएँ

तो वह आभरण उसके देह को खेद ही उत्पन्न करने वाले होंगे मतलब उसके ऊपर भार स्वरूप होंगे, उसे शरीर में क्लेश देंगे। नहीं समझ आया? कई बार इस तरीके के भी लोग दिखाई दे जाते हैं जो किसी भी तरह की वेशभूषा पहन ले, साज-सज्जा कर ले, अच्छी उनकी शक्ल दिखाई नहीं दे सकती है। उनको कहते हैं...**दुर्भग नाम कर्म के उदय से कुछ ऐसे भी मुख, शरीर आदि प्राप्त होते हैं।** यहाँ मत देखो, यहाँ कोई नहीं है। यहाँ तो सब अच्छे सुभग वाले हैं। यहाँ जो बैठे हैं, वे सब सौभाग्यशाली हैं, वे तो सब और कहीं मिलेंगे। दुर्भग का मतलब? कुछ ऐसे लोग कभी-कभी दिखने में आ जाते हैं, जो कितने भी अच्छे-अच्छे आभूषण अगर पहन ले, उनकी कहना चाहिए शरीर की अंग-उपांग की इस तरीके की बनावट होती है कि उनके ऊपर कोई भी आभरण भी शोभा को प्राप्त नहीं होते हैं। बहुत अच्छा सोने का हार भी हो, वह जैसा आपके गले में शोभित हो रहा है वैसा सबके गले में हो, कोई जरूर नहीं है। ऐसे ही बहुत ऐसा भी ज्ञान होता है, **जब व्यक्ति खुद आचरण में नहीं लाता तो वह ज्ञान उसके लिए खेद का कारण बन जाता है, क्लेश का कारण बन जाता है। मतलब देह पर जैसे बोझ हो गया आभरण, ऐसे ही मन के ऊपर वह ज्ञान बोझ हो जाता है,** जिस ज्ञान में उस ज्ञान के अनुरूप आचरण नहीं होता है। इसलिए कहा जाता है- ज्ञान और आचरण, ये दोनों ही जरूरी हैं। ज्ञान के बिना हम अन्धे होते हैं और आचरण के बिना हम लंगड़े होते हैं। नहीं समझे? **ज्ञान के बिना हम अंधे होते हैं और आचरण के बिना हम लंगड़े होते हैं।**

ज्ञान और चारित्र की महिमा

मानो किसी **जंगल में एक अन्धा व्यक्ति है और जंगल में आग लगी हुई है।** कैसे निकलेगा जंगल से? निकल पाएगा? और वहीं पर कल्पना करो कि एक लंगड़ा व्यक्ति है, लंगड़े व्यक्ति के पास में आँख है। उसको भी दिख रहा है कि जंगल में आग लगी है, वह भी दौड़ना-भागना चाह रहा है। वह भी जंगल पार नहीं कर पाएगा और अन्धा व्यक्ति है, उसको भी सुनने में आ रहा है कि जंगल में आग लगी है। पैर हैं, दौड़-भाग कर रहा है लेकिन वह भी पार नहीं कर पाएगा। क्या तरीका है? अब वह अन्धा कहे कि भाई! मैं दौड़ सकता हूँ और लंगड़ा कहे कि भाई! मैं दौड़ नहीं सकता तो वह जो है, अन्धा अपनी अन्धता पर कोसता रहे और लंगड़ा अपनी लंगड़ेपने पर कोसता रहे तो दोनों कोसते रह जाएँगे। **युक्ति क्या है? अन्धे के कन्धे पर अगर लंगड़ा बैठ जाए और लंगड़ा उसको रास्ता बताता चला जाए तो दोनों उस जंगल से पार निकल**

जाएँगे। ज्ञान और चारित्र की महिमा को समझने के लिए यह उदाहरण हमेशा याद रखना। **ज्ञान होते हुए भी अगर वह चलने के लायक नहीं है तो वह ज्ञान भी बोझ बन जाता है और चलने की क्षमता होते हुए भी ज्ञान नहीं है तो वह अन्धे की तरह असमर्थ हो जाता है।** इसलिए कहा गया...**ज्ञान के साथ में आचरण या क्रिया करना भी जरूरी होता है।**

बिना आचरण वाले कथावाचक लोक में सुलभ हैं

सुलभः खलु कथक इव परस्य धर्मोपदेशे लोकः ॥ 28 ॥

सुन रहे हो? ये बहुत अच्छी-अच्छी नीतियाँ हैं। क्या कहते हैं? ऐसे कथावाचक बहुत सुलभ हैं, जो दूसरों के लिए लोक में धर्म का उपदेश देते रहते हैं। **'पर उपदेश कुशल बहुतेरे'** कथावाचक की तरह, **'कथक इव'** मतलब कि हर कोई कथावाचक बन सकता है। **कथावाचक बनने के लिए कोई आचरण की आवश्यकता नहीं है।** आपको कथा करनी है, भगवान की कथा करने के लिए कहीं भी बैठ जाओ...चलो भैया! मैं भगवान की कथा सुनाता हूँ, मैं राम की कथा सुनाता हूँ, हनुमान की कथा सुनाता हूँ। कोई भी बैठ जाएगा कथा करने के लिए, यह सुलभता से मिल जाते हैं, कथक जो आज देखने में भी आ रहे हैं। मतलब उस जमाने में भी कथक रहते होंगे, जब आचार्यों ने ग्रन्थ लिखे होंगे। **कथावाचक की तरह धर्म का उपदेश देने वाले लोक में लोग सुलभ है।**

तप और त्याग से उत्तम संपत्ति प्राप्त होती हैं

प्रत्यहं किमपि नियमेन प्रयच्छतस्तपस्यतो वा भवन्त्यवश्यं महीयांसः परे लोकाः ॥ 29 ॥

यहाँ कहते हैं- **'प्रत्यहं' अर्थात्** प्रतिदिन, **'किमपि नियमेन'** कुछ भी नियम से, **'प्रयच्छत' अर्थात्** दान देना अथवा तपस्या करना। **किसी भी नियम के माध्यम से कुछ भी थोड़ा बहुत देने वाले और किसी भी तरह के नियमों से कोई भी अपने मन और इन्द्रियों को बाँधने वाले लोग अवश्य ही इस लोक में 'महीयांसः' अर्थात् महान सम्पत्तियों के धारक हो जाते हैं।** कितने बड़े-बड़े लोग हो, कितने ही बड़े-बड़े अमीरपति हो और अरबपतियों की श्रेणी में आने वाले जो लोग हो, आप उनसे पूछना कि वे किस तरह से तप करते हैं? और किस तरह से त्याग करते हैं? दोनों काम करते हैं, तभी होता है काम। **जो आदमी जितना धन का ज्यादा संग्रह भी करता है, वह आदमी आप देखोगे, उतने बड़े-बड़े दान आदि के कार्य भी करता है।** जितने बड़े-बड़े लोग होंगे, उनकी न जाने कितनी स्कूलें, कितनी अनाथालय, hospital, न जाने क्या-

क्या चीजें चल रही होती हैं क्योंकि वह कुछ न कुछ धन का इस तरह से त्याग करते रहते हैं और उसके बावजूद भी अपने काम पर पूरा focus रखते हैं। इसलिए जो प्रतिदिन कुछ न कुछ इस तरह का तप और त्याग करेगा, वही आगे चलकर के बड़ा बनेगा। यह बच्चों को समझाना चाहिए...**बेटा! बड़ा बनने के लिए कुछ न कुछ देना और कुछ न कुछ नियम से अपने मन को बाँधना, यह जरूरी है। ये दो चीजें अगर तुम्हारे जीवन में रहेंगी तो तुम बहुत बड़े आदमी बन जाओगे।** बड़े आदमी बनने के सपने तो हर कोई अपने बेटों को बताता है, यह नियम नहीं बताता। बच्चों के लिए ये नियम आवश्यक हो जाएँ तो बच्चों को लगे कि

इन दोनों चीजों से ही हम बड़े बन सकते हैं। देते भी रहो जो आपके पास है। मान लो आपके पास केवल ज्ञान है। कुछ नहीं हैं आपके पास देने के लिए, आप उस ज्ञान से दूसरों को ज्ञान दो। **आपके पास में जो है आप उसे दोगे तो अपने आप आपको बड़ा बनने का एक रास्ता बनता चला जाएगा।** देना है बस! प्रतिदिन हमें किसी न किसी को कुछ न कुछ देना है। चाहे धन दे लो, चाहे ज्ञान दे लो, चाहे कुछ समय दे लो, हमें देना हैं। यह तप का और त्याग का अनुष्ठान प्रतिदिन जो करता है, उसके लिए सभी उत्तम सम्पत्तियाँ प्राप्त होती हैं।

हर कार्य नियमित रूप से थोड़ा-थोड़ा करने से सफल हो जाता है

कालेन संचीयमानः परमाणुरपि हि जायते मेरुः ॥ 30 ॥

देखो! ये अच्छी युक्तियाँ हैं- **'कालेन संचीयमानः'** थोड़ा-थोड़ा प्रतिदिन करते रहो। समय पर ये सब चीजें संचित होकर के क्या बन जाएँगी? परमाणु-परमाणु भी अगर संचित प्रतिदिन किया जाए तो वह सुमेरु के बराबर ऊँचा बन जाता है। समय पर वह चीज इकट्ठी होकर के आपको बहुत बड़ी सम्पत्ति के रूप में दिखाई देगी। इसलिए लोग तरह-तरह के, जो यह banking के और यह बीमाओं के, ये सब जो कार्य चलते हैं, उनमें अपने धन को कहीं न कहीं थोड़ा-थोड़ा सब जगह डाले रखते हैं। जो भी आय हो रही है, उसका कुछ न कुछ, प्रतिदिन भी अगर आप सौ रुपये किसी भी स्थान पर रखोगे या किसी भी एक खाते में डालोगे तो भी आप देखोगे कि वह दो साल में, पाँच साल में एक बहुत बड़ी amount बनकर तैयार हो जाता है। इसी तरह से प्रतिदिन अर्जित किया गया ज्ञान, प्रतिदिन दिया गया थोड़ा सा दान, प्रतिदिन किया गया थोड़ा

सा संयम या तप, यह सब बड़ा बनकर के आपको बहुत महत्वशाली बना देता है। यह काल के माध्यम से हो जाता है।

छोटे-छोटे नियम एक दिन बहुत बड़े हो जाते हैं।
घुटनों के बल चलते-चलते पैर खड़े हो जाते हैं॥

बच्चा भी एकदम से क्या पैर पर खड़ा हो जाता है क्या? आप कहो कि नहीं, वह जब एकदम से पैर पर खड़ा हो जाएगा तभी हम उसको मन्दिर ले जाएँगे, तभी हम उसको बच्चा मानेंगे। धीरे-धीरे घुटनों के बल चलते-चलते ही वह एक दिन पैर पर खड़ा हो जाता है। हर काम धीमे-धीमे करते हुए ही एकदम बड़ा हो जाता है।

जानें life management का फण्डा

इसलिए जो बड़ा काम करना चाहते हैं, life management या किसी भी तरह के business management के जो फण्डे जानने वाले, जो बड़े-बड़े motivational गुरु होते हैं, वे भी कहते हैं...**अगर आप बड़े काम एक साथ न कर सको तो छोटे-छोटे काम करना सीखो और छोटे-छोटे कामों से अपने अन्दर सन्तुष्टि लाओ।** छोटे-छोटे कामों को अंजाम दो, छोटे-छोटे कामों से अपने अन्दर की भावनाओं को बलवती बनाओ और उसकी सफलता से आपको अपने आप लगेगा कि अब हम यह बड़ा काम करने में भी सक्षम हैं। करते रहो! **'कालेन संचीयमानः'** वह सब समय पर इकट्ठा हो जाएगा। पहले से आप इकट्ठा करके रख लो तो समय पर waste भी हो जाएगा, नष्ट भी हो जाएगा लेकिन थोड़ा-थोड़ा समय पर हर समय इकट्ठा करते रहोगे तो वह बहुत बड़ा हो जाता है। हर कार्य धीरे-धीरे ही, थोड़े-थोड़े अंशों में ही करते रहने से वह सफलता को प्राप्त होता है। कई बार बच्चे क्या करते हैं कि बड़ी job, बड़ी job, बड़ी job, करने का बड़ा भाव कर लेते हैं और छोटी-छोटी job को छोड़ते चले जाते हैं और बड़ी job नहीं मिलती है तो frustrate हो जाते हैं। ऐसा भी होता है। बड़ी rank पाने के लिए IAS के exam देते हैं और अच्छी rank नहीं मिली, कोई भी छोटी rank मिली तो नहीं! अब दोबारा exam देंगे, तिबारा देंगे और फिर वह दोबारा कब हो रहा है? कभी दो साल बाद हो रहा है, कभी तीन साल बाद उसके result आ रहे हैं, तब तक तो जिन्दगी न जाने कहाँ से कहाँ मुड़ जाती है, चली जाती

है बात। **छोटे-छोटे प्रयासों से आगे बढ़ने वाले भी बड़े-बड़े कार्य एक दिन कर जाते हैं।** इसलिए यह सबसे बड़ा life management का फण्डा है...किसी भी काम को छोटा नहीं समझना चाहिए, उसे लगन से करने वाला व्यक्ति हर काम को बड़ा मान कर के कर जाता है और बड़ा बन जाता है।

धर्म, ज्ञान और धन को प्रतिदिन संग्रह करना चाहिए

अब देखो!

धर्मश्रुतधनानां प्रतिदिनं लवोऽपि संगृह्यमाणो भवति समुद्रादप्यधिकः॥ 31॥

तीनों चीजें बताई हैं...**धर्म, श्रुत** अर्थात् जो आपका ज्ञान है, विद्या है- वह और **धन**, इन चीजों का प्रतिदिन थोड़ा-थोड़ा भी, **'लवोऽपि' अर्थात् थोड़ा-थोड़ा भी अगर हम संग्रह करते रहते हैं तो एक दिन यह समुद्र से भी बढ़कर के अधिक हो जाता है।** लोग ने न जाने कौन-कौन से विषय में record बना लेते हैं? एक व्यक्ति मेरे पास आया कि अखबार पढ़ता था और अखबार की अन्दर जो news आती हैं, उन news में किसी एक topic के ऊपर वह news को collect करता रहता था। ऐसा collect कर-कर के उसने एक world record बना दिया। **छोटी-छोटी चीजें आप कुछ भी संग्रह करके बड़े-बड़े काम कर सकते हो। धर्म को भी प्रतिदिन संग्रह करो, ज्ञान का भी प्रतिदिन संग्रह करो और धन का भी प्रतिदिन संग्रह करो। तीनों चीजें ही तो काम की हैं** और क्या चाहिए? बताओ? और कोई चौथी चीज है? **mobile में क्या मिलता है, बताओ? धर्म मिलता है? ढूँढोगे तो मिलेगा।** mobile में ज्ञान मिलता है? अच्छी ज्ञान की बातें भी ढूँढोगे तो ही मिलेंगे और धन मिलता है? mobile पर धन भी मिलता है? जाता ज्यादा है, मिलता कम है। समझ आ रहा है? मतलब? लोग इस तरह से mobile का उपयोग करते हैं कि mobile के माध्यम से भी कितना-कितना धन निकल जाता है कि आज जो बड़े-बड़े corporate level के जो बड़े-बड़े अरबपति हैं, वे आपके हाथों के थोड़े-थोड़े से उस धन के माध्यम से ही अरबपति बने हुए हैं। चाहे वह Bill gates हो, चाहे वह Ambani हो। आपके लिए महीने में जो यह mobile के तरह-तरह के subscribe करने के जो उसमें charge लगते हैं, social media पर भी mobile का use करने वालों को जो charge लगते हैं, उसी के माध्यम से आज बड़े-बड़े जो अरबपति बने बैठे हैं, वे आपकी खातिर बने बैठे हैं। थोड़ा-थोड़ा संग्रह सबसे कर लिया, अरबपति बन कर बैठे हैं। बस करने की technique आनी चाहिए।

श्रुत ज्ञान की महिमा

सुन रहे हो? **पैसा कमाने के लिए भी दिमाग चाहिए, ज्ञान चाहिए।** इसलिए ज्ञान को बीच में रखा है...धर्म, श्रुत और धन। श्रुत अर्थात् सुनो...सुनकर के जो ज्ञान आता है, वह श्रुत ज्ञान कहलाता है। जो अपने आप पढ़ कर के नहीं आता, वह सुनने से आता है। इसलिए आचार्यों ने सुनने की महिमा ज्यादा बताई है। **सुनकर के जो ज्ञान आएगा, वह आपके लिए धर्म-वृद्धि में भी कारण होगा और धन-वृद्धि में भी कारण होगा।** धर्म को भी बढ़ाओ थोड़ा-थोड़ा, ज्ञान को भी बढ़ाओ और धन को भी बढ़ाओ। इस तरह से प्रतिदिन थोड़ा-थोड़ा बढ़ाते-बढ़ाते वह अपने आप समय पर समुद्र की तरह अधिक हो जाएगा, **यह बहुत बड़ी नीति है और इस तरह की नीति का आचरण करने वाले लोगों के लिए किसी चीज की कमी पड़ने वाली नहीं है।** जिन्दगी में समय बहुत होता है, चौबीस घण्टे कम नहीं होते हैं। इतनी उम्र हम गुजार चुके होते हैं, इस उम्र में कि अगर आदमी कोई भी तरह का काम करता है और उसके लिए अगर उसका कुछ लाभ नहीं दिखाई देता है तो इसका मतलब है कि उसने कुछ किया नहीं है।

धर्म नहीं करने से आप स्वयं को ठगते हैं

धर्माय नित्यमनाश्रयमाणानामात्मवंचनं भवति॥ 32॥

अब यह कह रहे हैं जो धर्म पहले बताया था अगर उस धर्म का आचरण नहीं करते हैं तो आप अपने लिए स्वयं अपने आप को ठगते हैं। **'आत्मवंचनं'** एक शब्द आता है। **'आत्मवंचनं' अर्थात् खुद ही ठगना, खुद ही मूर्ख बनना।** जो लोग धर्म का नित्य आश्रय नहीं लेते, जो सुबह धर्म की परिभाषा बताई थी, उस धर्म का जो आश्रय नहीं लेते, वह खुद ही अपने आप को अच्छे-अच्छे लाभों से वंचित करते रहते हैं। इसलिए धर्म का सहारा जरूरी है और यह धर्म जो बताया जा रहा है- **'कुशल वृत्ति चिंतनम्' तप** और **त्याग,** यह धर्म अगर प्रतिदिन किया जाए तो यह आपके लिए संग्रह होते-होते बहुत बड़े रूप में महान सम्पत्ति को देने वाला हो जाए।

पुरुषार्थ से ही पुण्य फल की प्राप्ति होती है

कस्य नामैकदैव सम्पद्यते पुण्यराशिः॥ 33॥

देखो! सब कुछ पुरुषार्थ से मिलता है। कहते हैं...**ऐसा कौन व्यक्ति है, जिसको एक साथ कोई पुण्य की राशि अपने आप प्राप्त हो जाए,** कोई पुण्य के फल एक साथ प्राप्त हो जाएँ? वे हैं तो अब चतुर्थ काल में होंगे, पंचम काल में कोई नहीं होते ऐसे। **आप पंचम काल में बैठ कर के चतुर्थकाल के चक्रवर्ती और शान्तिनाथ जैसे तीर्थंकरों के उदाहरण लेकर के अपनी**

जिन्दगी मत गुजारने बैठ जाना। हमारे अपने आप, समय आएगा तो हमारे गर्भ कल्याणक हो जाएँगे, जन्म कल्याणक हो जाएँगे, अपने आप रत्न बरसने लग जाएँगे, आप भूल में नहीं रहना। **वर्तमान में इस पंचम काल में कलिकाल में कोई भी पुण्य आपको एक साथ फलने वाला नहीं है।** अगर आप रोजाना धर्म संग्रह करते रहेंगे तो कभी न कभी आप बहुत अच्छे पुण्य का फल भी देख लेंगे अन्यथा आप सोचे कि अचानक से हमें भी तीर्थंकरों की तरह, महापुरुषों की तरह कोई लाभ की प्राप्ति हो जाए। जैसे अरे भाई! चक्रवर्ती के घर में चक्र रत्न अपने आप आता है, हमें क्या करने की जरूरत है? आपको चक्कर आ जायेंगे, कुछ नहीं करोगे तो इसलिए करना है। नहीं तो लोग जो नासमझ होते हैं, **वे ऐसे उदाहरणों के माध्यम से और अकर्मण्य बन जाते हैं।** आपको यह जानना है कि यह उदाहरण बड़े-बड़े महापुरुषों के पुण्य के संचय से उत्पन्न होने वाले, उनके जन्म-जन्मान्तरों के पुण्य के फल से उन्हें प्राप्त हो रहा है और आपके पास कोई पुण्य नहीं है और आप सोचो कि हमारे लिए भी घर में चक्र आ जाएगा तो चक्र-वक्र कुछ नहीं आ आएगा। ऐसा चक्कर आएगा कि आपको घर से भी बाहर निकाल दिया जाएगा। इसलिए पुण्य की राशि एक साथ कभी भी उत्पन्न नहीं होती है। **धीरे-धीरे उसका संग्रह करते रहो, थोड़ा-थोड़ा सा अर्जित किया हुआ पुण्य भी एक दिन अच्छा फल देने वाला हो जाता है।**

पुरुषार्थ हीन व्यक्तियों के लिए सब कुछ स्वप्न राज्य के समान है

अनाचरतो मनोरथाः स्वप्नराज्यसमाः ॥ 34 ॥

जो कोई **आचरण नहीं करने वाला व्यक्ति है, काम कुछ करे नहीं, मनोरथ पर सवार रहे** मतलब मन से ही बस बातें करे, मन से ही घूमता रहे, मनोरथों में मतलब कामनाओं में इच्छाओं में ही बस डोलता रहे, शेखचिल्ली type का और काम कुछ नहीं करे, आलसी बना रहे। **ऐसे लोगों के लिए तो सब कुछ स्वप्न राज्य के समान है।** स्वप्न में मिलने वाला राज्य जैसे कभी स्वप्न में देख लिया हो कि मैं राजा बन गया, राज्य मिल गया, किसी ने मुझे राजगद्दी पर बिठा दिया, ऐसे आपके लिए इस तरह के स्वप्न राज्य की तरह यह मनोरथ अपने मन में देखते रहोगे, इन मनोरथों की कभी पूर्ति नहीं होगी। **जो व्यक्ति आलसी होते हैं या पुरुषार्थहीन होते हैं, अनाचरण का मतलब उस संबंधी उद्योग, उद्यम, effort नहीं करते हैं उनके लिए, पुरुषार्थहीन लोगों के लिए अपने आप कोई भी चीज की प्राप्ति नहीं होती है। वर्तमान में किसी भी क्षेत्र में पुरुषार्थ करना आवश्यक है।** पहले का समय होता था जब आदमी बिना पुरुषार्थ के सब कुछ प्राप्त कर लेता था लेकिन इस कलिकाल में बिना पुरुषार्थ के कुछ भी प्राप्त नहीं होता है। इसलिए कह रहा हूँ...चक्रवर्तियों का उदाहरण अपने ऊपर मत लगाना। चक्रवर्ती को अपने आप तीन लोक की सम्पदा मिल गई, छह खण्ड के राजा बन गए, 96 हजार रानी

मिल गईं। बिना पुरुषार्थ के यहाँ कुछ भी होने वाला नहीं है।

भाग्य के सहारे बैठने वाले बैठे ही रह जाते हैं

इसलिए जो भी आपको बेटे-बेटियों के विवाह करने होते हैं, अगर आप देख लो, अगर आप पुरुषार्थ न करो, कोई बातचीत न करो तो कोई अपने आप कुछ नहीं होता है, करोगे तो ही होगा। किसी को जरूरत नहीं पड़ी है कि आपके घर में आकर के पूछे हमें तो बेटी को देना है। आप बात करोगे तो बात होगी और उसने पूछ भी लिया और आपने तब भी कोई पुरुषार्थ नहीं किया, कोई बात नहीं की तो सोचेगा भाई! ये तो ऐसे ही लोग हैं, इनसे बात करो तो सीधे मुँह बात नहीं करते। अभी नहीं करते तो आगे क्या करेंगे? कभी आपके कोई सम्बन्ध बनने वाले नहीं हैं। इसलिए यह बात अच्छे ढंग से कमर कस के रख लेना चाहिए, इस कलिकाल में जो कुछ भी आदमी प्राप्त करेगा, अपने पुरुषार्थ से करेगा। **भाग्य उसका साथ देगा तो पुरुषार्थ से उसे वह चीज मिल जाएगी, बात अलग है लेकिन केवल भाग्य के सहारे रहेगा तो उसे कुछ नहीं होने का।** उद्योगी पुरुष के लिए ही सब कुछ मिलता है। **'उद्योगिनं पुरुषसिंहमुपैति लक्ष्मीः'** बचपन में वह, संस्कृत के काव्यों में आता है न? **'उद्योगिनं पुरुषसिंहमुपैति लक्ष्मीः' अर्थात्** उद्योगी पुरुष के लिए ही लक्ष्मी सम्पदाएँ प्राप्त होती हैं।

धर्म के फल का अनुभव करते हुए भी पाप में संलग्न व्यक्ति अनात्मज्ञ अज्ञानी है

धर्मफलमनुभवतोऽप्य धर्मानुष्ठानमनात्मज्ञस्य॥ 35॥

देखो! क्या कहते हैं? धर्म के फल का अनुभव करता हुआ भी जो व्यक्ति अधर्म का ही अनुष्ठान करता है, उससे बड़ा कोई **'अनात्मज्ञ'** अर्थात् मूर्ख नहीं है। क्या कहा? **धर्म के फल का उपभोग करता हुआ भी जो व्यक्ति पाप करता है, उससे बड़ा कोई भी अज्ञानी नहीं है** यानि मनुष्य को जो कुछ भी अच्छी चीजें मिलती हैं, वह उसके इसी धर्म के फल से मिली हैं। कौन सा धर्म? जो पहले बताया था। आपने दूसरों के लिए अच्छा सोचा, कभी अच्छा दिया है तो आपको आज धन-सम्पदाएँ मिली हैं। थोड़े से पुरुषार्थ से बहुत कुछ मिला है...**स्वस्थ शरीर मिला है, अच्छा बल मिला है, बुद्धि मिली है ,अच्छा रुप मिला है, अच्छा समाज मिला है, अच्छे स्थान मिले हैं, ये सब किससे? ये धर्म के ही फल हैं।** ये सब किसके फल हैं? अच्छे गुरु मिले हैं, सबको ही अच्छे गुरु मिले हैं, सबके अच्छे गुरु, अपने सबके गुरु हैं। यह सब अपने अन्दर के धर्म के फल से ही अपने को ऐसे **अच्छे गुरु मिले, अच्छा माहौल मिला, अच्छा धर्म-ध्यान करने का वातावरण मिला तो यह धर्म का फल हमें अनुभव में आना चाहिए।** देखो! यह हमारे धर्म का फल है, ऐसा अनुभव करना चाहिए, feeling ऐसी आनी चाहिए। आपको अच्छी feeling लाने के लिए क्या करना? कुछ नहीं है तो बस! इतना ही अनुभव करो। देखो! **मैं कितने अच्छी जगह**

पर बैठा हुआ हूँ। मैं कितने अच्छे लोगों से जुड़ा हुआ हूँ। यही भावना आपके अन्दर एक सकारात्मकता लेकर के आएगी, धर्म के फल का अनुभव करते हुए, आप क्या करें? अधर्म के अनुष्ठान में न लगे मतलब पाप कार्यों में प्रवृत्ति न करें। यह सबसे बड़ी हमारे अन्दर की ज्ञानता होगी और जो व्यक्ति धर्म के फल का अनुभव करते हुए पाप में लग जाते हैं तो उन्हें **अनात्मज्ञ अज्ञानी** कहा जाता है।

धर्म के लिए उद्यम, पुरुषार्थ करने से ही सब कुछ अच्छा मिलता है

कः सुधीर्भैषजमिवात्महितं धर्मं परोपरोधादनुतिष्ठति॥ 36॥

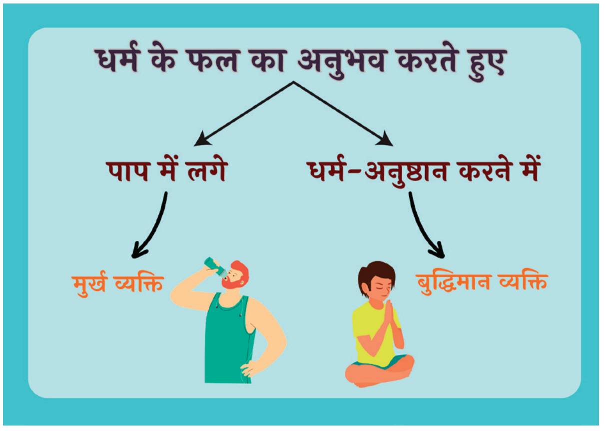

देखो! **'कः सुधीः'** ऐसा कौन सा बुद्धिमान होगा जो आत्महित करने वाले धर्म को दूसरों के उपरोध से उसका अनुष्ठान करे अर्थात् दूसरों के कहने से, दूसरों के आग्रह से धर्म का अनुष्ठान करे मतलब यह है...जब व्यक्ति बुद्धिमान होता है और उसे लगता है कि मैं किसी भी तरह से बीमार हूँ तो उसे जैसे औषधि स्वयं लेने की इच्छा होती है, वैसे ही बुद्धिमान व्यक्तियों को धर्म-अनुष्ठान करने में स्वयं प्रवृत्ति होने लग जाती है। **यह बुद्धिमानों की बुद्धिमत्ता का लक्षण है।** अब हम आज की पीढ़ियों को अगर ये बातें सिखाएँ तो जो धर्म को शुरू से सीखेंगे, उन्हें अपने आप ये सब चीजें समझ में आ जाएँगी। धर्म का मतलब? जो पहले से बताते चले आ रहे हैं, वह धर्म अगर आज की पीढ़ियाँ करती रहेंगी तो वही धर्म का संचय उन्हें होते-होते एक बहुत अच्छे पुण्य के फल के रूप में, पुण्य-राशि के रूप में उनके सामने आएगा तो वह अपने आप अधर्म से दूर हो जाएँगे, पाप से दूर हो जाएँगे और उन्हें अपने आप लगेगा कि यह धर्म के फल से हमें मिला है, इसे हमें आलस्य में या किसी पाप प्रवृत्तियों में व्यर्थ नहीं करना है। बताओ! आप समझो कि समाज का नैतिक उत्थान इससे बढ़कर के और किस चीजों से हो सकता है? **आज अगर युवा पीढ़ी का नैतिक पतन है, तो इन्हीं ज्ञान की कमी के कारण से है और यह ज्ञान अगर अन्दर रहता है तो धर्म का अनुष्ठान चलता ही रहता है और वह अपने आप करता रहता है, यही उसकी बुद्धिमत्ता है।** फिर उससे कहना नहीं पड़ता...बेटा! दूसरों के लिए भी कुछ दे दो। कई बार ऐसा होता है, माता-पिता दानी होते हैं, माता-पिता कुछ धन का दान करते हैं, धन को अलग-अलग

जगहों पर लगाते हैं, देते हैं और बेटों में यह धर्म का भाव नहीं होता है, दान को धर्म नहीं समझते हैं या बेटा कुछ जो है संग्रह-वृत्ति वाले होते हैं तो वे माता-पिता के लिए परेशानी करते हैं। क्या करते रहते हो आप? जब जाते हो तब लुटा आते हो। नहीं समझे? कहीं किसी काम में लगा दिया, कहीं किसी काम में लगा दिया, आपको पता है कि धन कैसे इकट्ठा होता है? जहाँ चाहे बोली लगा देते हो। बच्चे को कहना नहीं पड़े कि यह धर्म है बेटा! दान करना, याचकों को देना या किसी भी तरह से जो धन का अर्थी है, चाहने वाला है उसको देना, यह धर्म है यह कहना नहीं पड़े, अपने आप उसके लिए आ जाए कि हाँ! इससे अच्छा भाव क्या होगा। **आपने गरीबों की सहायता के लिए, आपने जो है अच्छे धर्म की वृद्धि करने के लिए, आपने किसी तरह के अन्य कोई भी लोक कल्याणकारी कार्य करने के लिए धन का उपयोग किया है, तो बेटे को इसमें अपने आप अगर भाव बनेगा तो यह उसके धर्म भाव के कारण से आएगा।** स्व से अपने आप प्रेरणा आना, यह धर्म का स्वयं-फल उसे प्राप्त होता है।

धर्म के फल

1. दूसरों के लिए अच्छा सोचना
2. धन-सम्पदाएँ मिलना
3. थोड़े से पुरुषार्थ से बहुत कुछ मिलना
4. स्वस्थ सुन्दर शरीर, अच्छा बल और बुद्धि का मिलना
5. अच्छा समाज मिलना
6. अच्छे गुरु का मिलना
7. धर्म-ध्यान करने के लिए अच्छा वातावरण मिलना

अच्छे कार्यों में विघ्न क्यों आते हैं?

धर्मानुष्ठाने भवत्यप्रार्थितमपि प्रातिलोम्य लोकस्य ॥ 37 ॥

देखो! धर्म अनुष्ठान करते समय भी, बिना प्रार्थना किए हुए भी प्रतिकूलताएँ लोक में आ जाती हैं, लोगों को आ जाती हैं। क्या सुन रहे हो? **कभी-कभी अच्छे कामों में भी विघ्न आ जाते हैं।** आप लोग बोलते हो न? हम तो अच्छा करना चाहते हैं लेकिन वह अच्छा काम वह होने नहीं देता, अच्छे काम में विघ्न आ पड़ते हैं।

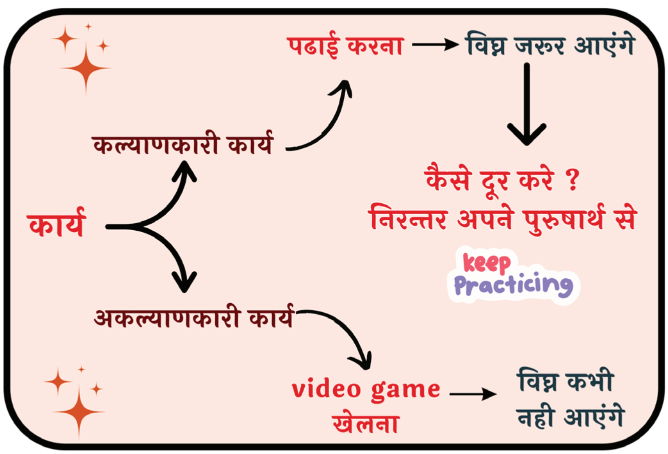

लोक कल्याणकारी कार्यों में भी, महापुरुषों को भी विघ्न उपस्थित हो जाते हैं। कैसे? धर्म अनुष्ठान करते समय और जब वह विघ्न उपस्थित हो जाते हैं बिना कुछ चाहे हुए भी तो उन विघ्नों का नाश कैसे होगा? **कैसे होगा उन विघ्नों का नाश?** उन **कल्याणकारी कार्यों को निरन्तर अपने पुरुषार्थ से करते रहने से ही वह विघ्न भी दूर हो जाते हैं।** इसलिए अच्छे कामों में तो बहुत विघ्न आएँगे लेकिन पाप कार्यों में विघ्न नहीं आते हैं, यह पंचम काल की विशेषता है। अच्छा काम करने बैठो, बच्चे के लिए कुछ पढ़ाने बैठो, बच्चे के लिए अच्छी शिक्षा देने बैठो या कोई अच्छा घर में कार्य करने बैठो, देखो आप! कितने तरह के विघ्न आते हैं। इसको यह काम, उसको वह काम, इसका phone, उसका phone और दिन भर TV देखते रहो तो कोई phone नहीं, कोई काम नहीं।

दूसरों के कहने से पाप कार्य में प्रवृत्ति नहीं करनी चाहिए

अधर्मकर्मणि को नाम नोपाध्यायः पुरश्चारी वा॥ 38॥

कहते हैं...अधर्म करने वाले के लिए भी कौन उपाध्याय नहीं बन जाता? पाप कार्य सिखाने के लिए सब आगे बनकर के सलाह देने लग जाते हैं, सभी उपाध्याय बन जाते हैं। उपाध्याय का मतलब? सब आगे बढ़-बढ़ करके शिक्षा देने लग जाते हैं और आगे चलने लग जाते हैं, अगुवा बन जाते हैं, जिसे बोलते हैं- **'पुरश्चारी'** नहीं समझे? **पाप कामों में लगाने के लिए दुनिया में सब शिक्षा भी दे देते हैं, ज्ञान भी दे देते हैं और सब आगे चलकर के उस पाप कार्य में आगे बढ़कर के सबको पाप में लगा भी देते हैं।** यह पाप प्रवृत्ति से बचना भी अपने आप में आज के समय में बड़ा कठिन हो गया है। बड़े-बड़े, अच्छे-अच्छे विद्वान भी न जाने कौन से कर्मों के चक्कर में आ जाते हैं? कौन से समय के फेर में आ जाते हैं? अच्छे-अच्छे लोग भी, पढ़े-लिखे लोग भी इन पाप प्रवृत्तियों में पड़ जाते हैं और दूसरों की संगति में आकर के पाप कार्य भी कर जाते हैं। यह उनके भी अपने कर्मों के फल से होता है लेकिन यह अधर्म में प्रवृत्ति कराना सबके लिए बड़ी सहज बात है, यह कहने का यहाँ मतलब है। **धर्म में प्रवृत्ति करना यह कठिन काम होता है, अधर्म के प्रवृत्ति के लिए तो सब ज्ञानी बने बैठे हैं।** आप mobile चलाना नहीं जानते होंगे...उसको कैसे? क्या mute? क्या unmute? क्या उसके function? कौन सी चीज mobile में कहाँ से, कैसे निकालनी है? लेकिन बच्चों से पूछो, नए-नए दस-दस साल के, आठ-आठ साल के बच्चों से, कैसे ये ऐंठा-ऐंठी करते रहते हैं, सब उसमें से। पिताजी तो video calling करने के लिए खोल भी देते हैं तो सामने वह video भी उसके सामने नहीं ला पाते हैं तो बच्चों से कहना पड़ता है...बेटा! देख तो सही इसमें मम्मी का चेहरा नहीं दिख रहा, देख तो कैसे लगाना पड़ेगा सामने? इन काम में सब expert हैं। पाप कार्यों में सब expert रहते हैं।

न जाने कहाँ सीख लेते हैं, कौन सिखा देता हैं इनको? और अच्छे काम के लिए सिखाने वाले नहीं मिलते और सिखा भी लो तो बुद्धि में कुछ नहीं घुसता। यह विडम्बना है- धर्म और अधर्म की, इसलिए पाप का निषेध किया जाता है, अधर्म का निषेध किया जाता है।

कण्ठगत प्राण होने पर भी अशुभ कर्म, पाप कर्म, गलत काम नहीं करना चाहिए

कण्ठगतैरपि प्राणै र्नाशुभं कर्म समाचरणीयं कुशलमतिभिः ॥ 39 ॥

कहते हैं...जो कुशल बुद्धि वाले लोग हैं, जिनकी बुद्धि हमेशा कुशल कार्यों को मतलब अच्छे श्रेष्ठ कार्यों को करने के लिए होती है, वह कण्ठगत प्राण होने पर भी अशुभ कर्म का आचरण न करें, अशुभ कर्म आचरण करने योग्य नहीं हैं अर्थात् कण्ठगत प्राण होने का मतलब? **कोई मरने के लिए भी कहे, कोई मरणोन्मुख भी हो तो भी हमें कभी भी कोई गलत काम, पाप काम नहीं करना चाहिए।** यह यहाँ पर पाप का निषेध इस तरह से किया जाता है।

नीति वाक्यों को पढ़ने वाला पाप प्रवृत्ति के प्रलोभनों में नहीं पड़ता

स्वव्यसनतर्पणाय धूर्तैर्दुरीहितवृत्तयः क्रियन्ते श्रीमन्तः ॥ 40 ॥

कहते हैं...अपने व्यसन को अर्थात् अपनी खोटी आदतों के तर्पण के लिए मतलब उनकी पूर्ति करने के लिए धूर्त लोग यानि ठग लोग अनेक प्रकार की दुरिहित वृत्तियों के माध्यम से, पाप प्रवृत्तियों के माध्यम से **'क्रियन्ते श्रीमन्तः' यानि** बड़े-बड़े श्रीमन्तों को भी पाप काम में लगा देते हैं। यह देखो! यह नीति बिल्कुल स्पष्ट दिखाई देती है। **जो लोग अपने मन के अन्दर किसी भी तरह का दूसरों को ठगने का भाव रखते हैं, वह दूसरों को ठग जाते हैं। बड़े-बड़े धनाढ्य लोगों के लिए भी वह पाप कार्य में लगा देते हैं।** पैसा यहाँ नहीं, यहाँ लगाओ सेठ जी! वहाँ देने से कुछ नहीं होगा, यहाँ लगाओ। यह ठेका ले लो, शराब का, घर बैठे कुछ नहीं करना पड़ेगा। बस! नाम लिखाना उसमें, अपने आप घर बैठे-बैठे से उसका percentage आएगा। ऐसे ज्ञान देने वाले लोग कदम-कदम पर मिल जाते हैं। जिन्हें धन की लोभता है, पैसे का जिन्हें लोभ रहता है और **धर्म-अधर्म का ज्ञान नहीं होता है, वह उन धूर्त लोगों के वश में आकर के भी बड़े-बड़े बुद्धिमान और श्रीमान लोग भी पाप कार्य कर जाते हैं।** इसलिए जो व्यक्ति ऐसे नीतिवाक्यामृतों को पढ़ता है...वह समाज में, दुनिया में रहते हुए भी कभी ऐसे प्रलोभनों में नहीं पड़ेगा जो प्रलोभन उसके लिए अधर्म में, पाप में प्रवृत्ति करा दे। इतना तो कह सकता हूँ न? फिर भी हो जाए तो

यह अपने ही पाप कर्म की बलिहारी है। **अपने अन्दर किसी भी तरह की दुरुहित वृत्तियाँ हैं, वह दूसरों के माध्यम से उत्पन्न हो जाती हैं।** कई लोगों के लिए आपने सुना होगा...कोई व्यक्ति हैं तम्बाकू नहीं खाते हैं, शराब नहीं पीते हैं लेकिन उनके साथ रहने वाले कुछ ऐसे लोग होते हैं, जो उन्हें कभी न कभी पिलाने का शौक कर देते हैं। जैसे चाय पहले free में पिलाई जाती थी, अब सब चाय माँगते हैं। बस! यही तरीका है। पहले free में एक कश लगाया जाए, पहले free में एक peg दिया जाए और फिर बाद में अपना पैसा लगा कर के वह खुद जो है, उसको देने लग जाता है। यही जो है व्यसनों में ढकेलने का एक तरीका होता है। यह कार्य धूर्त लोग किया करते हैं और इस तरह से बड़े-बड़े धनाढ्यों को भी वे ठग लेते हैं और उनके माध्यम से अपना पैसा अपने व्यसनों में लगवाया करते हैं।

दुष्टों की संगति कभी नहीं करनी चाहिए

खलसंगेन किं नाम न भवत्यनिष्टम्॥ 41॥

इसी को खल की संगति समझना चाहिए। **'खल'** अर्थात् दुष्टों की संगति। **जो धर्म से दूर रखें, धर्म से विपरीत चलें, वे सब क्या हो जाते हैं? वे दुष्ट कहे जाते हैं** और दुष्ट लोगों की संगति से क्या-क्या अनिष्ट नहीं होते? सभी अनिष्टों की सम्भावना बनी रहती है। आप देखें कि दुष्टों के कारण से ही कई बार अच्छे-अच्छे लोग भी ऐसे दुष्टता के कार्य कर जाते हैं उनकी संगति में रहकर के कि जो उन्हें नहीं करना चाहिए। घर के अन्दर में ही घर के सदस्यों के द्वारा, घर के ही सदस्यों का कत्ल हो जाता है। नहीं समझे? होता है कि नहीं होता? आज यह दुष्टता चरम पर है। कहीं भी आप देख लो! हर गाँव में, हर शहर में इस तरह के प्रतिदिन case हो रहे हैं। घर के ही लोग घर के ही किसी न किसी सदस्यों के लिए इस तरह की दुष्टता करके उनके लिए अनिष्ट कर देते हैं तो यह **दुष्टों की संगति को समझ पाना बड़ा कठिन होता है।** आजकल के बच्चे भी अपने लिए दुष्ट हो जाते हैं। उनसे अगर मना किया जाए किसी काम के लिए और बार-बार मना किया जाए और अगर उनका दुष्ट स्वभाव बन गया है, तो वे आपके लिए भी खतरा बन सकते हैं। कितने case सुनने में आते हैं...बच्चे ही अपने माता-पिता को shoot कर देते हैं और यह काम America (US) में ऐसी जगहों पर बहुत आसानी से हो रहा है और बड़ी मात्रा में हो रहा है क्योंकि वहाँ पर जो बच्चे होते हैं, उन्हें इसी तरह की समझ दी जाती है और इसी तरह के वहाँ पर नियम-कानून बताए जाते हैं। कोई भी आपके सुखों में बाधा पहुँचाए, आप उसके लिए अपने इस मार्ग से हटा सकते हैं। इस तरह की चीजें जब वहाँ बताई जाती हैं तब लोग इस तरह के वहाँ कार्यों को अंजाम देते हैं और इस तरह की चीजें अब इस देश में भी आने लगी हैं, यह सब दिखाई देता है।

दुष्ट लोगों से सदैव बचना चाहिए

अग्निरिव स्वाश्रयमेव दहन्ति दुर्जनाः ॥ 42 ॥

इसलिए दुष्ट लोगों की संगति, **दुर्जनों की संगति कभी भी नहीं करनी चाहिए। यह अग्नि के समान स्वयं अपने आश्रय में रहकर के उन्हीं को जला देते हैं।** जैसे अग्नि के निकट में जो आएगा वह अग्नि उसको जला देती है, ऐसे ही दुष्टों की संगति में आने पर वह दुष्ट उसके लिए नष्ट कर देता है। **दुष्टता को पहचानना बहुत जरुरी है।** पार्श्वनाथ भगवान के पूर्व जन्म का भाई...कमठ और मरुभूति दोनों भाई थे। भाई भी इतना दुष्ट हो सकता है कि दुष्टता करके भी भाई को मार सकता है। क्या करोगे बताओ? आज के समय में दुष्टता को पहचानना बहुत बड़ी बात है। एक बार कोई दुष्टता आपके साथ में कर जाए तो वह कैसा व्यक्ति है और वह अगर अपनी दुष्टता पर आ जाए तो आपको बहुत बड़ा नुकसान पहुँचा सकता है। **एक गुजरात का व्यापारी था,** संघ में आया करता था और आचार्य महाराज के निकट हमेशा आया करता था। एक बार उसने किसी ग्राहक को थोड़ा सा अपमानित कर दिया और भविष्य में वह एक बहुत बड़ा officer बन गया। फिर उसने अपनी दुष्टता से उसका ऐसा बदला लिया कि उनका बहुत नुकसान कराया। दुष्ट व्यक्ति का कार्य ही यही है कि वह छोटी सी बात पर आपके लिए बहुत ज्यादा नुकसान कराने का भाव करने लग जाए, यह उसकी पहचान है। जैसे कहते हो न इसको थोड़ा सा गुस्सा आता है और बहुत बड़ा अनर्थ कर देता है, ऐसे लोगों से डरना चाहिए, बचना चाहिए। चाहे वह अपना बेटा ही क्यों न हो, अपना भाई क्यों न हो। अगर यह नहीं समझ पाए तो वह दुष्टता से ही वह आपका घात हो जाएगा और यह हो जाता है तब लोग बाद में कहते हैं... अरे! यह क्या कर दिया? भाई ने भाई को मार दिया, बेटे ने पिता को मार दिया। यह उसके अन्दर की दुष्टता थी और यह समझ कर के लोग व्यामोह में जब तक पड़े रहते हैं तो वह दुष्टता से दूर नहीं हो पाते हैं तो बड़े-बड़े नुकसान हो जाते हैं। अपने ही लोगों से अपने ही गले कटते हैं और कौन दूसरा गला काटने आता है?

दुष्ट व्यक्ति अग्नि के समान जलाने वाला होता है

पाण्डवों के यहाँ पर सब कुछ था और उनके लिए भी इतना ज्यादा उपद्रव हुआ। कौन लोगों ने किया? घर के ही लोगों ने किया, सब अपने ही भाई थे। **सबसे ज्यादा नुकसान हमेशा पहुँचाया जाता है, निकटस्थ लोगों से ही पहुँचाया जाता है।** अगर उनके अन्दर दुष्टता होगी तो न जाने किस रूप में वह दुष्टता को बाहर निकालेंगे। समझ पाना बहुत कठिन काम होता है और इस दुष्टता के कई कारनामे सामने आते हैं। बड़ा-बड़ा समय बीतने के बाद भी बड़े-बड़े दुष्ट कार्य हो जाते हैं। सब तरह से सर्वत्र सभी प्रकार के समूहों में इस तरह की दुष्टता देखने को

मिल जाती है। समझ में आ रहा है? व्यक्ति तो दुष्टता के साथ में कहीं भी हो सकता है न? जिसका दुष्ट स्वभाव है, वह अगर कहीं धर्मगुरु बन जाए, धर्म का नेता बन जाए तो और बड़ी आफत है। राजनेता बन जाए तो आफत है, तो दुष्ट व्यक्ति के लिए अगर कोई उचित पद मिल जाए या कोई बड़ा पद मिल जाए तो वह अपनी **दुष्टता से बहुत बड़ा-बड़ा अनर्थ कर देता है और इस तरह के उदाहरण आपको आगे भी मिलते रहेंगे, अभी भी देखने में आएँगे और पीछे भी पुराणों में आप पढ़ सकते हैं।** इसलिए धर्म करने वालों के लिए हमेशा कहा जाता है...**दुष्ट लोगों की संगति से बचो। यह अग्नि की तरह आपको अपने आश्रय में रख कर के जला देगी।**

तात्कालिक सुख में लुब्ध रहने वाला व्यक्ति आपत्तियों को प्राप्त कर लेता है

वनगज इव तदात्वसुखलुब्धः को नाम न भवत्यास्पदमापदाम्? ॥ 43 ॥

कहते हैं- **'तदात्वसुखलुब्धः' मतलब** तात्कालिक सुख के लिए लुब्ध रहने वाला कौन ऐसा व्यक्ति है जो वनगज के समान आपदाओं का स्थान प्राप्त नहीं कर लेता है? वनगज मतलब जंगली हाथी के समान। जंगल में रहने वाला जंगली जो हाथी होता है, वह जंगल को उजाड़ने का काम करता है और वह हाथी भी कभी न कभी, किसी न किसी गड्ढे में अवश्य गिरता है और उसको भी किसी न किसी तरह से पकड़ा जाता है, फिर उसके साथ में बहुत उसे कष्ट दिया जाता है, अनेक आपत्तियों में पड़ जाता है। इसी तरह से **जो व्यक्ति तात्कालिक सुख में लुब्ध हो जाता है,** तात्कालिक सुख का मतलब? क्षण भर के सुख के लिए, तात्कालिक, थोड़े समय के मिलने वाले सुख में लुब्ध होकर के जो व्यक्ति किसी भी तरह से अनर्गल प्रवृत्ति कर लेता है, **वह अनेक आपत्तियों का स्वामी बन जाता है। आपत्तियाँ अपने आप नहीं आती, आपत्तियाँ उस व्यक्ति के अन्दर की उस लोभ और आसक्ति के परिणाम से आती हैं, जो उसे विवेकहीन बना देती हैं।** ऐसी आपत्तियों में प्रमुख कारण, यहाँ पर तदात्व सुख में लिया गया है। **पर स्त्री सेवन का सुख, यह इसकी detail में बताया गया है। यानि एक सभ्य व्यक्ति के लिए पर स्त्री सेवन का तत्काल मिलने वाला सुख उसके लिए अनेक आपत्तियों का कारण बन जाता है।** आज ये आपत्तियाँ हर व्यक्ति के सामने आ रही हैं। आज इन आपत्तियों में हर व्यक्ति गिरता चला जा रहा है। व्यक्ति जैसे ही समझदार, थोड़ा सा इन्द्रियों से स्वस्थ बनता है, पुष्ट बनता है और इन आपत्तियों में वनगज की तरह गिर पड़ता है। **जंगली हाथी की तरह, मदमस्त रहने वाला कुछ नहीं देखता इधर-उधर और वह किसी न किसी तरह की chatting में, facebook पर अपने relation बनाने में किसी न किसी तरह से और भी कोई ढंग से वह इन आपत्तियों में गिर ही पड़ता है।** इन आपत्तियों से निकालने वाला कौन है? कैसे निकले? एक तो दुष्टता

अगर होगी तो इन आपत्तियों में गिरता चला जाएगा और अगर कभी उसके अन्दर सज्जनता आएगी तो एक बार गिर के भी सीख लेकर के भी वह उससे निकल सकता है। आप देखते हो दुनिया के अन्दर कितने बड़े-बड़े काण्ड होते हैं। सब जानते होगे, लोग जिनसे प्रेम करते हैं, उन्हीं के कितने टुकड़े करते हैं। समझ आ रहा है? इतना अत्याचार, दुराचार की चरम सीमा जो देखने को मिलती है, ऐसा लगता है कि नरक का वातावरण कहीं और नहीं हैं, सब यहीं पर दिख रहा है...नरक क्या होता है? इस तरह का जो धर्म और अधर्म का भेद नहीं जानते, उन लोगों के लिए यह सब करने में कोई हानि नहीं होती।

धर्म नीतियों का उल्लंघन करके व्यक्ति पाप का ही संचय करता है

धर्मातिक्रमाद्धनं परेऽनुभवन्ति, स्वयं तु परं पापस्य भाजनं सिंह इव सिन्धुरवधात्॥ 44॥

क्या कहते हैं? धर्म का अतिक्रमण करने से धन को जो लोग अर्जित करते हैं, उनके धन को कौन खाएगा? कमाने वाला नहीं खा पाता, **जो धर्म का उल्लंघन करके धन का अर्जन करते हैं, उनके धन को खाने वाले लोग दूसरे होंगे।** खुद वह उसका उपयोग नहीं कर पाएगा। **'स्वयं तु परं पापस्य भाजनं सिंह इव सिंधुरवधात्'** कहते हैं...जैसे शेर जो है, वह हाथी का शिकार करता है और उससे श्रृगाल वगैरह को ही भोजन मिलता है, उसे कोई लाभ नहीं होता है, वह केवल पाप का ही संचय करता है। क्योंकि शेर की भूख हाथी के बराबर, हाथी को पूरा खाने की नहीं होती है। बस! उसका काम तो उसे मार डालना है। उसे अपने शौर्य से बस उस सिंह के लिए शिकार करने का भाव आता है। शिकार कर लिया और शिकार करके वह उसको छोड़ जाता है। नहीं समझे? कभी भी सिंह की भूख बहुत ज्यादा नहीं होती है। वह थोड़ा सा एकाध माँस का टुकड़ा खाएगा और वह सारा छोड़ कर चला जाएगा और शिकार किसका किया? इतने बड़े हाथी का शिकार किया। उस हाथी को कौन सेवन करेगा? जो दूसरे जंगली जानवर होंगे, जो दूसरे श्रृगाल आदि जानवर होंगे, वे जो है उसका सेवन करेंगे। इसी तरह से जो **धर्म का, न्याय-नीतियों का उल्लंघन करके जो धन को संचित करता है, उसे धन कमाने का पाप तो पूरा लगता है और उस पाप के कारण से वह नरक और निगोद की यात्रा करता है। लेकिन उसके द्वारा अर्जित धन का भोग कौन करता है? उसके आसपास के लोग करते हैं, कुटुम्बीजन करते हैं।**

देखो! इसके अन्दर सब बातें आ गई।

- **धन कमाना भी है,**
- **धन देना भी है,**

- **धन का लोभ नहीं करना है और**
- **धन को कभी भी धर्म का उल्लंघन करके नहीं कमाना है।**

यही धन कहलाता है- न्याय से उपार्जित धन। जो धन न्याय से उपार्जित होगा, वह आपके लिए धर्म में काम आएगा। अन्यथा जो धन आप न्याय को छोड़ कर के नीति विरुद्ध धन का अर्जन करेंगे, वह सारा का सारा धन दूसरे कुटुम्बियों के काम में आएगा, आपके लिए सिवाय पाप के बन्ध का वह कारण बनेगा। उनको भी पाप यह लगेगा कि वे भी जो है, दूसरों के द्वारा अर्जित, वह पाप से अर्जित धन का वह सेवन करने वाले बन रहे हैं तो वे भी जो हैं उस पाप के कारण से, उस धन के कारण से वह भी बाद में पाप ही करेंगे।

धन कमाने की भी limit हो

इसलिए जो लोग भी धन कमाते हैं वह सोचें कि आखिर हमें अपने लिए धन की कितनी जरूरत है और अपने परिवार के लिए धन की कितनी जरूरत है? समाज में रहने के लिए भी हमें धन की कितनी जरूरत है? इसकी भी तो एक विचार, कोई श्रेणी हो सकती है न! इसकी एक विचारता हो सकती है कि भाई! कितने धन की जरूरत है हमें? हमारे पास में कितने करोड़ होने चाहिए जब हम अपने बच्चों का, अपने घर का, परिवार का पालन कर लेंगे? कोई limit तो होनी चाहिए कि नहीं, कि कहीं से कोई भी व्यक्ति घूस दे दे, रिश्वत दे दे, कोई भी अपने के लिए किसी भी तरह का अन्याय से भी धन मिल जाए और हम हर धन पर अपना अधिकार जमा ले, यह सज्जन पुरुष का काम नहीं है। अगर आपने ऐसा कर भी लिया तो कभी न कभी नियम से पकड़े जाओगे और जिस दिन पकड़े गए, उसी दिन सारी इज्जत और बची जिन्दगी सब दांव पर लग जाएगी। बड़े-बड़े लोग भी इस चीज से अछूते नहीं रह पाते हैं लेकिन जो व्यक्ति धर्मनिष्ठ होते हैं, वे कभी भी ऐसी अनीति के कार्य नहीं करते हैं। यही बात आपको जो है बताने की है और इसी बात से आपका जीवन सुखी, आदर के साथ जीने वाला एक कहना चाहिए पूरा का पूरा सम्मान के साथ जीने वाला जो जीवन बनता है, वह न्याय-नीति के अनुसार चलने से ही बनता है। अब आप कहोगे कि महाराज! जो न्याय-नीति से चलते हैं, वे कभी इतना धन कमा ही नहीं पाते हैं, दुःखी रहते हैं। ऐसा होता है? आपको लगता है, वे दुःखी नहीं रहते हैं। **जिसे आप सुख समझ रहे हो, वह केवल बाहर का सुख है।** वह भीतर से बहुत सुखी रहते हैं, निश्चिन्त रहते हैं। **आज दुनिया में लोग अगर अन्याय-अनीति से धन का अर्जन कर रहे हैं तो वे ढंग से सो भी नहीं पा रहे हैं क्योंकि पाप करने के बाद में आपकी रातों की नींद उड़ जाती है।** हमेशा मन में कोसता है कि भाई! हमने यह पाप कर लिया। वह आपके लिए बाहर से किसी भी तरह का धन का सुख आप प्राप्त कर ले, जैसे कहा जाता है बाहर से आप अच्छा आलीशान बंगला बना लेंगे, अच्छे बिल्कुल air conditioned room बना लेंगे, अच्छे बिस्तर

बना लेंगे लेकिन नींद आप कभी भी धन से नहीं खरीद पाएँगे। **धन से सब खरीदा जा सकता है, नींद कहाँ से खरीदोगे?** नींद न्यायी व्यक्ति के पास में, सन्तोषी व्यक्ति के पास में, नींद हमेशा रहेगी। भीतर का सुख चैन उसके पास में हमेशा रहेगा लेकिन लोग बाहर की चकाचौंध में ऐसे आ जाते हैं, उन्हें लगता है- अन्याय और अनीति से जीने वाले तो सुख से जी रहे हैं...महाराज! न्याय-नीति से तो आज का जीवन चलता ही नहीं है।

न्याय से उपार्जित धन से ही तन और मन में स्वस्थता रहती है

जितना भी चले, **अपनी पूर्ण उम्र भी अगर आप जी पाओगे तो तभी जी पाओगे, जब आप न्याय-नीति से धन का उपार्जन करते हुए सन्तोष के साथ आगे चलोगे।** अन्यथा आप देख लो! लोग कितने परेशान हैं। लोगों के लिए सब कुछ होता है लेकिन फिर भी उन्हें नींद नहीं आती है, चैन नहीं होता है और उसी के कारण से वे शरीर की अनेक बीमारियों के शिकार होकर के अनेक तरह से, समय से पहले उन्हें यह शरीर छोड़ देना पड़ता है। यह आप खूब देख रहे हो, **अनेक-अनेक रोगों का कारण जो शरीर बन रहा है, किसके कारण से? मन के दुर्विचारों के कारण से, मन के अन्याय-अनीति से चलने वाले भावों के कारण से।** भीतर से अगर हमें स्वस्थ रहना है, तन को स्वस्थ रखना है तो मन को स्वस्थ रखना जरूरी है और मन की स्वस्थता इसी तरह के न्याय उपार्जित धन से आती है। चाहे भले ही वह धन थोड़ा होगा लेकिन जितना भी होगा वह आपके लिए स्वास्थ्य और सन्तोष दोनों देने वाला होगा।

सौधर्म इन्द्र बनने का उपाय क्या है?

बहुत पैसा कमा कर के सौधर्म इन्द्र बनना चाह रहे हैं, वे बने। **बहुत पैसा कमाना बुरी बात नहीं है। बात यह बुरी है कि वह बहुत पैसा किस लिए कमाया जा रहा है?** क्या सौधर्म इन्द्र बनने के लिए ही कमाया जा रहा है? अगर कमाया जा रहा है, तो क्या अन्याय से कमाया जा रहा है या अपने पुरुषार्थ से कमाया जा रहा है? देखो! केवल बन जाने से ही कोई सौधर्म इन्द्र नहीं बन जाते हैं। अगर आपको ऐसा लगता है कि हम अपनी salary से ही अगर कभी ऐसे बनना चाहें तो सौधर्म इन्द्र नहीं बन पाएँगे तो आप ऐसी कोई अपने मन में विचार न रखें। यह सौधर्म इन्द्र तो अपने घर का काम है। कभी-कभी ऐसा भी हो सकता है कि आप जैसे लोगों के लिए भी कोई ऐसी प्रतिष्ठाएँ कराई जा सकती हैं **जिनमें कोई सौधर्म इन्द्र की बोलियाँ न लगे और उनको सौधर्म इन्द्र, उनके नैतिक चरित्र के आधार पर बनाया जाए।** उसमें क्या बड़ी बात है? कोई यह जरूरी नहीं है सब चीजें, यह सब तमाशा है। न यह कोई शास्त्रोक्त ज्यादा बड़े-बड़े काम है कि सौधर्म इन्द्र इस तरह से होता है, यह होता है। यह तो एक मुख्य इन्द्र बनकर के मुख्य क्रियाएँ करने वाला एक पात्र सामने आता है, उस पात्र का चयन करना बड़ी बात होती है लेकिन उसमें केवल बोली लगाना ही बड़ी बात नहीं होती है और भी बहुत सारी उसकी

योग्यताएँ देखी जाती हैं। उनको अनदेखा अगर कर दिया जाता है, तो वह प्रतिष्ठाएँ भी अच्छी प्रतिष्ठाएँ नहीं मानी जाती हैं। स्वयं आप अपना कोई विधान करेंगे, स्वयं आप अपना अनुष्ठान करेंगे और आप स्वयं ही अपने सौधर्म इन्द्र बनकर के उसको करें, क्या दिक्कत है? कोई जरूरी है क्या? आप अपने रिश्तेदार दस, बीस, चालीस लोग इकट्ठे कर लो और उनके बीच में आप एक माहौल तैयार कर लो...भैया! इस बार हम विधान कर रहे हैं, तुम सौधर्म इन्द्र। अगली बार करेंगे तो हम सौधर्म इन्द्र, अगली बार करेंगे हम सौधर्म इन्द्र। अपने परिवार के चालीस लोग, अपने आराम से मिलकर के हर बार सौधर्म इन्द्र बन कर विधान करो, क्या दिक्कत है? कौन मना कर रहा है? **प्रतिष्ठाएँ भी ऐसी हो सकती हैं।** बस! हमें ऐसी प्रतिष्ठा कराना है कि हमें उसमें किसी भी तरह से समाज के लोगों का हमें कोई पैसा नहीं लेना है, हमें अपनी तरह से वह प्रतिष्ठा कराना है। समाज को तो हम और ज्यादा, आएँगे लोग, उन्हें हम खिलाएँगे-पिलाएँगे, आवभगत करेंगे, इसके अलावा हमें और कुछ नहीं करना है और हमें भगवान की प्रतिष्ठा कराने के लिए बस! आयोजन करना है। हम वह अपना आयोजन अपने मन्दिर के अन्दर भी कर सकते हैं।

बिना पैसा खर्च किए हो जाएँगे पंचकल्याणक

मन्दिर के अन्दर भी पंचकल्याणक हो जाते हैं। बड़े-बड़े पण्डालों के बिना भी हो जाते हैं। Lockdown में करे ही थे, **दिल्ली जैसी city में Lockdown में पंचकल्याणक किये शानदार,** एक ही building के अन्दर वह पंचकल्याणक हो गए। रोहिणी के अन्दर वह **अर्हं विद्या निलय** स्थान है। Lockdown था, आना भी था इधर की ओर और पंचकल्याणक भी जरूरी था तो हो गए वह building के अन्दर ही हो गए और वही काम अगर बाहर होता तो करोड़ों के tent और करोड़ों के रुपए खर्च होते। बाद में वे श्रेष्ठी कहने लगे...महाराज! अच्छा ही हुआ, इतना बच गया। होने को सब होता है, बस करने-कराने वाले का मन होना चाहिए। हम तो सब कुछ free में कराने को तैयार हैं, हम कौन से पैसा लेते हैं। आपका मन हो सौधर्म इन्द्र बनने का, आप अपनी प्रतिमाएँ लाओ, आपको प्रतिष्ठा करानी है, प्रतिष्ठाचार्य भी ऐसा ही ढूँढ लो जिसको पैसे की जरूरत न हो। बस! ठीक है। क्या दिक्कत है? पैसे की जरूरत है कहाँ? प्रदर्शन इसलिए भी होता है कि भाई! चलो **दूसरे लोगों को प्रेरणा मिले लेकिन दूसरे लोगों के लिए अन्याय-अनीति पर चलने की प्रेरणा मिलने लगे तो फिर उस प्रदर्शन से बचना चाहिए। प्रभावना अंग में आता है लेकिन उसके कारण से लोगों के विचार, भाव जो हैं, विकृत नहीं होने चाहिए,** यह जरूर आपस में ध्यान रखना चाहिए। इसलिए कोई भी चीज का एकान्त रूप से, न हमें कोई भी उसकी हानि देखना चाहिए, न लाभ देखना चाहिए। हमें अपनी-अपनी आवश्यकता के अनुसार अपना-अपना काम करना चाहिए। जिसको जैसी आवश्यकता लगे, वह अपना अपने तरीके से काम करे। किसी के लिए कोई आपत्ति भी दर्ज करना भी कोई

अच्छी बात नहीं होती है। नहीं समझे? जो कोई अच्छे सौधर्म इन्द्र बन रहे हैं, उन्हें बनने दो। आपको अपने तरीके से करना है, आप अपने तरीके से कर लो। **किसी के लिए कोई आपत्ति की बात क्यों कही जाए। जिसको जैसा भाव आता है, वह वैसा करेगा।** जिसके पास जैसा है, वह वैसा करेगा तो वह करने दो, वह कोई दिक्कत नहीं है। आपके मन की इच्छा है, तो आप अपनी भावना बनाए रखें कि हमारे मन की भी इच्छा कभी पूर्ण हो जाए, हो जाएगी। बस! भावना बनाते रहो, हो जाएगी।

धर्म को भूल करके सुख की कल्पना करना व्यर्थ है

बीजभोजिनः कुटुम्बिन इव नास्त्यधार्मिकस्यायत्यां किमपि शुभम्॥ 45॥

देखो! ये कहते हैं...जो अधार्मिक है उसके लिए कोई भी शुभ कार्य, **'आयत्य'** बोलते हैं- भविष्य में और **तदात्य** बोलते हैं- तत्काल में, भविष्य में उनका कभी कल्याण नहीं हो सकता है, ऐसे कुटुम्बियों के समान जो किसान की तरह बीज को ही खा जाएँ। जिस तरह से किसान यदि अपने खेत में बोने लायक संचित बीज राशि को खा जाए तो उसका भविष्य में कोई कल्याण नहीं होता, उसे फिर कभी फसल के माध्यम से लाभ नहीं होता। इसी तरह से जो बीजों के बिना उसके अन्न उत्पन्न नहीं होता, उसी तरह से **पापी भी सुख के कारण भूत धर्म से जब दूर रहता है, तो भविष्य में भी उसे सुख की कोई प्राप्ति नहीं होती है।**

बीज राख फल भोगवै, ज्यों किसान जग माहिं।
त्यों चक्री नृप सुख करें, धर्म विसारे नाहिं॥

धर्म को भूल करके सुख की कल्पना करना व्यर्थ है। सुख मिलेगा तो धर्म से ही मिलेगा। वह धर्म जो आपके लिए बीज के रूप में डलता रहेगा तो वह आपको आगे जन्मों में भी सुख देता रहेगा। इसलिए कभी भी **धर्म का नाश करके कभी भी सुख की प्राप्ति की इच्छा नहीं करना चाहिए।** किसान समझदार होता है तो अच्छे-अच्छे जो बीज होते हैं, उन बीजों को अपने पास में सुरक्षित ढंग से रखता है। एक अलग कोठे में, अलग स्थान पर और उन्हीं बीजों का समय पर उपयोग करके अच्छी-अच्छी फसल तैयार करता है, फिर उस फसल में से भी अच्छे-अच्छे बीज निकाल कर के अपने पास रखता है, अगली फसल के लिए रखता है। अतः बीज क्या है? धर्म का बीज। आज जो मिला है, वह किससे मिला? उसी धर्म के फल से मिला। उस बीज को नष्ट करके अब हमें कोई वर्तमान में ऐसा पाप नहीं करना कि जिस सुख के लिए हम बीजभूत धर्म को ही नष्ट कर डाले। ये जो अधर्म की प्रवृत्तियाँ थी, ये यहाँ आपको बताई गई और उन्हीं प्रवृत्तियों में अनेक आपदाओं में डालने वाली जो प्रवृत्ति है- पर स्त्री सेवन, जिसका यहाँ पर उल्लेख किया गया। **थोड़े से विषय सुख के लिए हम तरह-तरह के अधर्म को और ऐसे पाप**

कार्यों में प्रवृत्ति कर जाते हैं, जिसके फल से हम अपने धर्म से ही, अपने उस धर्म के बीज को नष्ट कर देते हैं। कोई भी तरह के व्यसनों में पड़ गए, बुरी आदतों में पड़ गए तो यह क्या है? यह धर्म के बीज को नष्ट कर रहे हैं। इस तरह से यह धर्म पुरुषार्थ करने की यहाँ पर आपको बहुत बड़ा एक प्रेरणा दी जा रही है कि धर्म पुरुषार्थ का मतलब ही होता है, कोई भी हम आगे के काम करें, वह सभी हमारे धर्म को विनष्ट करके नहीं होने चाहिए। इसलिए धर्म नाम का यह जो समुद्देश है, यह तो बड़ा है और अर्थ और काम समुद्देश जो आगे हैं, ये छोटे हैं।

ग्रहस्थों को धर्म, अर्थ, काम तीनों का balance रखना चाहिए

धर्म की महिमा ज्यादा है, इसलिए यहाँ पर यह धर्म की बात बहुत बार धर्म में प्रवृत्ति कराने के लिए की जा रही है...

यः कामार्थावुपहत्य धर्ममेवोपास्ते, स पक्वक्षेत्रं परित्यज्यारण्यं कृषति॥ 46॥

क्या कहते हैं? जो काम और अर्थ को नष्ट करके या छोड़ करके धर्म की उपासना करते हैं, वह पके हुए काटने योग्य धान्य आदि खेत को छोड़कर के जंगल को जोतते है। **'अरण्यं कृषति'** मतलब कि काम और अर्थ को छोड़ कर के धर्म की ही केवल उपासना करने वाले लोगों के लिए भी यहाँ पर कहा जा रहा है कि वे भी केवल ऐसे ही समझो कि फसल को छोड़ कर के अरण्य को जोत रहे हैं। क्या समझ में आया? **अर्थ पुरुषार्थ भी करना है और काम पुरुषार्थ भी करना है, धर्म को छोड़ करके नहीं करना है।** केवल धर्म पुरुषार्थ करे कोई व्यक्ति और कोई अर्थ का उपार्जन न करे, कोई काम पुरुषार्थ न करे तो वह व्यक्ति या तो बिल्कुल ही व्रती व्यक्ति होगा और या फिर जो है, वह बिल्कुल ही अकर्मण्य व्यक्ति होगा। समझ आ रहा है? **उपासना केवल उन्हीं व्यक्तियों के द्वारा की जाती है, जो धर्म को ही केवल अपने जीवन में अंगीकार करना चाहते हो, अर्थ और काम से कोई सम्बन्ध नहीं रखते हो।** लेकिन जो अर्थ और काम से सम्बन्ध रखते हैं, वह केवल अगर धर्म की उपासना करते हैं तो वह अनर्थ करते हैं। केवल धर्म क्या करेगा? अगर आपके पास धन नहीं होगा तो आप केवल धर्म के माध्यम से क्या कर लेंगे? आपके पास काम पुरुषार्थ नहीं होगा तो आप धर्म के लिए क्या कर लेंगे? धर्म के माध्यम से क्या कर लेंगे? **धर्म करने के लिए भी इसलिए कहा जाता है, धर्म उसी के लिए शोभित होता है जो अर्थ और काम दोनों पुरुषार्थ को साथ में लेकर के कर रहा हो।** इसलिए जितने भी महापुरुष हुए हैं सब, ये अर्थ और काम पुरुषार्थ के साथ में धर्म पुरुषार्थ को साधे हैं। **धर्म पुरुषार्थ अकेला कभी पुरुषार्थ कहलाता ही नहीं है, फिर तो वह मोक्ष पुरुषार्थ हो जाएगा।** नहीं समझ आया? अगर आपको किसी भी अर्थ और काम से कोई प्रयोजन नहीं है, तो फिर

आपके लिए मोक्ष पुरुषार्थ साधना उचित है, फिर वह धर्म कोई काम का नहीं है। वे लोग तो अलग हो जाएँगे लेकिन जो **काम और अर्थ पुरुषार्थ के साथ में चल रहे हैं, उन्हें धर्म के साथ में ये काम और अर्थ पुरुषार्थ करने चाहिए।** यानि अगर वह धर्म ही केवल कर रहे हैं और कोई काम, अर्थ पुरुषार्थ नहीं कर रहे हैं तो भी उनके लिए कहा गया है कि वे जंगल को जोत रहे हैं, धान्य के खेत को छोड़ करके मतलब कि धन भी कमाओ। **अगर आपके पास में धर्म है और उससे आपको फसल मिली है, धन मिला है, तो उस धन का अच्छे ढंग से दूसरों के लिए उपयोग करने में और स्वयं के उपभोग करने में उस धन को लगाना, यह अर्थ पुरुषार्थ है और काम पुरुषार्थ भी करो, सन्तति आगे बढ़ेगी तो वह धर्म की सन्तति को बढ़ाने में भी आपका योगदान रहेगा।** सन्तति आगे बढ़ेगी तो धर्म भी आगे बढ़ेगा। क्या समझ आया? लोग सन्तति बढ़ाने के लिए काम पुरुषार्थ की प्रेरणा प्राप्त नहीं करते हैं। सन्तति अगर बढ़ेगी तो ही वह धर्म का पुरुषार्थ आगे बढ़ेगा। इसलिए गृहस्थ के लिए तीनों को बराबर मात्रा में सेवन करने के लिए कहा गया है। धर्म का ज्यादा अनुपात गृहस्थ के लिए नहीं होना चाहिए। **जिस अनुपात में धर्म हो, उसी अनुपात में धन भी हो और उसी अनुपात में अपनी इच्छा पूर्ति के लिए काम पुरुषार्थ भी हो।**

त्रिवर्गं वा समं सेवेत॥ 3॥ कामसमुद्देश

ऐसा नीति वाक्य और आता है। तीनों ही वर्ग, इनको वर्ग कहा गया है। इन तीनों वर्गों को समानता से सेवन करे। देखो! एक अच्छे गृहस्थ के लिए क्या कहा गया है? धर्म ज्यादा करना है, धर्म ज्यादा करना है। धन के लिए कोई पुरुषार्थ नहीं करना है या धन कमाना नहीं है या काम पुरुषार्थ नहीं करना है, **यह भी नीति शास्त्रों के विरुद्ध चलना है।** सुन रहे हो कि नहीं? आपको समझ में आ रहा है? आपको यह तो नहीं लग रहा महाराज कितना उल्टा बोल रहे हैं? उल्टा तो लग रहा होगा? हमेशा कहा जाता है...धर्म करो, धर्म करो, धर्म बढ़ाओ, धर्म बढ़ाओ, धन त्यागो, धन छोड़ो। **जो धर्म करने को कहा जा रहा है, वह धर्म भी इसलिए कहा जा रहा है ताकि आपका अर्थ और काम दोनों पुरुषार्थ उसी अनुपात से आगे बढ़ें।** अर्थ पुरुषार्थ करोगे तो उस धन के माध्यम से स्व-पर कल्याण दोनों करोगे और काम पुरुषार्थ करोगे तो भी उसके माध्यम से स्व-पर कल्याण दोनों करोगे।

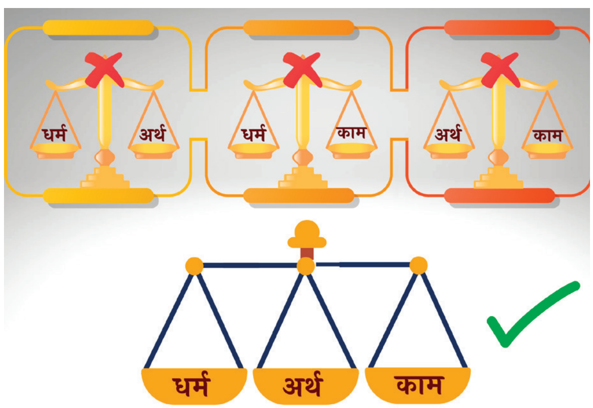

अच्छे उद्देश्य के साथ काम पुरुषार्थ भी पाप नहीं कहलाता है

काम पुरुषार्थ अभी आगे बताया जाएगा...क्या कहलाता है? **वह काम पुरुषार्थ भी पाप नहीं कहलाता है जो धर्म के लिए किया जाता है, धर्म की वृद्धि के लिए किया जाता है।** क्योंकि उस काम पुरुषार्थ के फल-स्वरुप आप अपनी इन्द्रिय सुखों की पूर्ति नहीं कर रहे हैं। आप क्या कर रहे हैं? धर्म की वृद्धि के लिए वह काम पुरुषार्थ कर रहे हैं, इसलिए उसे पाप नहीं कहा गया। वह धर्म के साथ ही अनुबन्ध रखने वाला वह पुरुषार्थ है। **जैसे धन का उपार्जन भी न्याय-नीति से करने पर वह पाप नहीं कहलाता है, उसी तरह से काम पुरुषार्थ भी अच्छे उद्देश्य के साथ रखने पर वह पाप नहीं कहलाता है।** उद्देश्य बस आपका अच्छा होना चाहिए और वह उद्देश्य क्या? क्या उद्देश्य होगा? **'वीर वंश की वृद्धि'** यह उद्देश्य होना चाहिए। कौन से वंश की? अपने वंश की नहीं, वीर वंश की वृद्धि। यह वीर वंश की वृद्धि करने के लिए किया गया यह पुरुषार्थ भी आपके लिए धर्म है। इसे आप ऐसे ग्रन्थों के माध्यम से ही समझ सकते हैं, इसलिए **नैतिक पुरुष काम और अर्थ के साथ में ही धर्म का सेवन करते हैं। धर्म औषधि की तरह है, औषधि का सेवन अकेला नहीं किया जाता है। भूख के साथ में अगर आप भोजन नहीं लेंगे और केवल औषधि खाएँगे तो भी मिट जाएँगे।** नहीं समझ आया? औषधि कैसे खाई जाती है? केवल औषधि-औषधि खा लिए महाराज! उस औषधि को भी पचाने के लिए या उस औषधि की गर्मी को भी शान्त करने के लिए कुछ भोजन चाहिए कि नहीं चाहिए? **धर्म का प्रयोग औषधि की तरह कहा गया न?** औषधि ज्यादा हो जाए और भोजन कुछ हो ही नहीं तो बताओ रोगी बचेगा? क्यों? रोगी के अनुकूल होगी यह बात? औषधि का सेवन औषधि की तरह ही हो और वह इस तरह से हो कि जो भी हम खा रहे हैं, वह सब हमारे लिए औषधि के कारण से हमारे लिए सब अनुकूल हो जाए। जो भी हम खा रहे हैं, पी रहे हैं, वह सब उस औषधि के कारण से रोग के निवारण में काम आए और वह सब हमारे शरीर के पोषण में काम आए। ऐसी क्षमता औषधि में होती है तो औषधि को भोजन और पानी के साथ में लिया जाता है। **केवल भोजन पान करो और रोगी होने के कारण से अगर औषधि नहीं लोगे तो भी काम नहीं बनेगा और अगर केवल औषधि लेते रहोगे और भोजन पान का बिल्कुल भी सेवन नहीं करोगे तो भी आचार्य कहते हैं आपके लिए रोग दूर नहीं होगा।** कुछ समझ आ रहा है कि नहीं आ रहा है? कुल मिलाकर के यह है, **balance बना कर के चलना सबसे कठिन काम होता है।** अतिरेक करने का मन तो सबका होता है लेकिन **balance के साथ में सब काम करना, इसका नाम पुरुषार्थ कहा जाता है।** Balance समझते हो? सब चीजों का सन्तुलन बना कर के चलना। इसलिए यह नीति का चिन्तन करना चाहिए कि **धर्म के बिना अर्थ और काम पुरुषार्थ का सेवन नहीं करना और अर्थ और काम पुरुषार्थ करते हुए भी अगर वह केवल धर्म नहीं करता है, तो भी वह उसके लिए लाभ नहीं मिलता है। इसी तरह से केवल धर्म ही धर्म का भाव**

करे और अर्थ और काम पुरुषार्थ न करे तो भी वह, जो फसल मिली है उसको तो नहीं कर रहा है और नई फसल जोतने के लिए जंगल में मेहनत कर रहा है। धर्म कहाँ से होगा? इसका मतलब यह धर्म आपके अर्थ उपार्जन से होगा, काम पुरुषार्थ से होगा। अलग से जंगल में अलग अपना जंगल जोतने की जरूरत नहीं है कि भाई! धर्म इसका नाम है, धर्म और किसी का नाम नहीं है। न्याय-नीति से अर्जित किया हुआ धन ही और उचित रीति से वीर वंश की वृद्धि के लिए किया गया पुरुषार्थ ही आपके लिए धर्म है। यह बात समाज के सभी लोगों को अच्छे ढंग से समझने की कोशिश करना चाहिए। आ रही है समझ में? बहुत देर हो गई है अब तक तो आ जाना चाहिए। आज के लिए इतना पर्याप्त है। आगे की बात फिर, थोड़ी सी रह गई है बाद में करेंगे।

'नीतिवाक्यामृत' आचार्य सोमदेव सूरि द्वारा विरचित एक नैतिक, सामाजिक और राजनीतिक मूल्यों का आकलन करने वाला ग्रंथ है। इसमें कई chapter हैं, जिन्हें समुद्देश के नाम से कहा गया है। पिछले परिचर्चा में हमने धर्म समुद्देश को ही पढ़ा है। अभी उसके कुछ और सूत्र शेष हैं, उन्हीं को आगे बढ़ाते हुए सूत्र नम्बर 47 यहाँ से पढ़ते हैं...

SCAN TO WATCH

स खलु सुखी योंऽमुत्र सुखाविरोधेन सुखमनुभवति॥ 47 ॥

लोक और परलोक सम्बन्धी सुखों का ज्ञान

आचार्य कहते हैं...**बुद्धिमान मनुष्य का कर्तव्य क्या होना चाहिए? धर्म पुरुषार्थ करते हुए बुद्धिमान मनुष्य को सुख को भी अनुभव में लाना चाहिए और वही निश्चय से बुद्धिमान कहलाता है,** जो अमुत्र अर्थात् परलोक में प्राप्त होने वाले सुख का विरोध न करते हुए सुख का अनुभव करें। यानि **इस लोक में जो सुख भोगा जाए, उस**

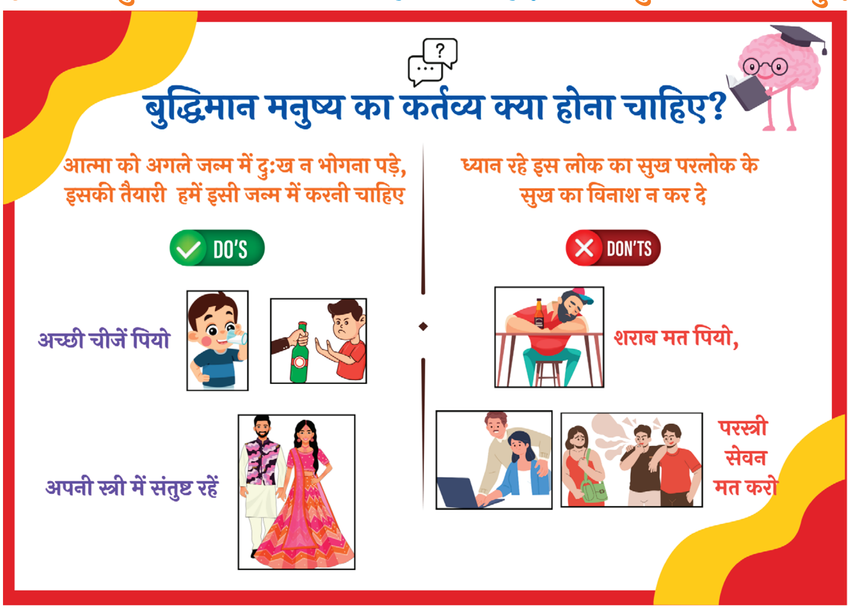

सुख के माध्यम से हमें परलोक में मिलने वाले सुख का विनाश न हो जाए। दो तरह के सुख हैं...**इस लोक का भी सुख है और परलोक का भी सुख है।** जब परलोक के सुख की बात करते हैं तो कई लोगों को उस पर विश्वास नहीं होता है लेकिन जन्म-मरण पर विश्वास तो बना रहता है। यूँ कह सकते हैं कि वह **इस लोक संबंधी कुछ ऐसे सुख हैं, जो हमें अत्यधिक पाप का बंध कराने वाले हैं, उन सुखों के कारण से हम परलोक संबंधी सुखों का विघात कर लेते हैं।**

पूर्व जन्म के धर्म के फल से इस लोक में सुख

अगर हम इस लोक में सुख को प्राप्त करना चाहते हैं तो वह सुख तो हमें प्राप्त हो रहे हैं, हो जाएँगे...वह हमारे पूर्व जन्म के धर्म के फल से प्राप्त सुख होते हैं। लेकिन आगे चलकर हमारा फिर से और भी जन्म होगा, हमारी आत्मा वही रहेगी और हम किसी न किसी पर्याय में फिर से जन्म लिए होंगे। वहाँ हमें दु:ख न भोगना पड़े, **इसकी भी तैयारी बुद्धिमान पुरुष इसी जन्म में रखता है।** क्योंकि भारतीय संस्कृति में एक चार्वाक दर्शन को छोड़कर बाकी सभी दर्शन आस्तिक दर्शन हैं, **चार्वाक एक नास्तिक दर्शन है।**

चार्वाक दर्शन एक नास्तिक दर्शन

चार्वाक दर्शन में ही यह कहा जाता है कि बस! खाओ-पियो मौज करो। किसने देखा? कहाँ आत्मा? कहाँ परलोक? यह दर्शन, चार्वाक दर्शन जिसे कौल मत भी कहा जाता है और इस तरह से इनका **एक सूक्ति वाक्य है–**

'यावज्जीवेत् सुखं जीवेद् ऋणं कृत्वा घृतं पिवेत्,
भस्मीभूतस्य देहस्य पुनरागमनं कुतः ॥'

कहते हैं...जब तक जीवन है, सुख से जियो। ऋण भी लेना पड़े तो कोई बात नहीं, घी पियो, मस्त रहो। **'भस्मी भूतस्य देहस्य'** देह को तो भस्म हो जाना है, उसके बाद में क्या मिलना है? कहाँ पुनर्रागमन होता है? कहाँ परलोक होता है? इस पर उनका कोई विश्वास नहीं होता है इसलिए भारतीय दर्शनों में इसे नास्तिक दर्शन कहा गया है।

नास्तिक व्यक्ति के लिए किसी भी प्रकार की सिद्धि नहीं हो सकती

आप समझें कि इस तरह की नास्तिकता यदि अन्दर है तो फिर आप कुछ भी करो, कुछ भी भोगो, कोई आपको रोकने वाला नहीं है। लेकिन **अगर आप आस्तिक दर्शन पर विश्वास रखते हैं और आपको यह विश्वास होता कि हमारा भी पिछले जन्मों से अनेक बार जन्म-मरण होता आया है और आगे भी होता रहेगा, हमारी आत्मा इस जन्म में अर्जित किए हुए कर्मों का फल ही अगले जन्म में भोगता है तो हमें इस जन्म में अच्छे कर्म ही करना चाहिए।** अन्यथा नास्तिक बन जाने से आपको कोई भी तरह का विश्वास नहीं होगा और किसी भी तरह की न तो जीव सिद्धि हो सकती है, न आत्मा की सिद्धि हो सकती है और न ही कोई धर्म अनुष्ठानों को करने का कोई प्रयोजन सिद्ध हो सकता है।

अन्याय के साथ सुख भोगने से परलोक सुख का विनाश

धर्म अनुष्ठान किस लिए किए जाते हैं? आदमी सत् कार्यों को क्यों करता है? सत् पथ पर क्यों चलता है? अगर उसे इसका फल जन्म-जन्मांतरों तक न मिले तो वह सत् कार्य भला क्यों करेगा? **आत्मा अविनश्वर है, यह सभी आस्तिक दर्शनों ने माना है और आत्मा के ही इन संस्कारों से, कर्म के संयोगों से, यह आत्मा जन्म-जन्मांतरों को प्राप्त होता है।** इसलिए इस लोक के भी सुख को ध्यान में रखना और परलोक का भी सुख ध्यान में रखना। बुद्धिमान मनुष्य के लिए यहाँ कहा जा रहा है...सुख को भोगे, लेकिन इतना न भोगे ऐसा न भोगे, इस अन्याय के साथ न भोगे कि परलोक में सुख ही न मिले और इस लोक के सुख में ही आप सारा जीवन चुका ले, सारा पुण्य पाप में बदल ले। यह यहाँ पर चेतावनी दी जा रही है। सुधी वह कहलाता है, जिसकी बुद्धि संभली हुई हो और वह परलोक के सुख का विनाश न कर पाए, इस तरह से यहाँ सुख को भोगे, इस तरह से सुख भोगने के लिए यहाँ पर प्रेरणा दी जा रही है।

पाप के माध्यम से सुख भोगने से अगले जन्म में आत्मा की दुर्गति

सुख भोगने की मनाई नहीं है। अब परलोक का विनाश करके सुख कैसे भोगा जाता है? वह पाप के माध्यम से होता है। आप कहोगे **शराब पीने में मजा आता है**...आता होगा, जिन्होंने पी होगी, **वे जानते होंगे। हो सकता है सुख मिलता हो लेकिन उस सुख के कारण से आपके लिए परलोक में अत्यंत दुःख मिलेगा। यह अगर आपको विश्वास नहीं होगा तो**

आपके लिए इस जन्म में प्राप्त हुए सुखों का उपभोग तो हो जाएगा लेकिन अगले जन्मों में आपकी बहुत दुर्गति हो जाएगी। आत्मा जब नरकों में गिर पड़ता है, पशु आदि पर्यायो में उसका जन्म हो जाता है तो आप देख सकते हैं कि कितने कष्टों से उसका वह जीवन दुःखमय बीतता है और हर क्षण वहाँ दुःख होता है। इसलिए यहाँ नीतिकार कहते हैं...समाज के हर व्यक्ति को यह समझना है। **बुद्धिमत्ता इसी में है सुख भोगो, आपको पीने का सुख चाहिए तो शराब मत पियो,** अच्छी चीजें पियो, जिससे इस जन्म में भी तुम्हें सुख मिले और अगले जन्म में भी तुम्हारे सुख का विघात न हो। ठंडाई पियो, लस्सी पियो, cold drinks न पियो लेकिन cold ही अगर तुम्हें drink पीना है तो उसमें कुछ भी बर्फ आदि डालकर भी पी लो, juice पी लो तो चलेगा लेकिन ऐसी गंदी चीजें न पियो, जिससे आदमी की बुद्धि भ्रष्ट हो जाए। नशे में वह बिल्कुल इतना चूर हो जाए कि उसे अपनी माँ, अपनी बहन भी समझ में न आएँ। इस तरह की अज्ञानता से जो पाप अर्जित किए जाते हैं, वे परलोक के सुख का विरोध करके वह इस जन्म का सुख भोगने वाले सुख कहे जाते हैं।

तात्कालिक सुखों के लिए परलोक के सुख का विघात न करना ही बुद्धिमानी

यह समझने की बात है। स्त्री सुख! आगे आपको बताया जाएगा, काम समुद्देश आ रहा है, स्त्री का सुख भी भोगो लेकिन आचार्य कहते हैं...**परस्त्री सेवन का सुख भोग करके अगले जन्म के लिए दुःख मत पैदा करो।** अन्यथा नरकों में ऐसी गरम-गरम लोहे की पुतलियाँ वहाँ मिलेंगी और एक नारकी, दूसरे नारकी को वहाँ उन पुतलियों पर ऐसे फेंकता है...ले कर अब आलिंगन कर। इस तरह का वहाँ पर वह दुःख मिलता है। पशु पर्याय में भी ऐसे जीव दुःख को प्राप्त करते हैं और इसी कारण से वह इस जन्म के कुछ सुखों को भोगने के लिए परजन्म को जब नहीं देख पाते हैं तो उन्हें नास्तिक कहा जाता है, बुद्धिमान नहीं कहते हैं, उन्हें मूर्ख कहा जाता है। इसलिए यहाँ कहा जा रहा है **बुद्धिमान व्यक्ति कभी भी अन्याय से प्राप्त होने वाले तात्कालिक सुखों को प्राप्त करते हुए उनके कारण से अपने परलोक के सुख का विघात न कर ले, यह चेतावनी यहाँ दी जा रही है।** मद्यपान, परस्त्री सेवन, ये इस तरह के कार्य हैं जिनके माध्यम से इस जीव को परलोक में अत्यंत दुःखों की प्राप्ति होती है। यह भाव अगर समाज में एक चेतना का विषय बन जाए तो जैसे आप अभी सुन रहे थे कि चेतना कई तरह से जागृत करनी पड़ती है, **आज समाज में इस भाव के लिए भी चेतना जागृत करने की बहुत बड़ी आवश्यकता है।** आप यह न समझें कि यह सब काम कोई गैर लोग करते हैं, यहाँ बैठे हुए लोग नहीं करते। सब कुछ सब जगह पर होता है और इस तरह के कार्य अच्छे पढ़े-लिखे लोगों के माध्यम से भी होते हैं, **जैन समाज में भी हो रहे हैं और अनेक तरह की परेशानियाँ समाज में, घरों में, परिवारों में देखने को मिलती हैं।** इस तरह की चर्चाएँ अक्सर हमें हर शहर, हर गाँव में सुनने को मिलती हैं।

नैतिक चारित्र की कमी से अगले जन्म में पशु-पक्षी की पर्याय

आदमी के नैतिक चरित्र अच्छे नहीं मिलते तो अनेक लोग उनके ऊपर आपत्तियाँ उठाते हैं लेकिन सामने कुछ कह नहीं पाते हैं। कारण? **कोई किसी का बुरा बनना नहीं चाहता।** लेकिन हर व्यक्ति के अन्दर यह चेतना आनी चाहिए, ह**र व्यक्ति को अपने किए जाने वाले पाप से संभलना चाहिए और उसे एक प्रायश्चित के भाव से उस पाप का त्याग करना चाहिए कि हम थोड़े से सुखों के लिए अपने आगामी जीवन को नष्ट न करें और आगामी समय में आने वाली हमारी जो पर्याय हैं वह भी सुखी रहें।** हम इस जन्म में इस तरह से सुख का उपभोग करें। **आचार्यों ने सुख के अनुभव के लिए मना नहीं किया है लेकिन जो सुख हमारे लिए अगले जन्म में पशु बना दें, पक्षी बना दें, ऐसे सुख के लिए मना किया है।** आप देखते हो... कबूतर-कबूतरी, शूकर-शूकरी और क्या बोलूँ? देखते हो न आप! सब यह सब भी इसी सुख के पीछे रहते हैं। पूरा जीवन इनका इसी सुख में गुजरता है। इसलिए जो इस जन्म में अत्यंत काम आसक्ति के साथ में अपना जीवन बिताते हैं, अगली पर्यायों में वे इसी तरह के जीव बनते हैं जो इनके लिए और कुछ काम नहीं रहता। बस! यही काम रहता है। **यह ध्यान हर पढ़े-लिखे व्यक्ति को होना चाहिए, इसी का नाम बुद्धिमत्ता है।**

स्कूली शिक्षा के साथ नैतिक आचरण व सामाजिक चेतना भी आवश्यक

हम आजकल की स्कूली शिक्षाओं में यह बुद्धि नहीं दे पा रहे हैं और सब बुद्धि दे रहे हैं। **अगर स्कूली शिक्षाओं में यह बुद्धि मिलने लगे तो बच्चे बड़े होकर के कभी भी धर्मभ्रष्ट न हों, न्यायभ्रष्ट न हों।** नैतिक आचरण के साथ में समाज में जब रहेंगे, चलेंगे तो किसी भी प्रकार के उनके लिए इस जन्म में भी कलह नहीं मिलेंगे और अगले जन्म में भी उन्हें दुःखों की प्राप्ति नहीं होगी। **हमें यह बुद्धि हर एक व्यक्ति को, बच्चे को, बड़े को देना चाहिए। इसी से सामाजिक चेतना आएगी और इसी से नैतिक व्यक्तित्व**

का निर्माण होगा। यह आज के समय में बहुत बड़ी चीज है। शराब पीना और इस तरह के परस्त्री सेवन, यह भी एक व्यसन है, वेश्या गमन यह भी व्यसन है। जिनके कोई अता-पता नहीं होते हैं ऐसी बाजारू स्त्रियों के साथ भी अनेक लोगों के सुख भोगने के कार्य रहते हैं। उनको यहाँ पर कहा जा रहा है...वह अपना परलोक न बिगाड़े, सुख का अनुभव करते हुए अपनी स्त्री में संतुष्ट रहें। अपने परिवार को ध्यान में रखते हुए अपने जीवन को अच्छा बनाएँ, यह यहाँ पर कहा जा रहा है। बुद्धिमान मनुष्यों का यह कर्तव्य है, यह नीति है। इस तरह की नीति बताते हुए आगे कहते हैं...अन्याय से अगर हमें सुख का लेश भी प्राप्त हो जाता है, तो आगे हमें हानि ही होती है।

अनवधिर (बहुत काल तक) दु:खों के अनुबंध का कारण इन्द्रिय सुख

इदमिह परमाश्चर्यं यदन्यायसुखलवादिहामुत्रचानवधिर्दु:खानुबंध: ॥ 48 ॥

आचार्य कहते हैं...यह परम आश्चर्य की बात है कि इस लोक में थोड़े से अन्याय जनित सुख को प्राप्त करके, परलोक में **अनवधिर (अनवधि मतलब बहुत काल तक)**, बहुत काल तक, बहुत दीर्घ समय तक उसे दु:खों का अनुबंध मिलता है अर्थात् दु:ख भोगने पड़ते हैं। क्योंकि आप जानते हो **नरकों में कम से कम भी उम्र दस हजार वर्ष की होती है,** यह ध्यान रखना! कितनी? यह कम से कम, कभी-कभी बहुत कम लोगों को मिलती है, ज्यादा वाली, ज्यादा मिलती है; **अधिक उम्र जो है असंख्यात वर्ष की होती है। एक सागर, दो सागर, तीन सागर से 33 सागर तक की होती है।** असंख्यात वर्षों तक दु:ख को भोगना, पशु-पक्षियों की पर्याय में एक बार अगर आत्मा चला जाता है तो वहाँ पर उसे संभलने का मौका नहीं मिलता तो वह उन पशु पक्षियों की पर्यायों में ही निरन्तर उसी में जन्म ले-ले कर अपना जीवन गुजार कर, पाप को बढ़ाते-बढ़ाते, एकेन्द्रिय निगोद पर्याय तक भी चला जाता है। **जिन एकेन्द्रिय को, आप जीव तक नहीं देख पाते कि जीव हैं, उन एकेन्द्रिय पर्यायों में वह आत्मा चला जाता है।** दुनिया के अन्दर ऐसा घोर अंधकार है। थोड़ा सा यह आँखें मिली, कान मिले, मन मिला, मनुष्य के लिए तो वह तात्कालिक इन्द्रिय सुखों की प्राप्ति के लिए इतने दु:ख का अपने अन्दर बंध न कर ले कि लंबे समय तक उसे दु:ख प्राप्त हो और वह इस दु:ख को नहीं देख पा रहा है, यह बड़े आश्चर्य की बात है।

आज की शिक्षा प्रणाली से नैतिक पतन

यह आचार्य बड़ा विस्मय कर रहे हैं कि इसके सामने अनन्त भविष्य अंधकारमय है, वह नहीं दिख रहा है लेकिन थोड़ा सा सुख ऐसे दिखाई दे रहा है और उस सुख के लिए यह सब तरह के पाप करने को तैयार हो जाता है। **आजकल के बच्चों की यही कहानी है। किसने देखा बाद**

का सुख? जो कुछ मिला है, सब सुख भोगने के लिए ही मिला है। जिंदगी मिली है... enjoy करने के लिए मिली है, enjoy करो, entertainment करो। कैसे enjoy करो? जैसे हो सके, वैसे करो...जैसे सब कर रहे हैं वैसे करो। **यह आज के बच्चे स्कूली शिक्षा से सीख रहे हैं।**

उस education के माध्यम से व्यक्तियों के अन्दर इस तरह के चरित्रों की गिरावट हो रही है कि **उन्हें कोई व्यसन...व्यसन नहीं लगता, कोई पाप...पाप नहीं लगता।** क्या फर्क पड़ता है? आप लोग भी चाय पीते हैं, हम लोग सिगरेट पी लेते हैं? क्या फर्क पड़ता हैं? आप लोग चाय पीते हैं, हम थोड़ी सी और drink कर लेते हैं? क्या फर्क पड़ता है? **तर्क देने के लिए सब बुद्धियाँ हैं। हर चीज यहाँ पर खाने-पीने के लिए बनी है, छोड़ने के लिए बनी है क्या?** अगर चीजें हैं तो खाना-पीना चाहिए। चाहे वह pizza हो, burger हो, non-veg हो, कुछ भी हो। चीजें खाने के लिए हैं तो खाना चाहिए। यह आज की पढ़ी-लिखी पीढ़ियों के तर्क हैं। जो पीने के लिए है वह पीना चाहिए, जो चीजें भोगने के लिए है, उन्हें भोगना चाहिए। क्यों नहीं हम भोगे? क्यों नहीं हम इनका उपयोग करें? आखिर हम नहीं करेंगे तो क्या दरिद्री लोग करेंगे? पैसे वाले ही तो करेंगे। हमारे पास है, हमने job आखिर किसलिए job की? हमने किसलिए कमाया है? हमने अपनी जिंदगी के बीस साल किस लिए खपाए? ये **आज बच्चों की बुद्धियाँ चल रही हैं और जब इस तरह से ज्ञान काम करेगा तो आप समझें कि समाज किस तरह के नैतिक पतन की ओर जा रहा है?** और **यह सब आज की शिक्षा प्रणाली के माध्यम से यह पतन ज्यादा हो रहा है।**

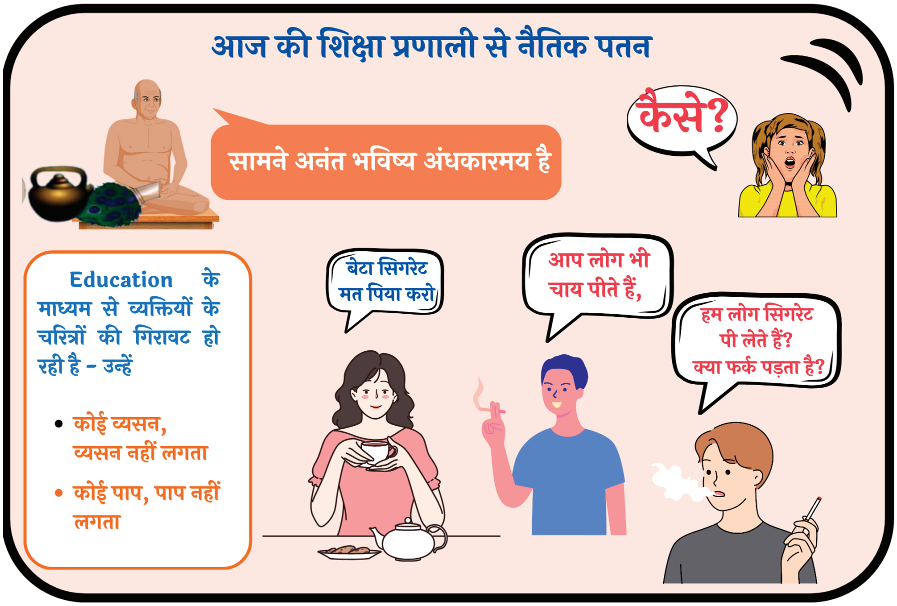

अन्यायपूर्वक अधिक सुख की अपेक्षा न्यायपूर्वक कम सुख श्रेयस्कर

बच्चों का चरित्र सुरक्षित रहना, आजकल की शिक्षाओं के माध्यम से बहुत दुर्लभ हो गया है और जिस किसी तरह से वह कहीं पर रह भी जाए तो आगे जाकर जहाँ वह job करता है तो वहाँ जाकर वह धर्म विरुद्ध विवाह आदि करके भी और ज्यादा वह धर्म की हानि कर बैठता है। यह जो पतन है यह सबसे ज्यादा जैनत्व के या चरित्र के पतन का सबसे बड़ा कारण बन रहा है। इसलिए यहाँ कहा जा रहा है...**अन्याय से थोड़ा सुख प्राप्त करने की अपेक्षा से न्यायपूर्वक थोड़ा सा कम सुख मिले, उसे प्राप्त कर लेना अच्छा है। लेकिन अन्याय से अधिक सुख प्राप्त करने की इच्छा नहीं करनी चाहिए।** इससे बहुत हानि होती है और आगामी जीवन बहुत बुरा बनता है। यह यहाँ पर चेतावनी देते हुए नैतिक व्यक्ति के कर्तव्यों को बताया जा रहा है।

धर्म और अधर्म की पहचान

आगे कहते हैं –

सुखदु:खादिभिः प्राणिनामुत्कर्षापकर्षौ धर्माधर्मयोर्लिङ्गम्॥ 49॥

देखो! यह कहते हैं...**अगर आपको देखना है कि हमने पिछले जीवन में धर्म किया कि अधर्म किया तो उसकी पहचान क्या है?** **'धर्माधर्मयोर्लिङ्गम्'** लिंगम अर्थात् पहचान। धर्म की पहचान क्या है? अधर्म की पहचान क्या है? **सुख दुःख आदि के द्वारा प्राणियों को इस जन्म में जो**

उत्कर्ष और अपकर्ष मिलता है यही उनके धर्म और अधर्म की पहचान है। पिछले जन्म में जिन्होंने इस तरह के नीति वाक्यों से, अपने नीति परक आचरणों से अपना जीवन बनाया और उसी धर्म के माध्यम से इतना पुण्य कमाया कि इस जन्म में भी वह अच्छे व्यक्ति बने, धर्म आदि करने की योग्यता आई, अच्छा सुख आदि प्राप्त कर रहे हैं और उनके जीवन में उत्कर्ष होता चला जा रहा है, **यह किसका फल है? यह धर्म का फल है** और **जीवन में दु:ख आते जाए, हर समय दु:ख ही मिलता जाए और जीवन अपकर्ष को प्राप्त होता चला जाए तो यह पिछले जन्म के किए हुए अधर्म का फल है।**

उत्कर्ष धर्म का व अपकर्ष अधर्म का फल

धर्म और अधर्म की पहचान करने के लिए हमें प्राणियों के यह उत्कर्ष और अपकर्ष ही देखने चाहिए, जो उनके सुख और दु:ख को देने वाले हैं। इसलिए सभी के अन्दर यह विश्वास आना चाहिए कि अगर नास्तिक मत को मान लिया जाए कि सब जीव यहाँ पर अचानक से जन्म ले लेते हैं और अचानक से कोई भी पंचभूतों से जीव बन जाते हैं और जीव बनने के बाद में उनकी कोई भी एक time life रहती है। Life time के बाद में वह बिल्कुल नष्ट हो जाते हैं, फिर आगे कुछ नहीं होता है तो **किन्हीं जीवों को जन्म से सुख क्यों मिलता है और किन्ही जीवों को जन्म से दु:ख क्यों मिलता है? इसका हेतु क्या दिया जाएगा?** इसके पीछे क्या कारण बताया जाएगा? कुछ ऐसे जीव हैं जो जन्म से ही सैकड़ों रोगों से परेशान हैं, ऐसे अनेक बच्चे आपको देखने को मिलेंगे जो जन्म लेते ही लाखों-लाखों रुपए की दवाईयाँ Doctor के माध्यम से उनके लिए लग गई है और अभी तक स्वस्थ नहीं हो पाए। माता-पिता का जीवन भी उनके साथ में क्लेशमय हो जाता है। यह दु:ख कहाँ से आते हैं? **यह सब पूर्वजन्म के अगर दु:ख नहीं होंगे तो अचानक से अगर सभी की उत्पत्ति यहीं पर हो रही है तो सबकी फिर एक जैसी उत्पत्ति होनी चाहिए।** ये जीव को सुख-दु:ख अलग-अलग क्यों मिल रहे हैं? इससे स्पष्ट होता है...पिछले जन्म के संस्कारों के बिना, पिछले जन्म के कर्मों के फल के बिना, यहाँ पर हमें कुछ भी नहीं मिलता है। **इसलिए प्राणियों का जो कुछ भी आज अगर हमें उत्कर्ष दिखाई दे रहा है, अच्छे स्वास्थ्य दिखाई दे, अच्छे घर में शान्ति के वातावरण के साथ में घर में, परिवार में, कलह न हो, इस तरह से परिवार की वृद्धि दिखाई दे, व्यक्ति सुखमय जीवन जिए, यह सब उसके जीवन के जो उत्कर्ष है, धन आदि की वृद्धि होती चली जाए, हर तरह के जो जीवन में उत्कर्ष है, यह किसके फल से? यह पिछले जन्म के धर्म के फल से ही इस जन्म में हम थोड़ा सा पुरुषार्थ करते हैं तो हमें उस फल के माध्यम से ये हमें उत्कर्ष प्राप्त होते हैं।** अन्यथा जब पिछले जन्म के पुण्य हमारे साथ नहीं होते हैं तो **लाख पुरुषार्थ करने पर भी जीवन में उत्कर्ष नहीं आता है, अपकर्ष ही बना रहता है।** इससे समझना चाहिए कि प्राणियों को धर्म और अधर्म अगर देखना हो तो ऐसे ही जीवों के सुख और दु:ख को देख कर समझ ले कि

यह धर्म का फल है और यह अधर्म का फल है।

अदृष्ट अर्थात् भाग्य का अधिष्ठाता हमारा आत्मा

किमपि हि तद्वस्तु नास्ति यत्र नैश्वर्यमदृष्टाधिष्ठातुः ॥ 50 ॥

इसे अदृष्ट कहा जाता है। पिछला जन्म, कर्म, भाग्य, पिछले जन्म का धर्म यह कुछ देखने में तो आता नहीं, इसलिए इसको एक क्या शब्द दिया? **अदृष्ट। इस अदृष्ट का अधिष्ठाता कौन?** वही आत्मा जिसने यह पिछले जन्मों में ये कर्म किए। इस जन्म में उसके लिए सब कुछ अदृष्ट है लेकिन **अधिष्ठाता अर्थात् आधार कौन है उसका? वह आत्मा ही है।** इस भाग्य का जो आधार है, इस दैव का जो आधार है, ऐसा आधार वाला आत्मा वह भाग्यशाली आत्मा कहलाता है और उस भाग्यशाली आत्मा के लिए संसार में ऐसी कोई वस्तु नहीं होती, जो उसे ऐश्वर्य देने वाली वस्तु उसे प्राप्त न हो अर्थात् भाग्यशाली व्यक्तियों को ही, पिछले जन्म के अच्छे कर्म करने वाले व्यक्तियों को ही, इस जन्म में हर ऐश्वर्य वाली वस्तु प्राप्त होती है। यानि उनके जीवन में ऐश्वर्य प्राप्त होना, इस जन्म के कारण से भी होता है। लेकिन इस जन्म के कारण से हमें पिछले जन्म के कर्मों के फल ज्यादा हमारे साथ में रहते हैं। **पुरुषार्थ हम इस जन्म में करते हैं लेकिन वह पुरुषार्थ फल देने के लिए हमारा भाग्य पिछले जन्म का बहुत ज्यादा साथ देने वाला होता है।** ज्यादातर यही होता है। **उन्हीं लोगों का पुरुषार्थ काम में आता है जिनके पास में उनका अच्छा भाग्य भी होता है।** अन्यथा आप देखें कितने ही ऐसे बच्चे होते हैं, IAS (आईएएस) UPSC (यूपीएससी) के exam देते हैं और अच्छे number आते हैं, सब कुछ आता है, Pre

भी पास कर लेते हैं, mains भी पास कर लेते हैं। interview में तीन-तीन बार से attempt दे रहे हैं pass नहीं कर पाते हैं। क्या कहें? पुरुषार्थ में कोई कमी नहीं है। पूरे full marks आ रहे हैं, सब pass हो रहे हैं, pre में, mains में लेकिन अब interview उनके हाथ में नहीं है। Interview के marks वह उस व्यक्ति के भाग्य से बनने वाला जो उसका व्यक्तित्व है और वहाँ पर जो interview लेने वाली जो बैठे हुए लोग हैं, उनके सामने अपना जो presentation देना है, यह अब जो है आपके पुरुषार्थ में नहीं है। यह सारी activity, यह आपका presentation, **यह सब आपके व्यक्तित्व जैसा बना हुआ है आपके भाग्य से, उसके अनुसार वहाँ निर्णय किया जाता है।**

पूर्व जन्म का अर्जित भाग्य व इस जन्म का पुरुषार्थ ही सफलता का आधार

वर्तमान का पुरुषार्थ इतना कार्यकारी होता है कि वह हमारे भाग्य में अगर कहीं कमी भी हो तो वह हमें इस तरह की सद्‌बुद्धि देता रहता है कि हम अपने भावों को न बिगाड़ते हुए अगले जन्म का या इस जन्म में भी हमें जो आगे आयु मिलने वाली है उसके लिए हम कुछ बुरा न कर पाएँ तो यह वर्तमान का पुरुषार्थ उसके साथ काम करता रहता है। अभी जन्म भी तो बहुत बाकी होता है तो वह बाकी जन्म भी अच्छे पुरुषार्थ करने वाले लोगों के लिए अच्छा आगे का समय देने वाला होता है। यह वर्तमान के पुरुषार्थ का फल होता है। **लेकिन हर कार्य में सफलता, इसके पीछे बहुत बड़ा भाग्य का भी एक कार्य होता है और यह हमें स्वीकार करना चाहिए।** इसलिए जो भाग्यशाली होते हैं वे कोई भी काम करते चले जाते हैं, सफल होते चले जाते हैं। हर ऐश्वर्य की उन्हें प्राप्ति होती चली जाती है। **वे कम समय में भी बहुत अच्छा name और fame कमा लेते हैं, वे भाग्यशाली लोग कहलाते हैं।** कितना percent भाग्य को दे और कितना percent पुरुषार्थ को दे? अगर हम यह देखें तो आप देखोगे आप खुद महसूस कर सकते हो, जो बच्चे अच्छे पुरुषार्थ के साथ में, अच्छा काम करते हुए आगे बढ़ रहे हैं, उनके आसपास इस तरीके की जो चीजें मिलती चली जा रही हैं वह सब उनके भाग्य से मिलती जाती है, अनुकूलताएँ बनती जाती हैं। किसी भी

तरह का उनके लिए वातावरण भले ही एक शहर में रहने वाले बच्चे होते हैं, एक स्कूल के एक ही कमरे में पढ़ने वाले बच्चे होते हैं लेकिन उनके लिए अलग-अलग तरह की मानसिकताएँ बनती चली जाती है। वह कहाँ से उन्हें inspiration मिलती है? **वह inspiration जो मिलती है, वह उनको अपने अच्छे अर्जित कर्मों के कारण से मिलती है, जो वह अलग अपनी line choose कर लेते हैं।** इसलिए **90% हमारा पूर्व जन्म का भाग्य काम करता है और 10% हमारा पुरुषार्थ काम करता है,** जो हमें सही दिशा में उस भाग्य को ले जाने के लिए प्रेरित करता है। इसलिए तो **वह पुरुषार्थ हमारा भाग्य बन जाता है, जब हम इस जन्म में वह अच्छा पुरुषार्थ पिछले अच्छे भाग्य के अनुसार करेंगे तो यही आगे आने वाले time के लिए हमारा भाग्य बन जाता है।**

कर्मों के फल

उतार-चढ़ाव जीवन में इसलिए आता है क्योंकि **पूर्व जन्म के बंधे हुए कर्म के फल भी एक जैसे नहीं होते हैं।** कभी वही कर्म के फल हमारे लिए पूर्व जन्म के अच्छे फलों के उदय से हमने मान लो अच्छी शिक्षा प्राप्त कर ली। लेकिन कुछ ऐसे भी कर्म हमारे उदय में आ गए कि हमारे परिवार में अनेक विघटन हो गए, हमारे परिवार के अनेक सदस्यों की अकाल में मृत्यु हो गई, हमें उन परिवारों की जिम्मेदारी को निभाने के लिए अपनी शिक्षा के उस समय को हमें अलग कहीं लगाना पड़ा। हमारा मानसिक संतुलन बिगड़ने लगा, अनेक तरह के अंतराय और असाता वेदनीय कर्मों का फल हमें अलग से देखने को मिलने लगा, यह भी उतार चढ़ाव पूर्व जन्म में बंधे हुए कर्मों के फल से ही होते हैं। इसलिए **सावधानी से इस जन्म का पुरुषार्थ करते हुए अपनी बुद्धि को वर्तमान में अच्छा बनाए रखने का पुरुषार्थ करना, यह सबसे बड़ा पुरुषार्थ है।** क्योंकि इसी के माध्यम से आप अपने आगे आने वाले भविष्य को अच्छा बना पाएँगे। वही भाग्य बन जाएगा। **पिछला कर्म का फल अगर आपको गलत भी मिलने वाला होगा लेकिन इस जन्म के पुरुषार्थ में आप अगर अड़िग हैं तो वह फल आपको देकर चला जाएगा लेकिन वह आपके भविष्य को नहीं बिगाड़ेगा, यह आपका पुरुषार्थ है।** इसलिए पुरुषार्थ हमारा काम करता है। कभी-कभी ऐसे कर्म होते हैं जो हमारे सारे पुरुषार्थ को बिल्कुल नेस्तनाबूद कर देते हैं, ऐसे भी कर्म होते हैं।

धैर्यपूर्वक इष्ट के प्रति आस्था बनाए रखने का पुरुषार्थ भाग्य को बढ़ाने में सहायक

प्रश्न आता है कि हमारा पुरुषार्थ तो सही दिशा में है लेकिन यदि हमारा भाग्य उतना favour नहीं कर रहा है, तो उस दिशा में हमें क्या करना चाहिए? भाग्य favour नहीं कर रहा है तो हमें उस भाग्य का निर्माण करने के लिए भी धैर्य पूर्वक अपनी आस्था, अपने परमात्मा के प्रति, इष्ट के प्रति बनाए रख कर, धैर्यपूर्वक हमें आगे बढ़ना चाहिए ताकि हम

उन पुराने कर्मों के फल को जीत सकें और उनसे सामना कर सकें। यह वर्तमान का हमारे अन्दर का, धैर्य के साथ में भाग्य को बढ़ाने का पुरुषार्थ होता है...**भगवान की भक्ति। धैर्य रखना ही पुरुषार्थ है** और वह भी तभी सम्भव होता है जब हम इस तरह से इन नीतियों के अनुसार चल

पाते हैं तब हम धैर्य रख पाते हैं कि हमें नीति से विरुद्ध कोई काम नहीं करना है, यह व्यक्ति के लिए रहे तो वह भाग्यशाली बनता चला जाता है।

धर्म समुद्देश का सारांश

इस तरह से इन पचास श्लोकों में धर्म समुद्देश नाम का यह chapter पूरा होता है। अन्त में धर्म के माध्यम से बताया गया कि धर्म करने वाले भाग्यशाली व्यक्ति के लिए कोई भी ऐसा कार्य नहीं है, ऐश्वर्य वाला कोई ऐसा उसके लिए कृत्य नहीं है, जो उसे प्राप्त न हो। वह ऐश्वर्यशाली होता है, भाग्यवान होता है, आज्ञा देने वाला होता है और इस तरह के ऐश्वर्यों की प्राप्ति उसे अपने भाग्य से हुआ करती है। यह धर्म समुद्देश पूर्ण होता है।

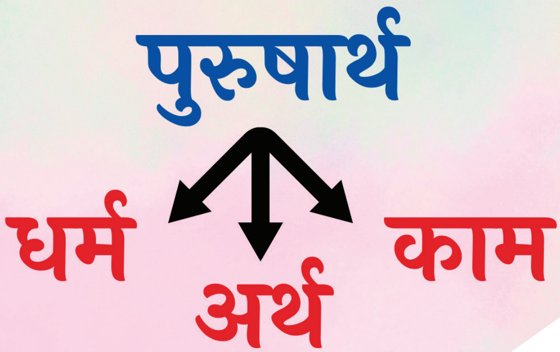

अर्थ समुद्देश

आगे बढ़ते हैं...अर्थ समुद्देश की ओर। **अर्थ अर्थात् धन है।** अब धन की भी बात की जाती है। धन के बिना तो कोई काम होता ही नहीं है। देखते हैं...धन की भी क्या गति है? क्या परिभाषा है? धन के भी क्या फल हैं? धर्म की चर्चा के बाद में अब धन की चर्चा पर आते हैं...

SCAN TO WATCH

यतः सर्वप्रयोजनसिद्धिः सोऽर्थः ॥1॥

देखो! अर्थ की कितनी अच्छी परिभाषा है। अर्थशास्त्र में यह परिभाषा होनी चाहिए। अर्थ अर्थात् धन...**धन उसे कहा जाता है जिससे सब प्रयोजनों की सिद्धि हो जाए।** मनुष्यों के लिए कोई भी ऐसे लौकिक प्रयोजन या अलौकिक प्रयोजन नहीं बचते हैं, जो धन से प्राप्त न हो जाएँ। **धन से सभी प्रयोजन की सिद्धि हो जाती है... लौकिक भी, अलौकिक भी।** इसलिए मनुष्य का वास्तविक जो धन है, वह धन ही है। नहीं समझ आया? **मनुष्य का वास्तविक धन जो है, वह धन ही है, जिसके माध्यम से उसे अपने सभी सुखों की प्राप्ति होती है।** उसके समस्त अपने उद्देश्य पूर्ण होते हैं और उसी के माध्यम से वह अपने प्रयोजनों को पूर्ण करता हुआ आगे बढ़ता है, तो उसे लगता है कि हाँ! हमने एक अच्छा जीवन जी लिया है। लेकिन **वह धन हमारे लिए किस रूप में प्राप्त होता है? हमें उसका उपयोग कैसे करना चाहिए और उस धन की वृद्धि के भी कैसे उपाय करने चाहिए?** वह भी यहाँ बताए जाते हैं। **धनाढ्य होने के क्या उपाय हैं?** यह आपको यहाँ बताया जा रहा है। कैसे आप एक rich man बन सकते हैं? कैसे आपका भी नाम अरबपतियों की श्रेणी में आ सकता है?

सोऽर्थस्य भाजनं योऽर्थानुबन्धेनार्थमनुभवति॥2॥

वह अर्थ का भाजन अर्थात् पात्र बनता है, मतलब धन उसके पास में टिकता है। **धन का पात्र**

वह बनता है जो अर्थ के अनुबंध से अर्थ का अनुभव करता है यानि **धन के अनुबंध से धन का अनुभव करता है। यह अर्थानुबंध क्या है?** उसके लिए आगे यहाँ एक सूत्र बताया जा रहा है, अर्थानुबंध के माध्यम से धन का अनुभव कैसे किया जाता है?

अलब्ध का लाभ

अलब्धलाभो लब्धपरिरक्षणं रक्षितविवर्धनं चार्थानुबन्धः ॥ 3 ॥

यह अर्थ का अनुबंध करने का यह तरीका बताया जा रहा है। **धनाढ्य होने के लिए क्या चाहिए?** अर्थानुबंध होना चाहिए और अर्थानुबंध किसे कहते हैं? उसके लिए यह **तीन चीजें बताई जा रही हैं- 'अलब्धलाभो'** क्या करना? अलब्ध का लाभ लेना अर्थात् जो हमारे पास में धन नहीं है, उस धन का हमें लाभ मिले, इसके लिए नीतियाँ बनाना और इसके लिए पुरुषार्थ करना यह अलब्ध का लाभ कहलाता है। जो धन हमें प्राप्त नहीं है, उसका हमें लाभ हो, इसके लिए जो वह उपाय करेगा धन कमाने के, वह अलब्ध लाभ में आएगा यानि धन को कमाने के आपको उपाय बनाते रहना पड़ेगा।

नीति पूर्वक तरीके से धन अर्जित करना

अगर आप धनाढ्य होना चाहते हैं तो **धन कमाने के आप उपायों पर ध्यान रखें कि धन किन-किन तरीकों से आता है।** Planning करते रहो और उसका implement भी करते रहो। कौन से business किस तरह से बढ़ते हैं? किस season में कौन से business चलते हैं? कौन से business evergreen रहते हैं? कौन से business हमेशा उत्कर्ष को प्राप्त होते

हैं? यह आपको अलब्ध के लाभ में सारी की सारी यह अर्थशास्त्र पढ़ा दिया जाएगा। यह भी आपको ध्यान रखना पड़ेगा कि धन कमाने का कौन सा वह तरीका अपनाया जाए, जो किसी भी प्रकार के उपाय से हो लेकिन नीति पूर्वक हो तो वह आप धनाढ्य होने का पहला तरीका अपना लेंगे। साम-दाम-दंड-भेद सब नीतियों से भी धन अर्जित किया जाता है। यह धनार्जन करने का तरीका राजाओं के लिए बताया गया है। किसके लिए? ग्रंथ तो सबके लिए होते हैं न! राजाओं के लिए धन अर्जित करने के लिए पड़ोसी देशों का, पड़ोसी राज्यों का धन प्राप्त करने के लिए वह सब नीतियाँ अपनाते थे। साम से भी, दाम से भी, दंड से भी और भी अनेक प्रकार के भेद आदि मतलब **'फूट डालो राज्य करो'** यह जो है भेद में आता है फूट डालो राज्य करो। **यह सब नीतियाँ है और इन नीतियों के माध्यम से भी राजा लोग, बड़े-बड़े लोग जो हैं इन नीतियों के माध्यम से भी धन प्राप्त करते हैं तो यह भी धनाढ्य होने का एक तरीका है, उपाय है।** किस तरीके से कितना बड़ा आदमी है, वह किस तरीके से धनाढ्य बन रहा है? उसके लिए सब इसी सूत्र के अंतर्गत आ जाता है। पहला तो हुआ अलब्ध का लाभ लेना...किसी भी तरह से जो आपके पास में धन आदि नहीं है उसका लाभ आपको मिले, इस तरह के उपाय आपको सोचना, यह कर लेना।

लब्धपरिरक्षणं

दूसरा लब्धपरिरक्षणं...**जो प्राप्त हो गया है धन उसकी रक्षा करना।** क्या सुना? जो धन प्राप्त हो जाए उसकी रक्षा करना है, बहुत बड़ी चीज है। प्राप्त हुए धन की रक्षा करने के लिए आपको सब तरह की सुरक्षाएँ आपको अपनानी पड़ेंगी और उन सुरक्षाओं में सब कुछ आ जाएगा। आज लोग किसी भी नीतियों से धन तो प्राप्त कर पाते हैं लेकिन उसकी रक्षा नहीं कर पाते हैं। income tax officer, sale tax officer, ED के छापे यह ऐसे हैं, जिससे किसी भी तरह की party fail हो जाती है और politics में इन्हीं सब चीजों का सबसे ज्यादा आज उपयोग किया जा रहा है। अगर politics में किसी को गिराना है तो बस ED के छापे लगवा दो उसके लिए, किसी भी तरह के sale tax officer के छापे पड़वा दो, बस आदमी की जब **अपनी धन**

से उसकी स्थिति बिगड़ जाएगी तो सब तरह से उसकी स्थिति बिगड़ जाएगी। ज्यादा हो तो अनेक तरह के इल्जाम लगा कर उसे तिहाड़ में पहुँचा दो, खत्म party, यह नीतियाँ है राजाओं के लिए, सब करने योग्य होती है। उन्हें सब माफ होता है। अधिकारों का प्रयोग करना राजा जानते हैं, करते हैं। आप कहते रहो...यह गलत है, गलत है। गलत क्या है? अब राजा का तो अधिकार है तो करेगा; अब गलत है, तो है। भले ही मोदी सरकार के लिए दुनिया के लोग कह रहे हैं...गलत है, गलत है, गलत हो रहा है। चाहे वह ममता उनके लिए पत्र लिखे, चाहे वह लालू पत्र लिखे, चाहे राहुल पत्र लिखे, कोई भी पत्र लिखे उसे किसी की सुनना थोड़ी न है। वह अपने अधिकार में अपना काम कर रहा है।

राजाओं व अधिकारियों द्वारा साम- दाम-दंड-भेद की नीतियों का प्रयोग

कभी-कभी इस तरह के अधिकारों का उपयोग किया जाता है, उसी का यह परिणाम है कि **सुनते थे...जैन लोग कभी jail नहीं जाते हैं लेकिन उसने एक ऐसे जैन को jail में भेज दिया, जिसने जैनों का नाम खराब कर दिया।** party को गिराने के ये सबसे अच्छे जो तरीके होते हैं, वह सब अधिकारी लोग इस तरीके को अपनाते हैं और इसी तरह से उनकी अपनी सत्ताएँ चलती हैं। लोग गलत कहें, कहते रहो, जब जो अधिकार जिसको प्राप्त होते हैं, वह उन अधिकारों का प्रयोग करना उनके हाथ में होता है। यह सब नीतियाँ साम-दाम-दंड-भेद के अन्तर्गत आती हैं। दण्ड देने का अधिकार, अधिकारियों और राजाओं को होता है, दूसरों के धन को हड़पने का अधिकार उनको होता है, पड़ोसी राजाओं को जिस तरह से भी जीत पाएँ, जीत लेंगे, उनके कोष का खजाना उनका बन जाएगा। यह राजाओं के लिए सब नीतियाँ अपना करके उन्हें अलब्ध का लाभ करने का भाव रहता है। आप लोग अपने ढंग से सोचो, उतना ही सोचना। यह भी ध्यान रखना कि चौबेजी बनने चलो तो दुबेजी बन कर मत आ जाना। **काम वही करो जो हमारे लिए भविष्य में भी जीवन की सुरक्षा दे पाए और जो हमने प्राप्त किया है, उसका परिरक्षण भी हम कर पाएँ।** आजकल अगर आप हजारों करोड़ कमाते हैं तो सैकड़ों करोड़ आपको GST और tax में देने भी पड़ते हैं।

विरासत को संभालने की बुद्धि व ताकत आज हमारे पास नहीं

अगर वह रक्षण नहीं करोगे तो भी आपके लिए छापे पड़ेंगे तो भी आपके लिए नुकसान हो जाएगा। इसलिए **लब्ध का परिरक्षण करना, एक बहुत बड़ी जिम्मेदारी होती है।** जैन लोगों की कितनी ही ऐसी property देखी जाती है, कितने ही गाँव में, कितने ही शहरों में, अनाप-शनाप property हैं। चार-चार सौ एकड़ की जमीनें पड़ी हैं, दो-दो सौ एकड़ के plot पड़े हैं, जमीनें पड़ी हैं लेकिन उनकी रक्षा करने के लिए कोई लोग नहीं है, हमने ऐसे-ऐसे लोग देखे हैं। जिन्हें अपनी properties गिनने का भी समय नहीं है कि कितनी properties पड़ी हैं? इतने

बड़े-बड़े लोग हैं आज भी दुनिया के अन्दर, जैन लोगों की बात बता रहा हूँ। आज भी ऐसी चार-चार सौ करोड़ की properties के मालिक बैठे हैं, लेकिन उनके घर में उनका एक भी ऐसा सदस्य नहीं है जो उस property पर कब्जा कर पाए और दूसरे लोग कब्जा कर-करके खा रहे हैं यह बहुत बड़ी चीज है, लब्ध का परिरक्षण करना, यह नहीं हो पाता है। पुराने लोग बहुत बड़े-बड़े लोग हुआ करते थे। जैनों की properties यहीं आसपास मध्यप्रदेश के अन्दर देख लो, अभी मैं कछार गांव के बाद एक गांव पड़ा था जहाँ एक छोटा सा मन्दिर था 'फलमानी', वहाँ आज भी जो है चार सौ-पाँच सौ एकड़ की जमीन एक जैन श्रेष्ठी की है, जो जबलपुर में रहते हैं, उनका कुल है- डोडिया वगैरह मतलब ऐसे आज भी लोग हैं। अब हम उन लोगों के नाम नहीं बता रहे हैं कि जिन लोगों के लिए ऐसी चार सौ करोड़ों की जमीनें पड़ी हैं लेकिन उनके कोई योग्य पुत्र नहीं है, जो उस पर कब्जा कर पाएँ। मैं उन लोगों के नाम नहीं बोलना चाह रहा। लेकिन ये सब चीजें क्यों हैं? बताया जाता है, इसी से समझ में आता है, पता पड़ता है कि पहले के लोग कितने भाग्यवान, कितने ऐश्वर्यवान होते थे? कितने पुण्यवान होते थे? गाँव के गाँव उनके under में रहा करते थे तब जाकर वे किसी भी तरह से धर्म के बड़े-बड़े कार्य करते थे। लेकिन आने वाली पीढ़ियों को अब उन्हें संभालने के लिए भी उनके पास में ताकत नहीं है। जो हमें दादा दे गए हैं, उन दादा जी की चीजों को, उस संपत्ति को, विरासत को भी संभालने के लिए हमारे पास में अब बुद्धि नहीं है।

लब्ध का परिरक्षण नहीं कर पा रहे हैं

लोग सम्भाल नहीं पा रहे हैं। इसलिए आपने देखा होगा, कई जगहों पर आज भी जैसे मंझौली वगैरह में भी होकर आए, जैन समाज के कितने बड़े-बड़े तालाब पड़े हुए हैं। बड़े-बड़े तालाब वे सब समाज के, मन्दिर के हैं। कितनी property पर तो न जाने कितने लोग कब्जा कर चुके होते हैं। गाँव के लोग छोटे-छोटे सी झुग्गी-झोंपड़ी बनाने वाले लोग कब्जा कर लेते हैं। तरह-तरह की जमीन इसमें निकल जाती हैं। कौन लड़े? कौन झगड़े? मन्दिर, trusts की भी बड़ी-बड़ी जमीन है, जबलपुर के अन्दर ही जाकर देख लो, एक से एक बढ़िया चौराहे पर करोड़ों की जमीन, ऐसी छोटे से दामों में, बस! छोटे-छोटे से किराए में निकल रही है। उनको कोई संभालने वाला नहीं है और दूसरे लोग भी उस पर अपना अधिकार जमा लेते हैं। यह चीजें बता रही हैं कि हमारी पुरखों की जो एक स्थिति थी, हमारी जो पीढ़ियों में पहले, हमारे **जो दादाओं की जो स्थितियाँ थी, समाज में कितनी समृद्ध थी? कितनी दृढ़ थी? आज हमारी बौद्धिक स्थिति इतनी बच गई है, इतनी बन गई है कि हम अपने बच्चों को उन चीजों में नहीं लगा पा रहे हैं कि हम अपनी विरासत को संभाल पाएँ। छोटी-छोटी नौकरियों के चक्कर में बस! वह दस लाख का package, पच्चीस लाख का package के चक्कर में जिंदगी उनकी उस तरफ लगा देते हैं। bangalore और pune में पड़े रहते हैं।** यहाँ कितनी property का

क्या बिगड़ रहा है? उन्हें मतलब ही नहीं है। बस! वे उतने में ही खुश हैं, जितना उन्होंने कमा लिया, यही पलायन कहलाता है। ये जो स्थितियाँ बन रही हैं कि हम खुद मालिक थे लेकिन हमें नौकरी करने में मजा आ रहा है और ऐसे अनेक नौकर हैं जो अपने-अपने घरों में बड़े-बड़े मालिक बन सकते थे लेकिन वे भी आज कहीं न कहीं companies में नौकरी कर रहे हैं। यह बुद्धि जो बिगड़ रही है, यही बताती है कि आप लब्ध का परिरक्षण नहीं कर पा रहे हैं। जो प्राप्त है उसकी रक्षा नहीं कर पा रहे हैं।

लब्ध परिरक्षण के लिए Trust की आवश्यकता

जैन समाज के पास में कितनी बड़ी-बड़ी properties हैं, आज उनकी रक्षा का भी उपाय ढंग से जो सरकारी तरीका होता है, उस तरीके के अनुसार कई trusty आज भी मतलब साफ सुथरा trust का निर्माण करना, साफ-सुथरे तरीके से उस मन्दिर को चलाने का और उस property को रक्षण करने का भाव आज भी लोगों में नहीं हैं। पीढ़ियों से चली आ रही है... हमारे पापा थे, हमारे दादा थे बस वही उस पर आसीन बैठे हुए हैं। कोई उसका लेखा-जोखा जब सरकारी तरीके से स्पष्ट नहीं होता है तो बस! सरकारी लोग उस पर अपना धावा बोल देते हैं और तुमको अलग कर देते हैं, ऐसा कई जगह होता है। लेकिन आदमी अपनी अध्यक्षता नहीं छोड़ना चाहता है। मैंने अगर अपनी अध्यक्षता छोड़ी तो हमें trust बनानी पड़ेगी। हमें दस लोगों को जोड़ना पड़ेगा तो फिर हमें चुनाव कराने पड़ेंगे तो मेरी सेठियाई कम हो जाएगी। बस! इस कारण से वह कुछ भी उसका हिसाब-किताब न समाज को देता है, न कुछ करता है। लब्ध का परिरक्षण नहीं होता तो वह चीज नष्ट हो जाती है। दूसरे लोग उस पर हावी होकर जब मुकदमा दायर करते हैं तो लड़ते रह जाते हैं और बाद में वे चीजें दूसरी सरकारी हाथों में चली जाती हैं... अपनी संपत्ति हाथ से निकल गई। सिर्फ किस लिए? हमें सेठ बने रहना है, हमें अध्यक्ष बने रहना है, इस अहंकार के कारण से। कई जगह पर देखा, ऐसी property का विनाश हुआ है। सिर्फ इसी अहं के कारण से कि मैं सेठ हूँ, मैं किसी को इसमें involve नहीं करूँगा और जब तक सरकारी तरीकों से आप उनके चिट्ठे नहीं बनाएँगे, trust नहीं बनाएँगे तब तक उनकी रक्षा होगी नहीं। कितना आ रहा है? कितना जा रहा है? सारी transparency के साथ में आप उसका लेखा-जोखा नहीं देंगे तब तक वह सरकारी तरीके से उसका संरक्षण होगा नहीं। सालों बीत जाते हैं कोई audit उसका होता नहीं है, तो **कहाँ से वह रक्षण हो? लब्ध का परिरक्षण करना यह बहुत बड़ी चीज है।** हम आसपास देखें हमारे पास बहुत सारी संपत्तियाँ हैं लेकिन हम लब्ध का परिरक्षण नहीं कर पा रहे हैं और सारी जिन्दगी छोटी-छोटी सी amount कमाने के चक्कर में निकाल देते हैं। इसलिए यहाँ कहा जा रहा है...**धनाढ्य होने का सबसे बड़ा तरीका क्या है? कमा लेना बड़ी चीज नहीं है, उस कमाने के बाद में उस धन की सुरक्षा का प्रबंध करना, यह बड़ी चीज है।**

रक्षित परिवर्द्धनं

फिर **तीसरी** चीज... **'रक्षित परिवर्द्धनं'**। जो रक्षित कर लिया है उसको भी हम बढ़ाएँ। क्या कहा? एक तो हम धन कमाएँ, फिर धन कमा कर उसकी रक्षा करें और रक्षा करने के बाद में जो रक्षित है, उसको भी हम बढ़ाएँ। वह कैसे बढ़ाएँ? अनेक तरह के जो परोपकार आदि के कार्य होते हैं, जिसके कारण से धन बेवजह बर्बाद न हो जाए, ऐसे कार्यों में लगाते हुए उस रक्षित

का परिवर्द्धन किया जाता है। अगर आपके पास में बहुत property पड़ी है, आप उस पर किसी तरह का निर्माण नहीं करते हैं, कोई school नहीं चलाते हैं, किसी तरह की आप उस पर चिकित्सा की सुविधाएँ आदि नहीं देते हैं, कोई खेती आदि नहीं करते हैं, किसी भी तरह से लोगों का उससे कोई भला नहीं हो रहा है तो वे चीजें किसी न किसी तरह से नष्ट हो जाएँगी। दूसरे लोग कब्जा कर लेंगे या वह वन विभाग के अन्दर चला जाएगा या वह किसी न किसी तरह से और दूसरे तरीकों से उसका विनाश हो जाएगा। रक्षित जो है, उसको भी बढ़ाना, उसका भी परिवर्द्धन करना, ये तीन काम अगर करने सीख गए तो धनाढ्य जिन्दगी भर बने रहोगे। **थोड़े समय के लिए धनाढ्य बन जाना अलग बात है और जिन्दगी भर बने रहना अलग बात है।** **ये तीनों तरीके जिन्दगी भर धनाढ्य रहने के यहाँ पर बताए जा रहे हैं।** इससे आप चलेंगे तो संचित धन आपका वृद्धि को प्राप्त होता रहेगा और संचित धन के नाश का कारण क्या है?

संचित धन के नाश का कारण उसका सदुपयोग न करना

तीर्थमर्थेनासंभावयन् मधुच्छत्रमिव सर्वात्मना विनश्यति॥ 4॥

'तीर्थम् अर्थेनासंभावयन्' कुछ चीजों को तीर्थ कहा जाता है। आगे बता रहे हैं...तीर्थ क्या होते हैं? यहाँ पर **तीर्थ शब्द का मतलब केवल तीर्थ क्षेत्र नहीं है,** तीर्थ का मतलब और भी चीजें हैं। **जिन चीजों से आपका धन नष्ट होने से बच जाए, वह तीर्थ समझना।** वे कारण आपको आगे

बताए जाएँगे। जो लोभी लोग होते हैं, वे उन तीर्थों का उपयोग नहीं करते या उन तीर्थों में धन का उपयोग नहीं करते हैं तो धन का अगर हम investment तीर्थ में नहीं करेंगे (तीर्थ का मतलब आगे बताने वाले हैं, तीर्थ एक पात्र का नाम दिया जा रहा है। **कितने तरह के पात्रों में आप उस धन का invest करें जिससे आपके धन का रक्षण होता रहे, उसका नाम है- तीर्थ।**) वह तीर्थ में अगर हम अपना धन नहीं लगाते हैं तो वह सारा का सारा धन नष्ट हो जाता है। **'मधु छत्रम् इव' जैसे मधुमक्खियाँ** बहुत मेहनत से चूस-चूस करके तरह-तरह के फूलों के परागों को इकट्ठा करके छत्ता बनाती है। शहद इकट्ठा करके मधुओं का वह छत्ता बन जाता है और वह छत्ता बना कर बस! उसमें बैठी रहती हैं, कोई दूसरा न ले जाए, कोई दूसरा न खा ले, कोई दूसरा न उसमें से चूस ले। अब खुद कितना खाओगी? खाने के लिए तो वह था ही नहीं। वह तो हम ने ही अपने ही मेहनत से उगाल-उगाल करके उसको बना दिया। अब वह भी इतना है, अपनी मेहनत का निकला हुआ कि वह भी बहुत मीठा है। अब दूसरे लोग आएँ तो कोई भौंरा उसके ऊपर उड़ कर आ जाए तो उसे बैठने न दें। किसी दूसरे और भी जीव को उसका उपयोग करने न दे तो फिर क्या होता है? एक शिकारी आता है, एक भील आता है और वह सारा का सारा छत्ता नष्ट कर देता है और सारा शहद अपने लिए ले जाता है और उनका भी घर बेघर हो जाता है।

जैनत्व को संरक्षित करने के लिए Universities की आवश्यकता

यह हो रहा है! इकट्ठा किया बहुत सारा, पता ही नहीं पड़ा। ED के तो बड़े-बड़े जगह पड़ते हैं, सामान्य छापे तो अभी जबलपुर में भी पड़े थे पिछले कुछ महीनों में। सुने हैं GST वगैरह के छापे तो बड़े-बड़े जैनों के यहाँ भी पड़ते रहते हैं। ये जो छापे बताते हैं, आपने उस धन का कोई उपयोग नहीं किया। **करोड़ों-करोड़ों की properties के साथ और turnover के साथ आज अनेक जैन जी रहे हैं लेकिन आज तक कोई भी जैन के अन्दर इतनी बुद्धि नहीं आ**

रही है कि हम एक university खड़ी कर दे, सौ करोड़ में एक university खड़ी हो सकती है और हजारों करोड़ों के turnover चल रहे हैं। अगर हम धन की उपयोगिता अपने ही क्षेत्र में इस रूप में करें तो दुनिया के अन्दर आज भी जैन लोग दो-चार-दस universities खड़ा करके **जैन जगत के अन्दर शिक्षा का इतना बड़ा नाम रोशन कर सकते हैं, जिसके माध्यम से दूसरे लोग भी हमेशा जैनत्व को देखें** कि हाँ! भाई! जैनत्व का इतिहास बहुत ठोस इतिहास है और इसको हम गिरा नहीं सकते। यह काम हो सकता है universities के तहत और यह कोई बड़ी चीज नहीं होती है। क्योंकि जो university बन जाती है फिर एक बार बनने के बाद में फिर उसी से आपकी आमदनी होती रहती है और वह चलता रहता है। बस! एक बार आपको उसमें लगाना पड़ता है। इस तरह की बुद्धियाँ अगर चलें तो आज भी लोग बहुत कुछ धर्म की प्रभावना कर सकते हैं, धर्म को स्थायित्व दे सकते हैं, धर्म की रक्षा कर सकते हैं लेकिन नहीं कर पाते हैं। **सौ-सौ करोड़ से मन्दिर तो बन रहे हैं लेकिन सौ करोड़ की कहीं university बनाने वाला भाव किसी भी व्यक्ति के अन्दर नहीं आ रहा है।** उसके अन्दर यह ज्ञान नहीं आ रहा है कि हम इस property के माध्यम से, इस धन के माध्यम से हम इसका ऐसा उपयोग करें जो सदियों तक जैनत्व की अमर गाथा को गाता रहे। हाँ भाई! यह उस सेठ ने जैन university बनाई थी।

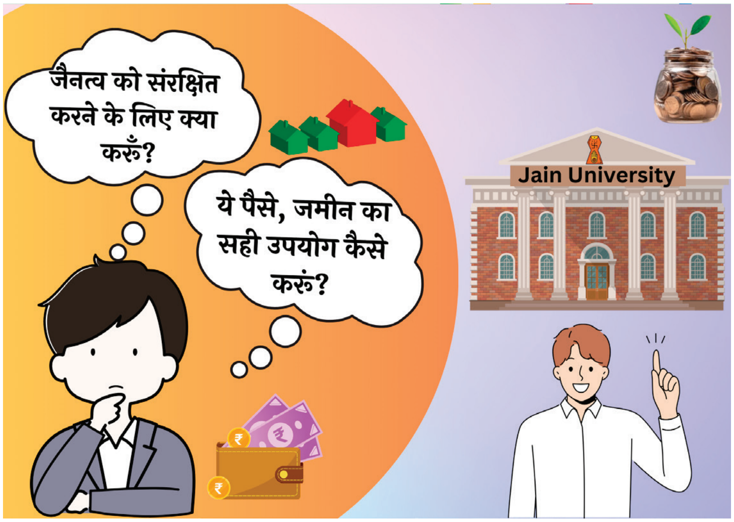

लौकिक व धार्मिक शिक्षा

आज भी यहाँ पर जैनत्व की शिक्षा भी मिल रही है और तमाम जगह के लोग आकर यहाँ सब तरह की शिक्षा को ले रहे हैं, पढ़ रहे हैं। इस तरह की universities से जो नाम होता है वह नाम आपके केवल factories से, mills से नहीं होता है। यह धर्म की रक्षा करने के तरीके हैं और यह कोई बड़ी चीजें नहीं हैं। चंदा-चिट्ठा करने की जरूरत नहीं है। चंदा-चिट्ठा करने से कभी universities नहीं चलती। मैं आपको एक बात और बता दे रहा हूँ...**university एक व्यक्ति, एक परिवार, एक घर के लोग, एक व्यक्ति चला सकता है। जिसके पास में अच्छी हिम्मत हो, ताकत हो, अपना सारा पैसा यह भी एक व्यापार की तरह उसमें लगा दे कि यही**

मेरा व्यापार है, मैं अपने जीवन में अपने बच्चों को भी इसी में लगाऊँगा और मैं भी यही करूँगा तो यह कार्य हो सकता है। समाज के चंदे-चिट्ठों से काम नहीं होते क्योंकि वह सब हर तीन साल बाद चुनाव होने हैं, हर साल नई कमेटियाँ, हर साल नए-नए अध्यक्ष। पूर्व अध्यक्ष, नए अध्यक्ष के लिए दुश्मन सा दिखता है। वह उसकी टांगे खींचता है, वह उसकी कमियाँ दिखाता है। ये समस्याएँ, इसके कारण से कभी नहीं आगे बढ़ सकती हैं। कभी भी ये सब चीजें नहीं चल सकती इसलिए हम कभी नहीं चाहते कि चंदा-चिट्ठों से काम हो। यह काम अगर हो तो बस! एक से दो लोगों का बस उसमें सहयोग हो, दो लोग हो, ज्यादा से ज्यादा चार लोग हो। एक tuning वाले लोग हो बस! ये चार लोग मिलकर एक चीज बनाएँगे। इसमें किसी का कोई हमें योगदान की जरूरत नहीं है। **अपना-अपना पैसा उसमें invest करेंगे और ऐसी universities दुनिया के इन सभी अपने प्रदेशों के अन्दर अगर चार जगह बड़ी-बड़ी universities बन जाएँ तो आप देखो कि जैनत्व की गौरव गाथा कितनी ऊँची हो जाए?** आज जैसे महाराष्ट्र के अन्दर, कर्नाटक के अन्दर जैसे एक धर्मस्थल का नाम है...हेगड़े जी का वह धर्मस्थल चलता है। **ऐसा धर्मस्थल अगर आज का रूप कहीं भी लेगा तो universities के माध्यम से ले सकता है और यह बनाना कोई बड़ी बात नहीं है।** समाज में ऐसे बीसों लोग हैं, जो हजारों-करोड़ों के turnover के साथ में, सैकड़ों करोड़ किसी न किसी कार्य में इस तरह से उन्हें लगाना पड़ता है क्योंकि वह उनके नियमों के अंतर्गत आता है, सरकारी नियमों के अंतर्गत। **CSR बोलते हैं; इन नियमों के तहत उन्हें यह पैसा उसमें लगाना ही पड़ता है लेकिन किसी की बुद्धि में नहीं आता यह सारा पैसा इकट्ठा करके एक जगह लगाकर हम उसको किसी काम में लें।** सब अलग-अलग तरह से अपना पैसा अलग-अलग जगह पर लगा रहे हैं। यह विचार, यह ज्ञान आज के धनपतियों को आ जाए तो यह **'नीतिवाक्यामृत'** पढ़ाना सफल हो जाए। नहीं तो यह सब मधु के छत्ते की तरह, ये सब छापे पड़ते जाएँगे, शिकारी आते जाएँगे और ये सब मधु छत्तों को गिरा कर आदमी खुद तो jail में चला जाता है, अब काहे का सुख भोगेगा? किसके लिए बंगले और किसके लिए गाड़ियाँ? अब jail में क्या मिलेगा? ये स्थितियाँ बन रही हैं, इसलिए तीर्थ पात्र यहाँ बताए जा रहे हैं।

धर्म समवायी: धर्म सहयोगी

धर्मसमवायिनः कार्यसमवायिनश्च पुरुषास्तीर्थम्॥ 5॥

देखो! इनको तीर्थ कहा जा रहा है...धर्म का जो समवाय करने वाले लोग हैं। समवाय अर्थात् **धर्म को इकट्ठा करने वाले, धर्म के लिए सहयोग करने वाले, धर्म को आगे बढ़ाने वाले, समवायी कहे जाते हैं।** ऐसे जो लोग हैं और कार्य को आगे बढ़ाने वाले ऐसे जो लोग हैं, जो

व्यवहारिकता को जानते हैं, जिसे आज की भाषा में कहा जाए...management करना जानते हैं। **जो हर तरीके से management किसी भी संस्था का कर सकते हैं, ऐसे level के जो लोग हैं, इनके लिए यहाँ पर इन पुरुषों को यहाँ पर तीर्थ कहा जा रहा है।** पैसा किस में लगाना? जो अच्छा management कर सकते हैं, उनको आगे लाओ। जो चीजों को अच्छे ढंग से direction दे सकते हैं, ऐसे लोगों को आगे लाओ और ऐसे लोगों के माध्यम से उन directors को और उन managers को दिए गए यह सहयोग आपके लिए किसी भी संस्था को खड़ा करने के लिए, किसी भी तीर्थ को बनाने के लिए सहयोगी बनते हैं। उन तीर्थों में, उन लोगों के लिए लगाया हुआ पैसा आपके लिए लब्ध का परिरक्षण करने वाला होगा और रक्षित का परिवर्द्धन करने वाला होगा। इसलिए बड़ी-बड़ी जो companies होती हैं, बड़े-बड़े companies के जो मालिक होते हैं, उनके यहाँ पर अपने अलग, एक तो यह CA होते हैं, कई संख्या में उनके CA खुद के होते हैं और कई संख्या में उनके Lawyer खुद के होते हैं। ये सब उनको रखने पड़ते हैं, उनमें पैसा लगाना पड़ता है क्योंकि उसकी सुरक्षा उनके बिना नहीं हो सकती है। हर बार सेठ जी कहाँ case लड़ने जाएँगे? छोटे-छोटे काम तो lawyer अपने-अपने उन्होंने बना लिए, वही lawyer उनके cases को निपटाते रहते हैं। जो CA, CS किए हुए लोग हैं, वे सब उनका पूरा management देखते हैं, सब उनका लेखा-जोखा रखते हैं। उसके अलावा भी CEO अलग होते हैं, Director अलग होते हैं, तब companies चलती हैं। इस तरह से ये **सब धर्म समवायी और कार्य समवायी लोग कहे जाते हैं, इन्हीं को तीर्थ कहा गया है। इनमें अपना धन लगाने से वह धन सुरक्षित बना रहता है।** समझ आ रहा है? नहीं तो इन शब्दों को कौन समझेगा? धर्मसमवायी, कार्य संवायी क्या है?

धन को नष्ट करने के साधन

तादात्विक-मूलहर-कदर्येषु नासुलभः प्रत्यवायः ॥ 6 ॥

देखो! यहाँ अब कहते हैं...धन के नष्ट करने के साधन भी बताए जा रहे हैं कि धन के नष्ट करने के साधन तीन हैं। **एक ऐसे लोग जो तादात्विक कहे जाते हैं, ऐसे लोग जो मूलहर कहे जाते हैं और ऐसे लोग जो कदर्य कहे जाते हैं, तीन नाम दिए जा रहे हैं। इनके लिए लगाया गया धन नष्ट होने वाला होता है** और उसके लिए वह **'नासुलभः प्रत्यवायः'** अर्थात्

हम उससे अपने विनाश को बचा नहीं सकेंगे। ऐसे लोगों में लगाया गया धन, यह कहलाता है- **धन के नाश के साधन।** अर्थात् एक तो धन की रक्षा के साधन बता दिए, तीर्थों में लगाना, तीर्थ पात्र में लगाना और अगर आपने धन को नष्ट करना है तो ऐसे तीन लोगों के बारे में जानना। उन तीनों की परिभाषा आगे के तीन सूत्रों में आ रही है...

तादात्विक लक्षण

यः किमप्यसंचिन्त्योत्पन्नमर्थं व्ययति स तादात्विकः ॥ 7 ॥

यह जो **तादात्विक** शब्द आया था, उसकी परिभाषा है कि **तादात्विक किसे कहते हैं? 'किमपि असंचिन्त्य'** **कुछ भी चिन्तन किए बिना, कुछ भी विचार किए बिना अर्थात् कोई विचार न करके, कमाए हुए धन का वह** **'उत्पन्नमर्थं व्ययति'** **बस! व्यय करता जा रहा है**, व्यय करता जा रहा है। हमने कमाया है, हम खा रहे हैं तो तुम्हें क्या मतलब? हमने कमाया, हम मजे उड़ा रहे हैं, तुम्हें

क्या लेना-देना? हमारी life में तुमको interfere करने का अधिकार किसने दिया? आज के बच्चे जब अच्छा कमाने लग जाते हैं तो यह उनकी भाषा होती है। मेरी life, मैं enjoy करूँगा, आप क्यों मुझे रोकते हैं? उस hotel में मत जाओ, वहाँ enjoy मत करो, यह मत खाओ, वह मत पियो। उनके लिए यहाँ कहा जा रहा है...यह तादात्विक लक्षण के साथ चल रहे हैं। धन का अर्थ, धन का हमने किस तरह से संचन किया? **यह तो ठीक है लेकिन अब उसके व्यय के कोई चिन्तन का उपाय न सोचते हुए, किसी भी तरह से उसका व्यय करना, ऐसे खर्च करने वाले लोगों को तादात्विक कहा जाता है।** जो यह नहीं सोचता है मेरी आय कितनी है? आमदनी मुझे कितनी बचा करके रखना है? कितना मेरे लिए अभी आवश्यक है? कितना मुझे आगे आवश्यकता पड़ सकती है? इस तरह का बिना सोचे-समझे जो आदमी धन का व्यय करता है, उसे तादात्विक कहा जाता है, यह नाम दिया गया है। इसके लिए इकट्ठा हुआ धन नष्ट हो जाता

है। यह ज्यादा नहीं चलता है तो ऐसे तादात्विक लोग मिलते है।

मूलहर लक्षण

एक दूसरे तरह के लोग होते हैं...मूलहर लक्षण में आते हैं। **मूलहर** जो मूल मिला है उसको भी हरण कर लिया उसको भी खा गए। कौन?

यः पितृपैतामहमर्थमन्यायेन भक्षयति स मूलहरः ॥ 8 ॥

जो व्यक्ति अपने पिता और पिता के भी पिता, जिसे पितामह कहते हैं- उनकी संपत्ति को अन्याय से भक्षण करता है, अन्याय से खर्च करता है और नए धन का बिल्कुल भी संचय नहीं करता है, उसे मूलहर व्यक्ति कहा जाता है। यह मूल को ही हरण कर रहा है, कमा कुछ नहीं रहा है, बाप दादाओं की खाए जा रहा है...बस! बर्बाद किए जा रहा है, बर्बाद किए जा रहा है और ऐसा बर्बाद करते-करते एक दिन पूरा बर्बाद वह हो जाता है। ऐसे भी कई शहजादे मिलते हैं। अमीर होंगे, बस! **पाप की कमाई है, पाप में डाले जाओ।** **बाप की कमाई पाप में लगती जाती है क्योंकि उन्हें पता है हमें कमाने की जरुरत ही क्या है?** जब बाप ने इतना कमा रखा है। इसी की इतनी संपत्ति है कि हम जिंदगी भर खाएँगे तो भी नहीं खा पाएँगे। ऐसे भी कमाई को खाने वाले लोग ये मूल का हरण करने वाले लोग होते हैं। आप सोचे कि अगर आपके बच्चों में यह मानसिकता आ गई कि उन्हें अपने बाप की कमाई दिख रही है और उन्हें अपना कोई भी कार्य नहीं दिख रहा है तो ऐसी संतानें भी मूलहर, आपके उस धन को नष्ट करने वाली होंगी, वे संपत्ति की रक्षा करने वाली नहीं होंगी। इसलिए इनसे बचाना।

कदर्य लक्षण

तादात्विक नहीं होना चाहिए, **मूलहर** नहीं होना चाहिए और **तीसरा** कहा जा रहा है...**कदर्य** नहीं होना चाहिए।

यो भृत्यात्मपीडाभ्यामर्थं संचिनोति स कदर्यः ॥ 9 ॥

वह कदर्य कहलाता है। **'कदर्य'** का मतलब **एक तरह से बहुत ज्यादा लोभी व्यक्ति, कृपण व्यक्ति** जो **अपने भृत्यों को भी आत्म पीड़ा देकर या भृत्यों को और अपने आत्मीय जनों को दोनों को पीड़ा देकर वह धन को बचाए रखने की कोशिश करता है, वह कदर्य कहलाता है।** अपने ही परिवार के, अपने ही घर के लोग हैं, उनको भी धन नहीं देता, इतना कंजूस है और जो अपनी सेवा करने वाले सेवक लोग हैं, नौकर-चाकर हैं, उनके लिए भी धन नहीं निकालता।

फिर **वही लोग उसके धन को हड़प करके खा जाते हैं और उसे धन रहित कर देते हैं। ऐसे कदर्य का धन भी नष्ट हो जाता है।** **इन तीन लोगों के पास में धन टिकता नहीं है।** तादात्विकों के पास नहीं टिकेगा, मूलहर वाले भी कभी धनाढ्य नहीं होंगे, वे सब बर्बादी में लगे रहेंगे और कदर्य लोग के लिए भी वह धन टिकने वाला नहीं है, इसलिए धन नष्ट होने के ये साधन हैं, इनको यहाँ बताया गया।

तादात्विक और मूलहर को हानि

अब आगे कहते हैं...**तादात्विक और मूलहर को होने वाली हानि क्या है?**

तादात्विकमूलहरयोरायत्यां नास्ति कल्याणम्॥10॥

इन तीन में से दो के लिए पहले बताते हैं कि जो तादात्विक हैं, **तादात्विक मतलब आमदनी से अधिक व्यय करने वाले,** बिना सोचे-समझे खूब फिजूलखर्ची करने वाले। आमदनी भी कितनी है? वह भी उन्हें पता नहीं है और खर्चे ज्यादा हैं। एक तरह से जिसे आप बोलते हो न... **'आमदनी अठन्नी खर्चा रुपैया'** और

'आमद कम और खर्चा ज्यादा, लक्षण है मिट जाने का।
कुव्वत कम और गुस्सा ज्यादा, लक्षण है पिट जाने का।।'

यह भी ध्यान रखना। यह भी सब नीति वाक्य ही हैं, जो दोहों और मुहावरों के रूप में आ जाते हैं। यह भी ध्यान रखना है...**तादात्विक लोगों का भविष्य में कल्याण नहीं होता है,** यह जरूर

आपत्तियों में घिरते हैं, भविष्य इनका अच्छा नहीं होता है। जो **मूलहर वाले लोग हैं जो अपनी पैतृक संपत्ति को अन्याय मार्ग से बर्बाद करते हैं, ऐसे लोग भी अन्त में दरिद्री बनते हैं।** इनके लिए भी यह हमेशा मजे नहीं रहते हैं। जो कुछ समय के लिए जो मजे ले रहे होते हैं, इनका जीवन भी, आगामी जीवन नियम से दु:खमय होता है। इसलिए यह जो है धन की हानि, उन्हें सदा दु:खी बनाने वाली होती है। इस जन्म के अन्त में भी, इस जन्म में भी उन्हें दु:ख भोगना पड़ेगा, फिर आगे तो उन्हें अनेक पीड़ाओं से दु:ख भोगना ही पड़ेगा क्योंकि उन्होंने अर्थ का कोई सदुपयोग नहीं किया। उस पापानुबंध से उनका अगला जन्म भी खराब होगा और इसी जन्म में भी उनका आगामी भविष्य भी खराब होता है। यह दो लोगों की बात हुई और लोभी लोगों के साथ क्या होता है?

कदर्य को हानि

कदर्यस्यार्थसंग्रहो राजदायादतस्कराणामन्यतमस्य निधिः ॥ 11 ॥

जो कदर्य लोग होते हैं, लोभी लोग होते हैं, उनका धन किसके लिए होता है? राजाओं के लिए हो जाता है। राजाओं का मतलब वही छापे खाने, छापे मारी होगी। वह धन राजकोष में चला जाता है। **ऐसे लोगों का धन जो बचा-बचा करके रखते हैं और किसी भी तरह से, कोई भी उपयोग सामाजिक कार्यों में नहीं करते हैं तो वह धन राजाओं के पास चला जाता है या फिर दायादों के पास चला जाता है।** दायाद! दामाद तो नहीं लिखा, दामाद भी कुटुंबी कहलाएगा? कई ऐसे भी दामाद देखे हैं, कहते हैं...मेरी ससुराल में मेरा ससुर बहुत धनाढ्य है और खूब उसकी property है और उसके कोई बेटे नहीं है, दो-तीन बेटियाँ थी। उन्हीं बेटियों के जो वह दामाद बन गया तो अब धन तो उसी का होना है लेकिन देता कुछ नहीं है। कोई भी अच्छे काम में लगाने को सुनता ही नहीं है। ऐसे कई दामादों ने आकर भी मेरे से शिकायत की

है। मतलब यह है कि दामाद भी जानते हैं कि मेरा जो विवाह हुआ है, उससे मुझे बहुत भविष्य में भला होने वाला है लेकिन अभी यह मेरे लिए कुछ दे नहीं रहा है। जिनके लिए इस तरीके से है, वे भी जान रहे हैं...ऐसा कंजूस है, ऐसा कंजूस है। एक दामाद ने आकर कहा...महाराज! अच्छा घर तक नहीं बनवा रहा है, वही पुराने टूटे-फूटे घर में रह रहा है, अच्छा घर भी नहीं बना रहा है। मैं कभी घर में जाऊँ तो लगे कि मैं इस घर का दामाद हूँ। कहने को बहुत property पड़ी है, बहुत करोड़पति आदमी है, ऐसे-ऐसे लोग होते हैं। यह कोई कल्पनाओं की बात नहीं है, यह सब चल रहा है। नाम नहीं ले रहा हूँ, आपको बता रहा हूँ। ऐसे लोगों का मूल अब कौन हरण करेगा?

दायाद (कुटुंबी जन)

ऐसे लोभी लोगों का धन कहाँ जाएगा? वह उनके कुटुंबी जनों के पास में चला जाएगा। खुद अच्छा घर नहीं बना पा रहे, अच्छा पहन नहीं पा रहे, अच्छे आभूषण नहीं खरीद पा रहे, अच्छे अपने लिए उपयोग नहीं कर पा रहे और पता नहीं कौन सी लोभ की संग्रह प्रवृत्तियों में बीमार पड़ते जा रहे हैं, सड़ते जा रहे हैं। यह स्थितियाँ बनती जाती है और खूब पैसा है। **'मर-मिट जाए, कुटुंब न खाए'** ऐसे लोगों का धन कुटुंब ही खाता है। यह दायाद! **दायाद अर्थात्** जि**न्हें दे दिया जाए और वह तुम्हारी याद तक न ले, याद तक न करें, उनको कहते हैं- 'दायाद'। 'दा'** अर्थात् दे दिया और वह तुम्हारी याद भी नहीं करेंगे। जब उन्हें मिल जाएगा, सब बांट लेंगे आपस में, सब कर लेंगे, ऐसे दायादों के पास में कंजूसों का धन चला जाता है। अथवा तीसरी चीज और है- **'तस्कराणाम्' चोर, तस्कर, लुटेरे ये सब जो है, उस को कभी न कभी हड़प ले जाते हैं और उस कदर्य का धन किसी भी काम में नहीं आता है।** इसलिए उसकी निधि किसी दूसरे की निधि होती है, उसकी खुद की अपनी कोई निधि नहीं होती है। इन धन की व्यवस्थाओं को यहाँ पर इस अर्थ समुद्देश में बताया गया है। यह chapter भी आज आपका पूर्ण हो गया है।

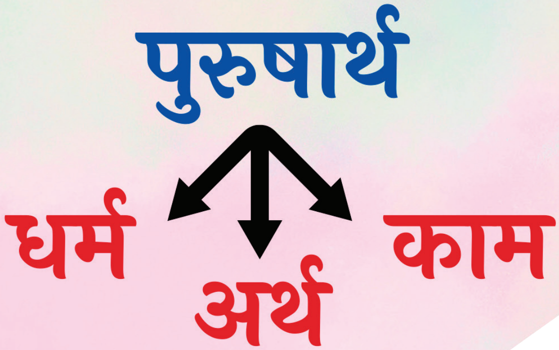

काम समुद्देश

आचार्य सोमदेव सूरि विरचित यह **नीतिवाक्यामृत** नाम का ग्रन्थ जिसमें

धर्मार्थ काम फलाय राज्याय नमः

ऐसा करके एक मंगलाचरण किया था, उसी में धर्म व अर्थ इनके विषय में दो अलग-अलग chapter से विस्तार से समझा गया है। सूत्रों के माध्यम से यह नीति सूत्रों की रचना है। आगे तीसरा chapter शुरु होता है...**काम समुद्देश** नाम का जिसमें सबसे पहले काम की परिभाषा बताते हैं।

SCAN TO WATCH

अभिमान रस द्वारा काम सुख की प्राप्ति

आभिमानिकरसानुविद्धा यतः सर्वेन्द्रियप्रीतिः स काम॥1॥

काम की भी एक परिभाषा है। लोग यह समझते हैं...काम अर्थात् कुछ भी करना काम होता है लेकिन काम की यह परिभाषा ध्यान में रखने योग्य है कि **काम किसे कहते हैं? 'आभिमानिक रसानुविद्धा'** यहाँ कहते हैं कि **ऐसे अभिमान से सहित और रस से अनुविद्ध क्योंकि जो सभी इन्द्रियों की प्रीति होती है वही काम कहलाता है।** क्या मतलब हुआ? **सभी इन्द्रियों के लिए प्रीति उत्पन्न करने वाले जो विषय होंगे, वह काम कहलाते हैं।** जिससे सभी इन्द्रियाँ प्रसन्न हो, तुष्ट हो, ऐसे इन्द्रियों की प्रीति उत्पन्न करने वाले विषय काम कहलाते हैं और उसमें जो इन्द्रियों के अन्दर ही जो यह प्रीति उत्पन्न होती है, वह प्रीति एक अभिमान रस से अनुविद्ध रहती है। कौन से रस से? **अभिमान रस से।** यह एक अलग तरह का रस होता है। अभिमान रस का अर्थ होता है कि इन इन्द्रिय के विषयों को भोगने के बाद में आत्मा को या मन को इस तरह का एक भाव उत्पन्न होता है कि हमने इन इन्द्रियों के विषयों को भोग लिया। यह अभिमान का रस एक अलग तरह का रस होता है। **यह अभिमान का भाव ही अभिमान का रस कहलाता है और यह रस से अनुविद्ध ही अर्थात् युक्त ही इन्द्रियों की प्रीति हुआ करती है,** उसी को **काम** कहते हैं। **काम अर्थात् आभिमानिक रस से परिपूर्ण मन की**

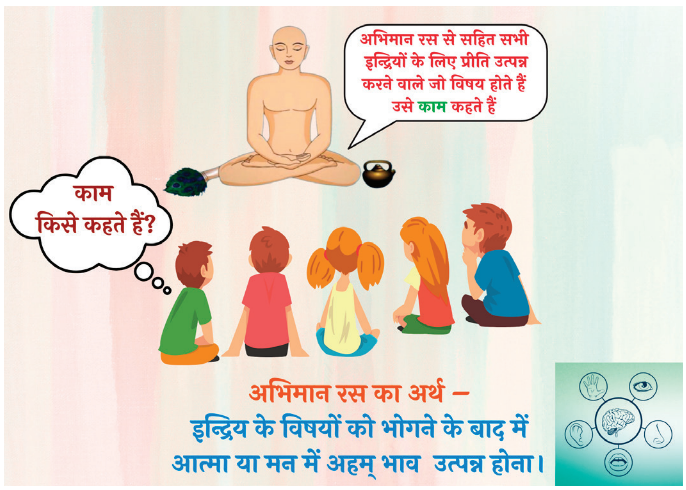

वृत्ति तो जो **काम सुख** कहा जाता है, वह काम सुख वस्तुतः क्या है? कि **इन्द्रियों के लिए प्रीति उत्पन्न करने वाले और आभिमानिक रस से परिपूर्ण जो यह मन की वृत्ति है, उसी का नाम काम है।** अर्थात् आत्मा को कुछ मिले या न मिले अभिमान का रस मिल जाता है। **अभिमान** समझते हैं? हमने किसी विषय में अपना अहं भाव बना लिया हो कि यह मुझे मिलना चाहिए, यह मुझे मिलना चाहिए, यह मेरे पास होना चाहिए और वह जब हमें मिल जाता है तो उससे जो रस उत्पन्न होता है...वह **अभिमान रस** कहलाता है। **रस वस्तु में नहीं होता, रस वस्तुतः इसी अभिमान के भाव में होता है।** जैसे **बच्चा जिद्द करता है** कि हमें कोई toffee चाहिए या हमें कोई अच्छी gift item चाहिए तो उस item में कोई रस नहीं होता है। वह रस होता तो तो वह दुकानदार के पास ही सबसे ज्यादा रस होता है फिर या उसके पापा के पास ही सबसे ज्यादा रस होता। रस उस item में नहीं होता, उसके अन्दर जो अभिमान है कि यह मुझे मिले, मुझे मिले तो बस! मुझे अच्छा लगे। **यह जो तृष्णा और उसकी पूर्ति, जिस रस के साथ होती है, उसी को अभिमान रस समझना चाहिए।** इसकी व्याख्या यद्यपि टीकाकार यहाँ कर नहीं पाए लेकिन इसकी व्याख्या ऐसे ही होनी चाहिए। सभी इन्द्रियों की प्रीतियाँ आभिमानिक रस से अनुविद्ध रहती हैं क्योंकि सभी इन्द्रियों के अपने-अपने विषय होते हैं और उनकी अपनी-अपनी एक चाह होती है। उस चाह से उस विषय की प्राप्ति हो जाने पर उस मन के लिए या आत्मा के लिए ऐसा लगने लग जाता है...हाँ! हमने यह भोग लिया, हमने यह प्राप्त कर लिया तो इससे जो सुख मिलता है, उसी का नाम **अभिमान रस** है।

सुख का कारण इन्द्रिय विषयों की सन्तुष्टि

इसमें सम्मान वाली वह बात नहीं है चूँकि इन्द्रियों से जुड़ी हुई चीजें हैं। **आभिमानिक रस** का मतलब वह अभिमान रस अलग है, जो किसी भी तरह से आपका सत्कार, पुरस्कार किया जाए वह अलग है। यहाँ **इन्द्रियों से प्रीति उत्पन्न करने वाला जो अभिमान रस है उसकी बात है। काम के रस से उत्पन्न होने वाला सुख अभिमान के रस के साथ में पुष्ट होता है।** जो व्यक्ति काम सुख से संतृप्त होते हैं, तुष्ट होते हैं, **वे अभिमान रस से परिपुष्ट होते हैं कि मुझे अन्दर जो एक अहं भाव के साथ कि मैं इस तरह की चीज का उपभोग करूँ, यह जो अहं भाव होता है वही संकल्प उत्पन्न कराता है और उस संकल्प की जो पूर्ति हो जाती है तो उससे अभिमान**

रस उत्पन्न होता है। वह रस वस्तुतः कोई रस नहीं होता है, वह सिर्फ एक मन के अहं भाव की, संकल्प की पूर्ति होती है। हर मन वाले जीव के अन्दर एक संकल्प का भाव होता है और वह संकल्प क्या है? जैसे मैं मनुष्य हूँ तो रसगुल्ला खाना यह हमारा ही काम है और किसी का काम नहीं है, तिर्यंच का काम नहीं है। **रसगुल्ला कौन खाएगा?** मैं खाऊँगा मतलब रसगुल्ला खाने का जो संकल्प है या मिठाई खाने का जो संकल्प है, यह मनुष्य अपने अन्दर ले लेता है। यह हमारे लिए ही बनी हुई चीज है हम नहीं खाएँगे तो कौन खाएगा? हमें अगर मिलेगा, हमने खा लिया, हमने प्राप्त कर लिया तो हमारे लिए जो सुख मिलेगा, वह सुख उस संकल्प की पूर्ति के साथ मिला। उसी को यहाँ अभिमान रस से युक्त इन्द्रियों की प्रीति कहा जाता है, तो इन्द्रियाँ प्रसन्न हो जाती हैं। **'रसना इन्द्रिय'** किससे प्रसन्न होगी? आपकी इष्ट वस्तु आपके रसना के सम्पर्क में आ जाए और मन में उसका संकल्प हो कि हाँ! यही हमारे लिए इष्ट है और वह आपकी रसना इन्द्रिय के सम्पर्क में आ जाए तो उससे जो इन्द्रिय प्रसन्न होगी तो वह पूरी शरीर को प्रसन्न कर देगी।

इन्द्रियाँ, अभिमान व संकल्प की रसपूर्ण पूर्ति का नाम है- काम

'स्पर्शन इन्द्रिय' में प्रीति पूरे शरीर की प्रीति है और वह स्पर्शन इन्द्रिय की प्रीति कोई भी इन्द्रिय के माध्यम से हो सकती है। एक इन्द्रिय भी पूरे शरीर को प्रसन्न कर सकती है और सब इन्द्रियाँ मिलकर के भी पूरे शरीर को प्रसन्न कर सकती हैं। **इन्द्रियों की प्रीति का नाम काम है** और वह इन्द्रियों की जो प्रीति है, वह कैसी होनी चाहिए? अभिमान रस से युक्त होनी चाहिए अर्थात अगर आपके अन्दर कोई संकल्प होगा, अभिमान होगा तब तो उसमें रस आएगा अन्यथा उसमें रस ही नहीं आएगा। अगर आपके अन्दर रसगुल्ला खाने का संकल्प नहीं है और आपको यह पता नहीं है कि रसगुल्ला में बहुत अच्छा taste होता है और आपने रसगुल्ला खा लिया अर्थात् आपके अन्दर संकल्प, संकल्प का मतलब यह भाव नहीं कि यह रसगुल्ला मुझे सुख देगा। यह आपको पता नहीं मान लो और आपने वह रसगुल्ला खा लिया तो आपको उससे वह सुख नहीं मिलेगा जो सुख संकल्प के साथ, जिसको पता है कि हाँ! रसगुल्ले खाने में सुख है वह उसको मिलेगा, वह आपको नहीं मिलेगा। इसलिए जो व्यक्ति जिस तरह के **संकल्प भाव** के साथ में रहता है, उसके अन्दर वह इन्द्रियों की प्रीति उत्पन्न होने से उसे काम सुख की अनुभूति

होती है, यह काम की परिभाषा है। **काम मतलब जिससे इन्द्रियाँ प्रसन्न रहें और जिससे हमारा अभिमान, हमारा संकल्प रस पूर्ण पूर्ति को प्राप्त हो जाए, उसका नाम है- काम।** उस काम से लोग सुखी होते हैं इसी को कहते हैं- काम सेवन और वह काम से सुखी होने के लिए भी यहाँ कहा जा रहा है कि चूँकि संसारी प्राणी हैं, सभी जो अपना जीवन जीते हैं, उन्हें अपने इन काम सुखों की प्राप्ति भी करनी ही पड़ती है लेकिन उसे भी हम पुरुषार्थ कैसे कहें? उसके लिए यहाँ पर एक युक्ति दी जा रही है...

सुखी जीवन हेतु धर्म, अर्थ एवं काम पुरुषार्थ में संतुलन हो

धर्मार्थाविरोधेन कामं सेवेत ततः सुखी स्यात्॥ 2॥

कहते हैं...**धर्म और अर्थ का विरोध उत्पन्न न हो, इस तरह से अगर उस काम का सेवन किया जाए तब तो वह सुखी होगा।** क्या कहा? **धर्म और अर्थ के विरोध के बिना वह काम सुख आपको सुखी बना सकेगा।** क्या मतलब हुआ इसका? **'धर्माविरोधेन्'** **धर्म से विरुद्ध काम नहीं होना चाहिए।** धर्म से विरुद्ध का मतलब जो आपका **सामाजिक धर्म** है, जो आपका **नैतिक धर्म** है, उसके विरुद्ध वह काम सुख नहीं होना चाहिए, अनैतिक नहीं होना चाहिए। वह **काम सुख अगर मान लो किसी पाँचों इन्द्रियों की जो तृप्ति के लिए सुख होता है, वह स्त्री सुख होता है।** वह स्त्री सुख प्राप्त करने के लिए व्यक्ति अगर धर्म विरुद्ध करता है, धर्म विरुद्ध का मतलब अन्याय तरीके से, गुप्त रूप में किए गए ऐसे पाप, जो किसी के लिए पता नहीं है लेकिन वह उसने कर लिए हैं। इस तरह के पाप जो सामाजिक रूप से स्वीकृत नहीं होते हैं, जिन्हें अन्याय कहा जाता है, जिनका खुलासा होने पर दण्ड दिया जाता है, जिसके लिए कोई अगर किसी भी तरह का अर्जी लगा दे, कहीं पर भी police department में या किसी court में तो उसके लिए किसी भी तरह की सजा दी जा सकती है, यह सारे के सारे कार्य धर्म विरुद्ध कहलाते हैं। **'धर्मा विरोधेन'** अर्थात् **काम सुख भी आदमी अगर सेवन करे तो वह भी स्वस्त्री के साथ, वह भी जब उसका विवाह हो जाए तो वह legal तरीके से जो उसे उपलब्ध हुआ है, उसके साथ वह अगर सेवन करता है तब वह सुखी कहलाएगा अन्यथा वह दुःखी**

कहलाएगा। किसी के साथ जबरदस्ती करने से उत्पन्न हुआ सुख, सुख नहीं होता, वह दु:ख होता है, जो उसे और आगे दु:खी बनाता है। अत: काम सुख कभी भी जबरदस्ती नहीं होता। काम सुख कभी भी अपनी स्त्री के अलावा और किसी स्त्री से नहीं होता। इस तरह के सुखों की इच्छा करने से ही वह काम भी एक पुरुषार्थ बन जाता है।

काम पुरुषार्थ धर्म व अर्थ अविरुद्ध होना चाहिए

जो धर्म के विरुद्ध न हो और अर्थ के विरुद्ध भी न हो। अर्थ के विरुद्ध का मतलब...आपके पास में धन है तो उस धन से आप कुछ भी **यद्वा-तद्वा प्रवृत्ति** न करने लग जाए क्योंकि धन से सब कुछ खरीदा जा सकता है, धन से सब कुछ प्राप्त किया जा सकता है। धन के माध्यम से आपके लिए यह काम सुख की पूर्ति करने के लिए भी सब कुछ आपको उपलब्ध हो सकता है। उस धन का इस तरह से अगर दुरुपयोग किया जाएगा या इस तरह से उस धन को लगाया जाएगा तो वह अर्थ के साथ में विरुद्ध काम सुख कहलाएगा। **धर्म से भी अविरुद्ध होना चाहिए और अर्थ से भी अविरुद्ध होना चाहिए।** इस तरह का जो सुख होगा वह उसके लिए काम पुरुषार्थ की श्रेणी में आता है। **अन्याय जनित परस्त्री सेवन और वेश्या सेवन आदि के जो सुख हैं, ये सब धर्म और अर्थ के विरुद्ध कहलाते हैं।** क्योंकि परस्त्री सेवन का यह धर्म विरुद्ध सुख है और वेश्यागमन के साथ होने वाला यह अर्थ विरुद्ध सुख है क्योंकि वह अर्थ से मिलती है। वेश्या की प्राप्ति अर्थ से होगी तो वह केवल अर्थ से प्रयोजन रखती है। इसलिए ये दोनों ही प्रकार के विरोध के बिना जो सुख मिलेगा आदमी को, अपने ही विवाहित स्वस्त्री के साथ में, उसका नाम ही **काम पुरुषार्थ** कहा गया है और वह धर्म और अर्थ के अविरुद्ध पुरुषार्थ कहलाता है। इसलिए आगे कहते हैं...

तीनों पुरुषार्थों का बराबर मात्रा में सेवन करें

समं वा त्रिवर्गं सेवेत॥ 3॥

'समं' अर्थात् समान भाव से तीनों वर्गों का सेवन करें। **एक अच्छा व्यक्ति, नैतिक व्यक्ति, सामाजिक व्यक्ति कैसे इन तीनों पुरुषार्थों का सेवन करे?** समभाव से, **समान भाव से! समान भाव** का मतलब यहाँ यह लिया जाता है कि **आप अपने दिन भर के समय का भी एक समान विभाजन करें।** क्या हुआ? इन्द्रिय सुखों की प्राप्ति करने के लिए भी आपके लिए समय ज्यादा नहीं होना चाहिए। अर्थ के पुरुषार्थ के लिए भी समय ज्यादा नहीं होना चाहिए और धर्म के लिए भी समय ज्यादा नहीं होना चाहिए। स्पष्ट बात है! किसी का समय ज्यादा नहीं होना चाहिए, समय सबका बराबर होना चाहिए। **अगर आप चार घण्टे अर्थ पुरुषार्थ में लगाते हैं तो चार घण्टे आपके लिए धर्म पुरुषार्थ में भी लगे और चार घण्टे आपको अपने घर-परिवार**

के इन्द्रिय सुखों के साथ में भी लगे। बताओ सम्भव है? नहीं है। समय सबसे ज्यादा किस में लगता है? अर्थ पुरुषार्थ में लगता है। सुबह से शाम तक अर्थ के कमाने में, धन के कमाने में समय जाता है। धर्म के लिए तो सुबह का एक घण्टा भी निकल पाना बड़ा मुश्किल होता है। आदमी धार्मिक कहलाने लग जाता है, अगर एक घण्टा भी सुबह का धर्म का समय निकाल लेता है। रोजाना मन्दिर जाता है महाराज! रोजाना अभिषेक करता है महाराज! कभी नहीं छूटता। एक घण्टे भी अगर मन्दिर आ जाए तो बड़ी बात है और केवल अभिषेक करके आने में तो उन्हें केवल बीस minute लगते हैं, पन्द्रह minute लगते हैं। उसी से उन्हें धर्म भाव आ जाता है तो वह धर्म पुरुषार्थ उनके लिए लगता है, हमने धर्म पुरुषार्थ कर लिया। अब जो व्याख्या है उसको तो हमें स्पष्ट कहना ही पड़ेगा भले ही हो कुछ भी रहा हो। यहाँ यह कहा जा रहा है...**समझदार व्यक्ति तीनों वर्गों का समय, समान रूप से निकाल कर, तीनों का समान रूप से सेवन करें।** इससे क्या होगा? **अर्थ पुरुषार्थ** में भी जो आपके लिए अत्यधिक **गृद्धता-आसक्ति** उत्पन्न होती है, वह भी कम होगी। आप सोचो, यह कल्पना करो अच्छा कि कितना अच्छा व्यक्ति होगा! **मान लो सुबह से शाम तक के बारह घण्टे होते हैं। चार घण्टे वह सुबह धर्म करे, चार घण्टे के लिए दुकान पर बैठे और चार घण्टे अपने घर खाए-पिए, आराम से बैठे।** बताओ यह सुखी जीवन होगा कि नहीं होगा? सम्भव नहीं है? इस सम्भव को असम्भव हमने बना रखा है? किसने बना रखा है?

जीवन में हमारी आवश्यकताएँ कितनी हो?

नौकरी वाला कैसे करेगा? जो पराश्रित होने वाली जो चीजें हैं, job है, इस तरह की नौकरियाँ हैं, उनके लिए दिक्कत है लेकिन जब व्यक्ति अपना ही काम करे और अपने ही काम से वह सन्तुष्ट हो, अपना उसका व्यापार हो तो वह इस तरह की अपना time का भी adjustment कर सकता है। आखिर हमें **मनुष्य जीवन भी तो धर्म, अर्थ और काम पुरुषार्थ के साथ सुख पूर्वक जीना है** कि नहीं? सुख को तो आदमी भूल ही जाता है। जिनकी आवश्यकताएँ कम है, वह कर सकता है। आवश्यकताएँ हम बनाते हैं कि और कोई अपने ऊपर आवश्यकता डाल देता है? आवश्यकता तो हम ही बनाते हैं तो आवश्यकता तो हमारे ऊपर ही है। हमें पहली बात तो

इस बात की जानकारी भी होनी चाहिए, इस तरह का हमारे अन्दर एक attitude भी बनना चाहिए कि भाई हाँ! ऐसा भी कोई **सुखी जीवन** गृहस्थ का हो सकता है तो हम अपने लिए बाद में सोचे। वही कहने का मतलब है, वह **सदा सुखदास** का मतलब वह सदा सुखी इसीलिए सदा सुखी है। **सदा सुखदास जी एक विद्वान हुए हैं तो इसलिए सदा सुखदास है कि वे और किसी के दास नहीं हैं।** सुबह-सुबह उन्होंने अपने बढ़िया तीन घण्टे तक मन्दिर में व्यतीत किया। उसके बाद में घर आए, भोजन-पानी किया, आराम किया। दोपहर में तीन-चार घण्टे अपनी दुकान पर बैठे, खोले और शाम के पाँच बजे अपनी दुकान बंद करी, फिर अपने मन्दिर पहुँचे। घर आए और अपना थोड़ा-बहुत खाया-पिया और मन्दिर में बैठे और अपनी सामायिक की और आराम से सो गए...सदा सुखदास! नौकरी कर लो, चाहे दुकान खोल लो, कुछ भी हो, कहीं पर भी हमें अगर time देना है तो हमें कम से कम इतना ज्ञान तो हो कि आखिर हमारा time किस में कितना लगना चाहिए? हम किसके लिए जी रहे हैं?

सुख से जीवन जीने का तरीका

चलो! कोई बात नहीं जिनकी मजबूरियाँ है, वह ठीक है लेकिन जिनकी कोई मजबूरियाँ नहीं है। जिनके अच्छे व्यापार हैं, जिनके अच्छे सब कुछ है, घर-परिवार सब अच्छा चल रहा है, वे भी तो कम से कम सुख से जीना सीखें! ऐसे भी तो लोग हैं जिन्हें किसी चीज की कमी नहीं है लेकिन फिर भी सुख नाम की चीज नहीं है। वह सुख कैसे मिलेगा? इस तरह के ज्ञान से ही तो मिलेगा। **तीनों वर्गों का सम अनुपात से सेवन करें।** दिन भर में वह तीनों वर्गों को समान-समान रूप से विभाजित कर ले तो वह सुखी जीवन वाला जीव कहलाएगा। आप सोचो इतनी अच्छी जिंदगी, कितनी अच्छी जिंदगी होगी, ऐसे गृहस्थ की? सुबह से लेकर के चार घण्टे तक 10 बजे तक अच्छे से जो अच्छे से धर्म करे, आराम से बाद में घर पर आए 10 बजे भोजन करे और फिर भोजन करने के बाद में, फिर अपना थोड़ा बहुत आराम करने के बाद में 12 बजे से, एक बजे से शाम के चार बजे तक मान लो, एक आध घंटा ज्यादा भी कर लो चलो पाँच बजे तक भी सही बस उतना, अपने उसने काम किया और पाँच बजे जैसे ही संध्या होने लगी, संध्या के समय पर अपने घर आ गया। संध्या से पूर्व उसने भोजन किया, **रात्रि भोजन के त्याग** का नियम पल जाएगा और रात में आराम से बैठ कर अपना धर्म ध्यान किया, सो गया।

सुखी कौन?

सुखी जीवन हमें पता तो हो कि सुख किसे कहते हैं? लोग तो तृष्णा को सुख समझ बैठे हैं। जिसके अन्दर जितनी इच्छाएँ ज्यादा होंगी, वह उतना ही सुखी होगा। Target बनाया जाता

है...हमें कितना कमाना है? अब आजकल लाख-दो लाख, दस लाख की तो कोई बात ही नहीं करता है, दस करोड़ से नीचे तो कोई बात ही नहीं करता है। सबसे पहली आमदनी, सबसे पहला step क्या होना चाहिए? कम से कम हमारे पास में दस करोड़ तो होने चाहिए, फिर हम सौ करोड़ की सोचेंगे। जब इस तरह की आदमी की इच्छायें होंगी और उनकी पूर्ति में वह लगा रहेगा तो जिंदगी में कभी भी उसे **सुख** किस चिड़िया का नाम है? पता ही नहीं रहेगा। सुख किसे कहते हैं? यह उसको अनुभूति में नहीं आएगा। इसलिए यहाँ कहा जा रहा है...तीनों पुरुषार्थों का सम रुप से सेवन करने वाला ही सुखी रहता है अथवा यहाँ **'वा'** करके दिया है। अगर आपसे यह सम्भव न हो, इसकी टीका मैं कर रहा हूँ, इसलिए बता रहा हूँ- यह 'वा' जो दिया है, यह अथवा के लिए दिया है। अगर ऐसा सम्भव न हो तो फिर वह दूसरे number का सूत्र लागू करना- **'धर्म और अर्थ से अविरुद्ध काम सुख को प्राप्त करके आप सुखी जीवन जीना'** नहीं समझे? मतलब time की जो bounding है, सम अनुपात की जो विभाजन की बात है, वह **'वा'** अथवा **'अर्थ'** में है। अगर बन सके अथवा तो यह सबसे अच्छा है, अगर नहीं बने तो बस यह है, धर्म का विरोध न आए, अर्थ का विरोध न आए, ऐसे आप काम सुख को प्राप्त करके धर्म, अर्थ और काम तीनों पुरुषार्थ करके सुखी बनें। यह फिर उसके लिए आप जितना समय निकाले वह अथवा में चला जाएगा।

अति सर्वत्र वर्जयेत

एकोर्ह्यत्यासेवितो धर्मार्थकामानामात्मानमितरौ च पीडयति॥ 4॥

क्या कहते हैं? जो तीनों को समान रुप से सेवन करने की बात की है, अगर उसमें से एक की अति आसेवना होती है **'एकोह्यत्यासेवितो' एक पुरुषार्थ का सेवन ज्यादा करता है** अर्थात् एक पुरुषार्थ अगर तीनों में से कोई भी ज्यादा करता है तो वह **'धर्मार्थकामानाम्'** इन तीनों में से किसी एक का भी अधिक सेवन करने वाला **'आत्मानमितरौ पीडयति'** वह अपने आप को भी दु:ख देगा और अन्य जो उसके घर परिवार के लोग होंगे, उनको भी वह दु:खी बनाएगा या अन्य दूसरे पुरुषार्थों को वह क्या कर देगा? नष्ट कर देगा। **'पीड़यति' अर्थात्** उन्हें व्यर्थ कर देगा, नष्ट कर देगा। यानि **तीनों में से किसी एक पुरुषार्थ का अति सेवन करने से वह अन्य दोनों पुरुषार्थों को नष्ट कर देगा और उसके माध्यम से वह अपनी आत्मा को भी नष्ट कर लेगा,** यह कहने का मतलब है। **'आत्मानं इतरो च पीड़यति'** अर्थात् **धर्म का भी अत्यधिक सेवन नहीं करना चाहिए।** यह बात किसके लिए है? गृहस्थों के लिए है। धर्म का पुरुषार्थ भी वह उतना करें जिससे कि आखिर घर-परिवार भी तो चलाना है। यह उनके लिए है जिन्हें घर-

परिवार चलाने के लिए अर्थ की भी आवश्यकता है। वह अर्थ की आवश्यकता के लिए अगर वह अर्थ पर ध्यान नहीं देगा तो फिर परिवार नहीं चलेगा। इसलिए वह **अर्थ पुरुषार्थ भी करे, धर्म और काम पुरुषार्थ भी करे तभी जाकर वह धर्म पुरुषार्थ के साथ सुखी रह पाएगा। तीनों की यहाँ पर बराबर आवश्यकता बताई है।** अर्थ की अधिकता हो जाएगी तो भी यह पुरुषार्थ बिगड़ जाते हैं, घर का, परिवार का, सुख नहीं मिलता। आज लोगों के लिए सबसे बड़ी शिकायत क्या है? Job इतनी बड़ी हो गई है कि घर के लिए, परिवार के लिए, बच्चों के साथ में बैठने के लिए time नहीं है तो यह काम पुरुषार्थ बिगड़ गया। **'काम पुरुषार्थ'** का मतलब केवल स्त्री सेवन ही नहीं है। **काम पुरुषार्थ का मतलब होता है...पाँचों इन्द्रियों के लिए सुख मिलने वाला, अपने संबंधों से या अपने इन्द्रिय के विषयों से मन का सुख मिलने वाला।** वह सब इन्द्रियों के विषय का सुख प्राप्त करने के लिए उसको फुर्सत नहीं है। अब न वह कुछ अच्छा देख सकता है, न गाने सुन सकता है, न कुछ फिल्में देख सकता है, न अपनी पत्नी के साथ बैठ सकता है, न बच्चों के साथ मनोरंजन कर सकता है, तो यह कुछ भी उसके लिए नहीं मिल रहा है। किसके कारण से? **अर्थ पुरुषार्थ** ज्यादा होने लग गया तो धर्म भी गया और काम भी गया। अर्थ पुरुषार्थ ज्यादा होने से भी दिक्कत हो जाती है और **काम पुरुषार्थ** ज्यादा हो जाए तो भी वह सब काम नष्ट कर लेगा। जिसका काम पुरुषार्थ में ज्यादा मन लगने लग गया तो फिर उसका धर्म में मन नहीं लगेगा। जो उसके लिए अर्थ के साधन थे, वे भी सब धीरे-धीरे नष्ट हो जाएँगे और वे दूसरे और जो उसके काम आगे बनने थे, वे सब काम बिगड़ने लग जाएँगे क्योंकि वह उन कामों पर ध्यान दे नहीं पाएगा। इसलिए एक अच्छे गृहस्थ के लिए भी और एक जो राजा होता है, दोनों के लिए ये नीतियाँ हैं। राजा और प्रजा...**ये जो नीतियाँ हैं यह राजा के लिए भी हैं और प्रजा के लिए भी हैं।** ऐसे भी राजाओं के दृष्टान्त मिलते हैं जो काम पुरुषार्थ की अधिकता के कारण से ही नष्ट हुए हैं...**जैसे जीवन्धर के पिताश्री थे**...सत्यंधर राजा! यह किसके कारण से? काम पुरुषार्थ की अधिकता के कारण से ही यह राजत्वपने को छोड़ करके नष्ट हो गए। किसी भी तरीके से उनका सब मंत्री ने ही राजपाट छुड़ा लिया और उन्हें अपनी स्त्री को भी शमशान में भेजना पड़ गया और वहाँ जाकर जीवंधर का जन्म हुआ...यह अति वाले पुरुषार्थ के भी यह उदाहरण मिलते हैं। जो राजा होगा वह अगर धर्म में ही अति सेवन करेगा, धर्म का ही तो वह अर्थ नीति, काम नीति से रहित हो जाएगा तो वह अपने राज्य का संचालन नहीं कर पाएगा। यह जो नियम हैं, वे किसके लिए हैं? राजा को ध्यान में रख कर भी ये नियम हैं और ऐसे ही प्रजा जो अर्थ और काम पुरुषार्थ के साथ जीवन जीने के लिए प्रतिदिन परिश्रम करते हैं उनके लिए भी नियम हैं। अब बाकी जिन्होंने किसी भी तरह से कुछ भी इकट्ठा कर लिया है और जिन्हें कुछ करने की जरूरत नहीं है तो उनके लिए यह नियम फिर अपने हिसाब से आगे-पीछे कुछ भी हो सकते हैं। सामान्यतया, सामान्य जनता के लिए इसी तरह का यह नियम होने पर वह जनता सुखी रह सकती है, यह यहाँ बताया जा रहा है।

धन की गुलामी से जीवन दुःखी

परार्थ भारवाहिन इवात्मसुखं निरुन्धानस्य धनोपार्जनम्॥ 5॥

कहते हैं...दूसरों के लिए भारवाही की तरह आत्मसुख को निरुंद करके, रोक करके धन का उपार्जन करने वालों को क्या सुख मिलेगा? क्या मतलब? **भारवाही** का मतलब भार ढोने वाले। **जो भार ढोते हैं** दूसरों के लिए, अपने सिर पर भार ले जा रहे हैं, उन्हें दूसरों का भार ढोने से क्या सुख मिलेगा? यह उनके लिए कहा जा रहा है, जो दूसरों के लिए ही बस! केवल धन का उपार्जन कर रहे हैं। क्या कहा? **दूसरों के लिए ही धन का उपार्जन कर रहे हैं और आत्म सुख से वंचित हो रहे हैं।** यह भी आजकल लोगों की मानसिकता दिखती है। धन चाहिए, धन चाहिए...किसके लिए? बेटे के लिए चाहिए, बेटी के लिए चाहिए, उनके सुख के लिए चाहिए, केवल उनके ही सुख के लिए धन चाहिए बस! यही एक मानसिकता बन जाती है। कर्तव्य तो है हर माता-पिता का लेकिन माता-पिता को इतना भी ध्यान में रखना तो पड़ता ही है कि केवल हम उन्हीं के सुख के लिए पूरा का पूरा अपना जीवन न निकाल दे। हमें यह भी ध्यान रखना चाहिए कि **हमें अपना कर्तव्य निर्वाह करने के लिए उन्हें कितना देना है? और अपने सुख के लिए हमें कितना रखना है?** यह भी तो ध्यान रखना पड़ेगा। यह ध्यान में रखा जाएगा तो वह केवल भार ढोने वाला नहीं बन जाएगा, वह कर्तव्य का निर्वाह करने वाला बनेगा। जो केवल मात्र दूसरों के लिए ही धन इकट्ठा करता है और उस धन का अपने लिए कोई सुख का उपभोग नहीं करता है वह भी अच्छा **धनिक** नहीं कहा जाता है, उसकी यहाँ प्रशंसा नहीं की जाती है। मतलब यह है **धन कमाओ तो उससे सुख भी अपने अन्दर लाओ**, दूसरों का मतलब यही होता है केवल परिवार की चिन्ता में ही नहीं। अपना घर है, अपने लोग हैं और अपने ही अगर बच्चे हैं, पुत्र-पुत्रियाँ हैं, उनके पूर्ण जीवन के निर्वाह के लिए अगर आपने कर लिया तो भी पर्याप्त होता है लेकिन उसके अलावा और भी बहुत सारे कुटुंबीजन होते हैं, उन सबकी अगर आप जिम्मेदारी लिए रहते हैं तो वह आपके कर्तव्य में नहीं होकर भी आप अनावश्यक रूप से उस धन को प्राप्त करते रहते हैं। एक व्यक्ति के लिए यह भी देखने में मिलता है कि जो व्यक्ति ने अपने बेटों को, बेटियों को समर्थ बना दिया है और उसके

पुत्र-पुत्रियाँ खुद सब कुछ धन को अर्जित कर रहे हैं तो फिर भी उसके लिए अब कौन सा? कितना धन? किसके लिए कमाना है? धन कमाने की कोई limit नहीं होती है। बस होना चाहिए, अभिमान का रस आता है...मैं कितने करोड़ का स्वामी? मेरी bank में कितने? मेरे balance में कितने? यह एक अभिमान का रस आता है बस! खाएगा तो कुछ नहीं, धन तो खाया जाएगा नहीं, वह पड़ा ही तो रहेगा। मान लो सौ करोड़, दो सौ करोड़, हजार करोड़, तीन हजार करोड़ के आसामी हैं तो वे खाएँगे क्या? खाएँगे तो तीन रोटी ज्यादा से ज्यादा लेकिन वह अभिमान का रस होता है बस! और उसके कारण से वह एक बोझा ढोने वाले जीव की तरह बन जाता है तो वह आत्मिक सुख की प्राप्ति अपने लिए नहीं कर पाता।

मन की प्रसन्नता ही वैभव है

इन्द्रियमनः प्रसादनफला हि विभूतयः ॥ 6 ॥

देखो! इसलिए कहा जाता है...**वैभव** वह है, **विभूति** वह है, **धन संपदा उसका नाम है, जिससे अपनी इन्द्रिय और मन की प्रसन्नता का फल उसे प्राप्त होता रहे।** आज अधिकतर आदमी बीमार पड़ रहे हैं...किस कारण से? सिर्फ दूसरों की चिन्ता, दूसरों के लिए व्यापार करने से और दूसरों के लिए मेहनत करने से बीमार पड़ रहे हैं। रोगी हो रहे हैं, मानसिक रूप से परेशान हो रहे हैं तो वह जो प्रसन्नता इन्द्रिय और मन की होनी चाहिए थी वह उन्हें प्राप्त नहीं हो रही। कमा रोज खूब रहे हैं लेकिन वह उतना नहीं हो रहा है, जितना होना चाहिए तो उसके कारण से वह जो भीतर से उनके अन्दर दुःख रहता है और वह उस दुःख के कारण से दुःखी बने रहते हैं तो वह उनका कोई भी वैभव कोई काम का नहीं होता है जो उनके पास में है। कुल मिलाकर यह है, **जो आपके पास में है पहले आप उसी सुख का अनुभव करें।** कम नहीं है, सबके पास सब कुछ है, उसी से अपने इन्द्रिय को, मन को प्रसन्न करें। जिस सुख, जिस वैभव से इन्द्रिय और मन प्रसन्न नहीं होते उस सुख का मतलब ही क्या? इसलिए विभूति उसी का नाम है, **वैभव उसी का नाम है जिससे इन्द्रिय और मन की प्रसन्नता उत्पन्न हो जाए।** बहुत वैभव है, बहुत वैभव है और मन प्रसन्न नहीं है तो क्या करोगे? मन प्रसन्न करने के लिए क्या करना पड़ेगा? सब तो कर लिया, बढ़िया बंगला बन गया, हवेली बन गई, सब कुछ हो गया, कुछ काम करने को बचा ही नहीं है। अब हवेली के अन्दर अब क्या करना है? अब मन प्रसन्न कैसे होगा? यह जो मन की प्रसन्नता है यह शुरुआत से ही हमने सीखी ही नहीं कि मन की प्रसन्नता किससे आती है? इसलिए पहले के लोग रोजाना कमाते थे, मेहनत करते थे, खाते थे, प्रसन्न रहते थे। घर-परिवार सब चलते थे। **पहले के लोगों से सीखो परिवार का management कैसे होता है?** आठ-आठ, दस-दस बच्चे होते थे, सब पलते थे, सब प्रसन्न रहते थे, सब आगे बढ़ते थे। आज

एक बच्चे के लिए पूरी जिंदगी की कमाई लग जाती है। यह कौन सी कमाई है और यह कौन सा बच्चा है और यह कौन सा पुरुषार्थ है? पहले आदमी को चार बच्चों का, दस बच्चों का पालन करने में पसीना नहीं आता था। आज एक से दूसरा हो जाए तो आदमी की हालत खराब हो जाती है। उसे सारा budget सामने दिखाई देता है, इस साल का इतना खर्चा, इस साल का इतना खर्चा, इस साल की इतनी fees, इस साल की इतनी fees और कुल मिलाकर हमें इतना balance में रखना है तब यह बच्चा graduate कर पाएगा। **इतनी चिन्ता में आपने पड़ करके बच्चे को पढ़ा करके क्या प्राप्त कर लिया?** बच्चे को पढ़ाने की चिन्ता आपके लिए होनी चाहिए लेकिन इतनी चिन्ता नहीं होनी चाहिए कि हम उसको पूरी पूंजी लगा कर पढ़ायें। पढ़ाने के लिए बच्चे के लिए और भी तरीके होते हैं लेकिन आप जिस तरीके से चल रहे होते हैं, वह तरीका आपके पूरे जीवन भर आपको परेशान करेगा और बच्चा फिर क्या पढ़ करके निकलेगा? ज्यादा से ज्यादा IIT कर लेगा, ज्यादा से ज्यादा MBBS कर लेगा। इससे ज्यादा तो और क्या कर पाएगा? उसके बाद भी फिर उसको धन कमाने में और मेहनत करनी पड़ेगी। कर लेगा... उसके बाद भी आपके लिए यह लगता रहेगा कि हमने बच्चे के लिए कुछ किया या नहीं किया तो यह आपकी सबसे बड़ी कमी मानी जाएगी। **विभूति वह है जिससे अपनी इन्द्रिय और मन की प्रसन्नता बनी रहे।** यही बात बच्चे सीखेंगे तो वह भी बड़े होकर प्रसन्नता से पढ़ेंगे और जितना है, हमारे पिता ने हमें जितना दिया है हम उसमें पढ़े हैं तो वह कभी आपके लिए यूँ नहीं कहेंगे कि हमें इस school में क्यों नहीं पढ़ाया, उस school में क्यों नहीं पढ़ाया क्योंकि प्रसन्नता से पढ़े हैं। आपने आज बच्चों की प्रसन्नता खो दी है। स्कूल तो बड़े-बड़े standard के दे दिए हैं। तब वह समझ नहीं पाते बड़े होकर, **खुशी किस चिड़िया का नाम है? कहाँ से खुश रहा जाता है? सब कुछ पाने के बाद अब खुशी कहाँ से मिले? वह कोई खुशी अलग से नहीं आती है। खुशी तो जीवन के हर पल में संतोष के साथ जीने से ही आती है।** इसलिए वैभव की परिभाषा यह है।

कार्य की पूर्णता हेतु इन्द्रियों को जीतना जरूरी

नाजितेन्द्रियाणां कोऽपि कार्यसिद्धिरस्ति॥ 7॥

इसलिए संसार की सभी वस्तुओं को देखते हुए अगर हमारी इन्द्रियाँ सभी वस्तुओं को ग्रहण

करने में लग जायेंगी तो फिर ऐसे लोगों के लिए कोई कार्य की सिद्धि कभी नहीं हो पाएगी। आपको अपने किसी कार्य की सिद्धि करने के लिए एक आपने अगर कोई अपने जीवन का aim बनाया है तो उसको भी पूर्ण करने के लिए आपको जितेन्द्रिय होना पड़ेगा। दूसरी और चीजों को मत देखो। बस! एक ही कार्य की ओर देखो कि हमें इस अर्थ की सिद्धि करनी है या इस कार्य की सिद्धि करनी है। **जितनी भी कार्य सिद्धियाँ होती है वे जितेन्द्रिय लोगों को होती है। जिन्होंने इन्द्रियों को वश में नहीं किया वे कोई कार्य सिद्धि नहीं कर पाते हैं** क्योंकि मन का जब तक आप अंकुश नहीं रखेंगे तब तक आप कोई भी इच्छा करने वाले कार्य को प्राप्त नहीं कर पाएँगे। इसलिए मन का संयमित होना, अंकुश में रहना यह जरूरी होता है, उसी का नाम **'विजितेन्द्रियः मना'** कहलाता है।

इन्द्रिय जय किसे कहते हैं?

इष्टेऽर्थेऽनासक्तिर्विरुद्धे चाप्रवृत्तिरिन्द्रियजयः ॥ 8 ॥

देखो! यह इन्द्रिय जय की परिभाषा है। बड़े-बड़े आचरण परक जो ग्रन्थ है, उनमें इन्द्रियजय की परिभाषा नहीं मिलेगी जो यहाँ आपके लिए इन्द्रिय जय की परिभाषा दी हुई है। क्या कहते हैं? **'इष्टेऽर्थे'** अर्थ का मतलब यहाँ पर धन नहीं है...**अर्थ अर्थात् पदार्थ।** अर्थ यानि पदार्थ भी होता है, अर्थ यानि धन भी होता है, अर्थ यानि प्रयोजन भी होता है। जहाँ जैसा अर्थ निकलता है, वहाँ वैसा लगाया जाता है। **'इष्टेऽर्थे नासक्तिः' 'इन्द्रियजयः'** की परिभाषा क्या है? यहाँ इन्द्रियजय जीतने का मतलब, इन्द्रियों को जीतने का मतलब कोई मुनि महाराज की तरह इन्द्रियाँ जीतना नहीं है। यहाँ **इन्द्रियजय** का मतलब है...**जो आपके लिए अच्छे लगने वाले पदार्थ हैं, उनमें अनासक्ति होना। अनासक्ति** मतलब आसक्ति नहीं होना, आसक्ति मतलब गृद्धता नहीं होना। **गृद्धता** मतलब गिद्ध की तरह उसी में लगे नहीं रहना। इससे भी ज्यादा समझाऊँ क्या कुछ? जैसे गिद्ध वृत्ति होती है न! गिद्ध क्या करता है? उसको बिल्कुल नोंच-नोंच करके, नोंच-नोंच करके उसको लेता है। ऐसी वृत्ति को गिद्ध वृत्ति **'गृद्धता'** कहा जाता है। ऐसी इष्ट वस्तु में

आसक्ति नहीं होना। तब क्या होना? बिना आसक्ति के उसका सेवन करना। आपको कोई भी वस्तु इष्ट है तो आसक्ति होने पर वह क्या होता है? वह वस्तु अत्यधिक आपके सेवन करने में आ जाएगी। उसमें आपके लिए समय भी अधिक लगेगा और वस्तु की मात्रा भी अधिक होगी और इसके कारण से आपकी अन्दर की वह आसक्ति इन्द्रियजय को प्राप्त नहीं करा पाएगी। समय के अनुपात के अनुसार सेवन किया तो वही वस्तु आपके लिए अनासक्ति हो जाएगी और वही वस्तु आपके लिए इन्द्रियजय के रूप में हो जाएगी, गृहस्थ के लिए यह इन्द्रियजय है। जो वस्तु अच्छी लग रही है...खाने की, पीने की, सेवन करने की, सूँघने की, सुनने की, देखने की, कोई भी वस्तु जो आसक्ति के बिना होगी तो वह आपके लिए इन्द्रिय जय का कारण बन जाएगी। बस! यही आपके लिए **इन्द्रिय जय** है। अब इसकी detail बस इतनी हो सकती है कि **आपके लिए वह एक सीमित मात्रा में और सीमित समय में वह उपभोग करने में आए, उसी का नाम है- अनासक्ति।** ऐसा तो नहीं कहा जा रहा है कि आप इष्ट और अनिष्ट में बिल्कुल **समता** रखें। **आपसे मुनि महाराज की तरह नहीं कहा जा रहा है।** आपसे क्या कहा जा रहा है? **इष्ट** को आप सेवन करें, मना नहीं है लेकिन उसका **आसक्ति के साथ सेवन** न करें। **जब व्यक्ति कोई भी अच्छे पदार्थों को भी आसक्ति के साथ अधिक सेवन कर लेता है तो वह रोगी बन जाता है।** चाहे वह खाने वाली चीज हो, चाहे और किसी तरह के काम सेवन की चीज हो, वह उसके लिए रोग की उत्पत्ति का कारण बन जाती है। शरीर नष्ट होगा तो सब कुछ नष्ट हो जाएगा। इसलिए सीमित मात्रा में कोई भी आपका इष्ट पदार्थ है...चाहे नमकीन हो, चाहे मीठा हो, चाहे पूड़ी हो, चाहे हलवा हो, कोई भी पदार्थ; चाहे ठंडे हो, चाहे गर्म हो, चाहे मसालेदार हो, चाहे मिर्ची वाले हो, चाहे कैसे भी हो, आप उनको सीमित मात्रा में सेवन करेंगे तो वे आपके लिए स्वास्थ्यकर होंगे। **आसक्ति क्या होती है?** अच्छा लग रहा था, अच्छा लग रहा था, इसलिए लेते जा रहे थे, इसलिए लेते जा रहे थे, दो की जगह पाँच खा गए। फिर मिले कि नहीं मिले, बहुत अच्छे बने थे। अच्छे तो थे, अब तुम सोचो कि अब तुम्हारा क्या होगा? जो रोगों के लिए कारण बन जाए उसका नाम ही है- **आसक्ति।** यह गलतियाँ हर गृहस्थ करता है।

वस्तुओं में आसक्ति का भाव रोगी बना देता है

जब parties में जाता है और उसको buffet system पर खड़ा कर दिया जाता है। कितने तरह के item बनते हैं और कितनी उसकी तृष्णा एक साथ सब चीजें देख कर अस्सी-अस्सी item बनते हैं, डेढ़ सौ item तक बनते हैं। दिल्ली में पाँच सौ इक्यावन (551) item बनने के record हैं। सुन लो दिल्ली वालों से! यह भी एक standard बनता है। हमारे बेटे की शादी में 551 तरह के dishes बने थे। यह standard का काम है। अब आप सोचोगे 551 में आप एक-एक piece भी खा पाओगे 551, देख ही नहीं पाओगे लेकिन आसक्ति बनी रह सकती है। अगर कहीं घर से भोजन करके गए हो और वहाँ जाकर यह देख लिया हो तब तो कोसते रहोगे,

इसने भोजन क्यों करा दिया घर में? आज पहले भोजन करके क्यों आ गया? यह आसक्ति कहलाती है। **इस आसक्ति के बिना जो जिएगा उसका नाम है- इन्द्रिय जय करते हुए जीने वाला गृहस्थ** और **विरुद्ध में प्रवृत्ति नहीं होना** जो अपनी प्रकृति के विरुद्ध है। अब diabetes हो गई, मीठा अपनी प्रकृति के विरुद्ध हो गया लेकिन सब खा रहे हैं महाराज! कैसे मना किया जाए? अब घर वाले लाकर रख देते हैं सामने और मन हो जाता है तो एक piece तो खाया था। उसमें इतनी sugar बढ़ गई, वह पाँच सौ हो गई तो मैं क्या करूँ? फीकी चाय में क्या स्वाद आएगा? कहने का मतलब है, जो विरुद्ध है उसमें प्रवृत्ति नहीं करना, यह **इन्द्रियजय** है। कितनी अच्छी परिभाषा है? आपके स्वास्थ्य के लिए ही है। **आपका पूरा जीवन जीने के लिए ये नीतियाँ हैं लेकिन हमारा मन इतना भी control में नहीं रहता है तो फिर उसके लिए कहा जाता है यह इन्द्रियों का जय करने वाला व्यक्ति नहीं है।** ऐसा व्यक्ति किसी भी कार्य की सिद्धि नहीं कर पाता है। वह अपने ही शरीर से बीमार होकर सारा धन, अपने शरीर के लिए ही लगा देगा और पूरे परिवार को परेशान करेगा। सुख उसके जीवन से पलायन कर जाएगा। इसलिए इन्द्रियजय का गृहस्थों के लिए भी बड़ा महत्व है। अच्छे पदार्थों में बिना आसक्ति के सेवन करना और विरुद्ध पदार्थों में प्रवृत्ति करने से बचना, यह इन्द्रियजय अगर पालन किया जाए तो उसके मन में अंकुश बना रहता है और वह अपने कार्य सिद्ध कर लेता है। अन्यथा बहुत से लोग चाहते तो बहुत कुछ थे जीवन में करना लेकिन ऐसे रोगी पड़ गए हैं अब कुछ नहीं कर पाते हैं। वे रोगी क्यों पड़ जाते हैं? कुछ न कुछ कारण रहता है यही या तो **अर्थ के उपार्जन** में ज्यादा समय लगा दिया, ज्यादा **energy** लग गई, समय लग गया उससे रोगी हो गए या खाने-पीने की इन चीजों में इन्द्रिय जय नहीं होने से रोगी हो गए तो उस कारण से अब उनके सपने जो जीवन के थे वे छूट गए। रोगी व्यक्ति कुछ नहीं कर सकता।

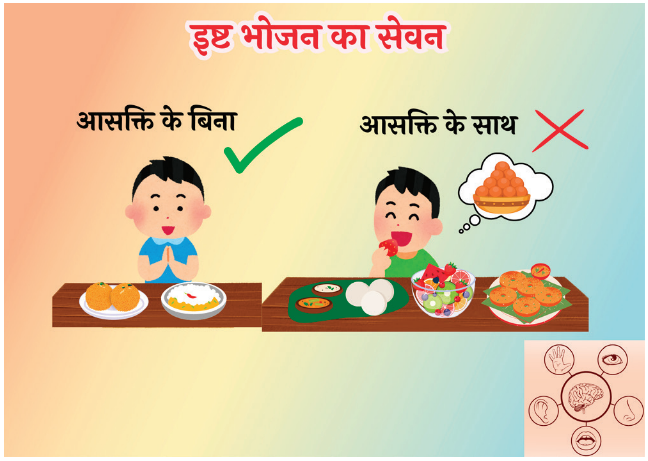

नैतिक शिक्षा की स्कूलों में अनिवार्यता

अर्थशास्त्राध्ययनं वा॥ 9॥

इन्द्रियों को जीतने के लिए एक दूसरा उपाय और बताया जा रहा है। **'वा'** यानि होता है

अथवा। अथवा यह भी एक काम किया जा सकता है- **अर्थशास्त्र का अध्ययन करना।** अर्थ मतलब नीति शास्त्र का अध्ययन करना। आप **नीति शास्त्र पढ़ेंगे तो भी आपकी इन्द्रियों की, मन की चंचलतायें रुक जाएँगी।** इसलिए कह रहा था...सब बच्चों को course में कम से कम यह **नीति शास्त्र** जरूर पढ़ाना चाहिए। **जिस बच्चे को हमने बड़ा किया है, उसे अगर धर्म, अर्थ और काम पुरुषार्थ की परिभाषायें नहीं मालूम होगी तो वह एक सामाजिक जीवन, नैतिक जीवन जिएगा कैसे?** अगर यह शिक्षक समुदाय केवल इतना ही एक विचार कर ले कि जितनी भी जैनों की school हैं, उनमें केवल ये तीन chapter लगवा ले धर्म, अर्थ और काम समुद्देश के और ये सभी जैन स्कूलों में ये chapter एक नैतिक शास्त्र का या **नैतिक शिक्षा** का period रहता है, उसमें ये सूत्र उन बच्चों को सिखाए जाए तो भी यह बहुत बड़ी उपलब्धि हो सकती है। इसमें कितना सा course है? 80 लगभग सूत्र हैं और ये सूत्र उनको divide करके भी कुछ सालों के अनुसार बना करके उन्हें दिए जा सकते हैं। इनकी ये छोटी-छोटी सी व्याख्याओं के साथ में और कोई अच्छे translation के साथ में भी उनके सामने रखे जा सकते हैं। **सब बच्चों को यह अध्ययन जरूर होना चाहिए। उनका मन चंचल है तो वह कैसे रुकेगा उन्हें पता तो हो? अर्थशास्त्र का अध्ययन करें, नीति शास्त्रों का अध्ययन करें... नीतिपरक शास्त्र उनके सामने हो, सूक्तिपरक शास्त्र उनके सामने हो।** हर स्कूलों में यह शास्त्र उन्हें पढ़ाए जाने का प्रावधान होना चाहिए तब तो वह बच्चों के लिए खोली जाने वाली वे स्कूलें कुछ काम की हैं अन्यथा आप उसी CBSE pattern पर पढ़ा रहे है तो उससे क्या लेना-देना है। उससे तो वह वैसे ही दूसरी school में भी पढ़ लेंगे। जैनों की school होने से क्या फायदा मिल गया? जैनों के लिए ये चीजें जानना जरूरी हैं।

नीतिशास्त्रों के अध्यन से इन्द्रियजय

कारणे कार्योपचारात् ॥ 10 ॥

यहाँ कहते हैं कि नीति शास्त्र का अध्ययन इन्द्रियजय के लिए कैसे हो जाएगा? कारण में कार्य का उपचार करने से। क्या कहा? **'कारण में कार्य का उपचार' कार्य क्या था? हमें अपने मन की चंचलता को रोकना। वह चंचलता इन्द्रिय की चंचलता से रुकेगी और इन्द्रियों की चंचलता जो होती है, वह शास्त्रों के अध्ययन से रुक जाती है।** इसलिए कारण को भी कभी-कभी सामने रख कर भी हम कार्य का संपादन कर लेते हैं। कारण में कार्य का वह उपचार कहलाता है।

काम से पराजित होने वाला पूरी तरह से पराजित हो जाता है

योऽनङ्गेनापि जीयते स कथं पुष्टाङ्गानरातीन् जयेत्॥ 11॥

'अरातीन' अर्थात् होता है- **शत्रु।** जो काम से जीता जाएगा, अनंग से जीता जाएगा। वह पुष्ट अंग वाले अरातियों से कैसे जीता जाएगा? अर्थात् यह राजा के लिए भी कहा जा रहा है कि राजा के लिए अनेक अंग होते हैं। **स्वामी, अमात्य, राष्ट्र, दुर्ग, कोष, सेना,** यह राजा के लिए अंग होते हैं। जो राजा **अनंग** से जीत लिया गया तो वह इन सब ये उसके सामने रहने वाली जो सेनायें हैं। उसके ही अंग है लेकिन यही उसके शत्रु बन जाएँगे, यह उनसे भी नहीं जीत पाएगा अपने आप को। वह राजा पराजित हो जाता है, **जो अनंग से पराजित हो जाता है, काम से पराजित हो जाता है।**

कामास्क्त व्यक्ति के लिए कोई चिकित्सा काम नहीं करती

कामासक्तस्य नास्ति चिकित्सितम्॥ 12॥

बस! यह सबसे अच्छा सूत्र है। **कामासक्त व्यक्ति के लिए कोई चिकित्सा है ही नहीं।** ऐसे बच्चे, ऐसे बच्चियाँ जिनका मन बन गया है, हमें तो उसी से ही विवाह करना है। अब वह जैसा भी हो, चाहे वह कितना भी दारूखोर हो, चाहे वह कितना भी व्यसनी हो, चाहे वह कुछ कमा रहा हो, न कमा रहा हो, हमें तो उसी से विवाह करना है। जिनका ऐसा मन आ गया अब उनके लिए कोई चिकित्सा बची नहीं है। हमारे पास लाने से भी कोई फर्क नहीं पड़ेगा। कोई चिकित्सा नहीं कर सकता, doctor नहीं कर सकते, गुरु क्या करेंगे? कामासक्त व्यक्ति के लिए कोई चिकित्सा नहीं है। **वह अगर उसके अन्दर एक बार आसक्ति के भाव आ गए तो उसे समझाना मुश्किल है। उसे किसी भी तरह से उस मार्ग से बचाना मुश्किल है, उसके लिए एक ही उपाय रह जाता है...बस! उसे अपने मन की पूर्ति करने दो।** इतना जरूर हो सकता है, उस **कामासक्ति** का भी एक कोई **degree** हो सकती है, एक कोई उसका मतलब उसकी intensity हो सकती है। अगर वह ज्यादा हो गई है तब तो उसको कोई समझाने से फर्क नहीं पड़ता है। यह भी मैंने देख लिया है। उसकी कोई चिकित्सा नहीं रहती लेकिन जिनके अन्दर वह degree कम होती है, उन्हें थोड़ा सा अगर समझा दिया जाए तो वे समझ भी लेते हैं। बस! यह test किया जाता है कि **इसके अन्दर वह काम की आसक्ति कितनी degree में है।** गाड़ी पटरी पर है कि नहीं? थोड़ा सा विचलन हुआ होगा, समझाया जाएगा, घर का pressure पड़ेगा, थोड़ी सी उसमें मानसिकता होगी समझने की कि भाई! क्यों नैतिकता के विरुद्ध, समाज

विरुद्ध काम किया जाए? क्यों अपयश का भागी बना जाए? क्यों अपने माता-पिता की इज्जतों को दांव पर लगाया जाए? तब वह सोच लेता है, भाई! ऐसा नहीं करेंगे। इसका मतलब है उसके अन्दर वह आसक्ति की degree थोड़ी कम थी तो समझ पाया और जब ज्यादा होती है कोई कुछ भी कहता रहे, उसे कोई फर्क नहीं पड़ता। मेरे पास भी माता-पिता ले आएँगे तो वे ऐसे बैठ जाएँगे बिल्कुल ऐसे टेसू की तरह...न कोई reaction होगा, न कोई response होगा। ऐसे लोगों को हम क्या चिकित्सा दे पाएँगे? क्या सिखा पाएँगे? **आदमी जब कुछ सुनने और सीखने के भाव में हो तो उसको कुछ बताया जाए।** उसका चेहरा और हुलिया देखते ही मैं समझ लेता हूँ। समझ में आ जाता है...जिसको जबरदस्ती कहा जा रहा हो- बेटा! बैठ जा महाराज के पास, बेटा महाराज को नमोस्तु कर ले, कर ली। अब क्या करें? अब बात कौन शुरू करे? माता-पिता करेंगे तो वह उनको टेढ़ी निगाह से देखता है, दुश्मन की तरह तो मैं उनसे कहता हूँ - भाई तुम जाओ, अब बात शुरू कौन करे? अगर उसकी इच्छा होगी बात शुरू करने की तो कुछ बात बनेगी। मैं यह भी देखता हूँ और वह इच्छा से अपनी बात नहीं कर रहा है तो फिर हमें अपनी इच्छा से बात करने से, जबरदस्ती थोपने से मतलब नहीं होता है। Time waste करने का मतलब नहीं होता है। फिर कहना पड़ता है...भाई! ठीक है जाओ, बाद में मिलेंगे। यह स्थितियाँ बताती हैं कि व्यक्ति के अन्दर किस तरह की आसक्तियाँ है तो उसके expression उसी तरह के होते हैं। कामासक्त व्यक्ति के लिए कोई चिकित्सा संसार में है ही नहीं।

कामासक्त व्यक्ति धन, धर्म और शरीर सब नष्ट कर लेता है

न तस्य धनं धर्मः शरीरं वा यस्यास्ति स्त्रीष्वत्यासक्तिः॥13॥

जिसके लिए **स्त्रियों में अति आसक्ति** हो गई तो अब उसे न धन की चिन्ता है, न धर्म की चिन्ता है, न शरीर की चिन्ता है अथवा न अपने परिवार की चिन्ता है, न कुटुंबियों की चिन्ता, कोई चिन्ता नहीं होती उसे। सब जाएँ....आप ही बोलो हम क्यों बोले? कोई चिन्ता नहीं होती उसको, किसी से कोई मतलब नहीं होता। इज्जत-विज्जत सब कोई मतलब नहीं, अपने शरीर की भी चिन्ता नहीं, कैसा मरा जा रहा है? depression में हो रहा है

तो भी कुछ होश नहीं है। तब भी चाहिए तो.. चाहिए तो.. वही चाहिए, बस! ऐसी आसक्ति जिनके अन्दर हो जाती है वे धन भी नष्ट करते हैं, धर्म भी नष्ट करते हैं और शरीर भी नष्ट करते हैं। यह उनके लिए सबसे बड़ी हानियाँ होती है।

धर्म और अर्थ के विरुद्ध काम वृति करने वाले की दुर्दशा ही होती है

विरुद्धकामवृत्तिः समृद्धोऽपि न चिरं नन्दति॥ 14॥

कहते हैं...जो **विरुद्ध काम वृत्ति** करने वाला है, विरुद्ध काम अर्थात् वही **धर्म विरुद्ध, अर्थ विरुद्ध, काम वृत्ति** वाला है, वह कितना ही समृद्ध क्यों न हो लेकिन वह चिरकाल तक समृद्ध नहीं रह सकता है, यह आचार्यों ने आशीर्वाद दे दिया है। क्या कहेंगे? अभिशाप तो नहीं कहेंगे न, सत्य है...वह आशीर्वाद ही तो कहा जाएगा। यह **आचार्यों की वाणी का आशीर्वाद** है कि जो **धर्म और अर्थ के विरुद्ध जो पहले समझाया था, उसकी तरह से काम सेवन करता है तो कितना ही समृद्ध क्यों न हो, कितना ही शरीर से हृष्ट-पुष्ट क्यों न हो, धन से समृद्ध क्यों न हो, वह चिरकाल तक नहीं रह सकता।** बहुत समय तक उसकी

वह समृद्धि नहीं रह सकती। आप देख लेना, हम तो देखते ही रहते हैं। कई लोगों के लिए ऐसी स्थिति देखी...ऐसा accident हो गया कि मतलब अब वह किसी काम का ही नहीं रहा। पत्नी पहले समझाती रहती थी, अब जो है वह किसी काम के लायक नहीं रहा, तब जाकर अब उसके लिए मन में आता है कि हाँ! वास्तव में हमने कोई गलती कर ली। **प्रायश्चित** लेने का तब भाव आता है और अब वह केवल अपनी ही स्त्री के माध्यम से उसकी सेवा हो रही है। इतना ज्यादा उसके लिए विपरीत परिस्थितियाँ शारीरिक भी बन जाती हैं। ऐसे लोग देखे हैं हमने...धन से भी नष्ट लोग देखे हैं और शरीर से भी नष्ट लोग देखे हैं क्योंकि **पाप का फल** तो इसी रूप में मिलेगा न। यह चिरकाल तक वह **'नंदति' अर्थात्** वृद्धि को प्राप्त नहीं होता, यह आचार्यों का स्पष्ट उल्लेख है। इसलिए काम सेवन भी धर्म और अर्थ के विरुद्ध नहीं होना चाहिए।

श्रेष्ठ पुरुषार्थ कौन सा है?

धर्मार्थकामानां युगपत्समवाये पूर्वः पूर्वो गरीयान्॥ 15॥

कहते हैं...धर्म, अर्थ और काम में अगर हम एक साथ इनको मिला कर देखें, एक ही काल में अगर इनका हम समवाय बनाए तो इनमें पहले-पहले के जो पुरुषार्थ है, वह **'गरियान्'** अर्थात् श्रेष्ठ हैं। श्रेष्ठ का मतलब **धर्म पुरुषार्थ सबसे श्रेष्ठ माना जाता है**, इसे सबसे पहले करना चाहिए। **दूसरे number पर अर्थ पुरुषार्थ** आता है, यह उसके बाद करना चाहिए और **तीसरे number पर काम पुरुषार्थ आता है।** यह उसके बाद में करना चाहिए। इस तरह से तीनों पुरुषार्थों के लिए भी समय अलग-अलग रूप में क्रम-क्रम से ही देना चाहिए। व्युत्क्रम से भी समय नहीं लगाना चाहिए। यह भी इससे समझ सकते हैं।

अर्थ पुरुषार्थ की विशेषता

कालासहत्वे पुनरर्थ एव॥ 16॥

समय की अपेक्षा से देखें तो **'काल का असह'** होने पर अर्थात् समय का सहन न होने से, दूसरे जो पुरुषार्थ हैं- **धर्म और काम पुरुषार्थ की अपेक्षा से अर्थ पुरुषार्थ जो है, उसका अनुष्ठान करना ही श्रेष्ठ है।** अगर आपके लिए समय न हो, ज्यादा समय न हो तो कहते हैं- **'न्याय से धन संचय'** करने का अवसर प्राप्त हुआ तो उसके लिए वह समय निकल गया। उस समय पर उसे जो दरिद्रता होगी, उसके कारण से जो उसकी मानसिकता बिगड़ेगी और उसका जो पतन होगा, वह सबसे बड़ा पतन कहलाएगा। ऐसी स्थिति में अर्थ पुरुषार्थ को ध्यान रखना चाहिए। **अर्थ पुरुषार्थ से अगर आपके पास में अर्थ रहेगा तो धर्म में भी मन लगेगा, यह कहने का मतलब है।** सही है कि नहीं? कुछ बोलो तो? **भगवान, गुरु, मन्दिर, धर्म तभी अच्छे लगते हैं जब अपनी व्यवस्थायें सुचारु रूप से धन के माध्यम से चलती रहती हैं।** जब समय

बुरा भी हो तो भी उस समय पर कौन सा पुरुषार्थ ध्यान में रखना? **अर्थ पुरुषार्थ** ध्यान में रखना। धन होगा तो धर्म में मन लगता है इसलिए आप देख लेना जिन लोगों को इस पिछले कोरोना में या GST, नोटबंदी के चक्कर में जिनके business सब निपट गए या जो अपने किसी भी तरीके से बहुत ज्यादा down स्थिति में आ गए तो उनके लिए धर्म करने में भी मन नहीं लगता है। महाराज! सब करते हैं, मन कहीं टिकता ही नहीं है। न भगवान को देखने में टिकता है, न अभिषेक में टिकता है, न पूजा में टिकता है। मन कहीं नहीं टिकता है, कर सब लेते हैं क्योंकि आप कहते हो धर्म करो तो कुछ अच्छा हो जाएगा...इसलिए कर लेते हैं, होता कुछ नहीं है। यह बहुत अच्छी बात है। **धर्म पुरुषार्थ और काम पुरुषार्थ के बीच में धन पुरुषार्थ है, अर्थ पुरुषार्थ है।** यह अपने आप में महत्वपूर्ण है इसलिए धन होना चाहिए। धनिकों के पास या सामान्य गृहस्थों के पास में धन का सद्भाव होना ही जरूरी है। उसी से उसका आत्म सम्मान बना रहता है और उसका blood pressure कभी low नहीं हो पाता है। **'धम्मे सूरा सो कम्मे सूरा'** तो वही धर्म में सूर कहलाता है जो पहले कर्म करने में अर्थात् अच्छे अर्थ पुरुषार्थ करके, जिसने अच्छे कर्म करके, कर्म में सूर रहा है तो धर्म करने में भी वह सूर रहेगा। वह फिर बाद में धर्म में सूर कहलाएगा उसका मतलब है। कुल मिलाकर सम्मान, मान, मानसिकता अच्छी रहना, प्रसन्न चित्त रहना, यह सब किससे सद्भाव से होगा? धन के सद्भाव से होगा। धन है तो धर्म भी है और धन है तो काम सुख भी है इसलिए बीचों बीच में है।

तीनों पुरुषार्थ में धन ही मूल में है

धर्म कामयोरर्थमूलत्वात्॥ 17॥

यहीं पर उसी की मुख्यता से आगे फिर कहते हैं कि **'धर्म कामयो'** अच्छा धर्म और काम इन दोनों पुरुषार्थों में अर्थ ही तो मूल में है अर्थात् **धन ही मूल में है**। देख लो! **आपको धन की इतनी महत्ता आपको जैन आचार्यों के द्वारा इस ग्रन्थ के अलावा कहीं सुनने को नहीं मिलेगी।** अब तो आपको लगता है कि आचार्य अपने अनुकूल बोल रहे हैं। बाकी तो सब ग्रन्थ पढ़ोगे तो भाई यह दान करो, यह त्याग करो, धन छोड़ो, धन कमाने में क्यों अपना जीवन व्यस्त

कर रहे हो? क्यों अपने कीचड़ में पैर डाल रहे हो? फिर धोओगे। यह सब आध्यात्मिक बातें तो खूब सुनाई जाती हैं तो लोग उनसे पस्त हो गए। इसलिए यह भी जानना जरूरी है कि यह भी लिखने वाले आचार्य हैं, जो इस तरह की व्यवहारिक और आपके काम की चीजें बताते हैं और **यह भी आपका भाग्य है कि इस तरह की चीजों का खुलासा करने के लिए मंच से हमारा मन बना कि हम आपको यह सब बताएँ।** नहीं तो यह ग्रन्थ रखे रहते हैं, कभी हमने पढ़ तो लिए लेकिन मतलब क्या है? बस! पढ़ ही लिए। हमारे पढ़ने का भी मतलब क्या होता है? जिनके मतलब की जो चीजें हैं उनको न मिले तो हमारे पढ़ने का क्या मतलब है? अब हमें कौन सा धर्म, अर्थ और काम में से कौन सा पुरुषार्थ करना है? कुछ नहीं करना है। पढ़ें हम और काम की हमारी कोई चीज न हो तो भी कोई मतलब का नहीं। इसलिए यह विचार आया कि भाई जिनके काम की जो चीज है, वह उन्हीं के हाथ में सौंपी जाए। **आप लोगों के हाथ में यह निधि सौंपी गई है, आप इसको संभालने का प्रयास करें।** आगे भी इस तरह की प्रयासों से आप इस निधि को और ज्यादा समझने की कोशिश करें। कैसे इसका हम और पूरा अध्ययन कर सकते हैं और इस तरह के अध्ययन से कौन से ऐसे सूत्र है, जो **सामाजिक चेतना** के लिए, मनुष्यों के लिए, अपने बच्चों के लिए काम में आने वाली शिक्षाओं के लिए यह एक slogan का काम कर सकते हैं? जैसे आज सुबह एक कोई बहन कह रही थी कि कोई ऐसे slogan होने चाहिए...कितने अच्छे slogan हैं इसमें? सब बच्चों के, नए-नए पढ़ने वाले बच्चों के mobile पर slogan होना चाहिए। **'न कामासक्तस्यास्ति चिकित्सितम्'** नहीं समझ में आया? यह slogan होने चाहिए। इस तरह का यह **'इष्टेऽर्थे नासक्तिः विरुद्धे चार्थे प्रवृत्तिः इन्द्रियजयः'** मतलब किस तरह से प्रवृत्ति की जाए? कार्य की सिद्धि **'नाजितेन्द्रियस्य कापि सिद्धिः'** इस तरह की बातें अगर सबको पता पड़ेंगी तो आपके बच्चे और दूसरे भी पढ़ने वाले लोग सभी अपने मन के अन्दर कहीं न कहीं समझदारी लाते हैं। **सभी पढ़े-लिखे बच्चे होते हैं, उन्हें अच्छी चीजें परोस नहीं पाते, यह भी हमारी कमी रहती है।** इन अच्छी चीजों को उन बच्चों तक पहुँचाने की कोशिश करें, जिससे उनका आगामी जीवन अच्छा बने। इस तरह से **काम समुद्देश भी 17 सूत्रों के** द्वारा पूर्ण हो जाता है। आगे की बात है फिर आगे के समय में विचारणीय रहेंगे। बोलिए महावीर भगवान की जय।

प्रणम्यवाणी देवदूत

"गुरु प्रणम्य वाणी पहुँचे घर घर,
सम्यक् ज्ञान प्रभावना हर घर..."

'प्रणम्यवाणी देवदूत' गुरु भक्तों का एक ऐसा परिवार है जो अभीक्ष्ण ज्ञानोपयोगी एवं अर्हं योगी **मुनि श्री 108 प्रणम्यसागर जी महाराज** की वाणी को घर-घर तक पहुँचाने के लिए संकल्पित है। इस हेतु वे विभिन्न उपक्रम चला रहे हैं, जैसे :-

- जिनवाणी, पारस जैसे channels पर गुरु प्रवचनों की telecasting करवाना
- YouTube, Facebook, Instagram जैसे social media platforms पर गुरु वाणी का प्रचार-प्रसार करवाना
- book publishing के माध्यम से मुनि श्री द्वारा रचित साहित्य को जन-जन तक पहुँचाना

यदि आप भी मागध जाति के देवों की तरह गुरु वाणी की प्रभावना करना चाहते हैं, तो **QR code को scan करें** अथवा **+91-8920491008** इस number पर call या Whatsapp के माध्यम से हमसे सम्पर्क करें।

Team Members Involved

Editing team
Dr. Br Rajni jain Indore
Shruti jain Agra
Preeti jain Indore
Rashmi singhai Mandsour
Deepti jain Delhi

Conceptualization team
Bhawna jain Delhi
Vipin jain Thane
Prachi jain Kota

Visualisation team
Kanvi parekh Mumbai
Vibha jain Mumbai
Aarchi shah Surat

Direction
Prateek jain Delhi
Ruchika jain Delhi